

ISBN: 978-93-49618-63-3

# वंचित बालकों की शिक्षा : मुद्दे और मार्ग

Vanchit Balko ki Shikcha : Mudde aur Maarg

वंचित बालकों की शिक्षा : मुद्दे और मार्ग



Published by:

Thanuj International Publishers,  
8/173-B, Vengayapalayam, Kakkaveri, Rasipuram,  
Namakkal, Tamil Nadu,  
India – 637406.

<https://darshanpublishers.com/thanuj.html>

E-mail: [thanujinternationalpublishers@gmail.com](mailto:thanujinternationalpublishers@gmail.com)

Printed by:

Dhazh Computers (Graphic Designer)

No: 442- A, 10th East Cross Street,

Munthirithoppu, Annanagar,

Madurai – 20, Tamil Nadu, India.

E-mail: [narennarayananasamy@gmail.com](mailto:narennarayananasamy@gmail.com)



Copyright @ Thanuj International Publishers, 2026



सम्पादक

प्रो. श्री प्रकाश मिश्र

डॉ. दिनेश कुमार मौर्य

ISBN 978-93-49618-63-3

# वंचित बालकों की शिक्षा : मुद्दे और मार्ग

Vanchit Balke Ki Shikcha : Mudde aur Maarg

## सम्पादक

डॉ. श्री प्रकाश मिश्र

आचार्य

शिक्षक शिक्षा विभाग

महारानी लाल कुँवरि पोस्ट ग्रेजुएट

कॉलेज, बलरामपुर (उ०प्र०)

डॉ. दिनेश कुमार मौर्य

एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष

शिक्षाशास्त्र विभाग

महारानी लाल कुँवरि पोस्ट ग्रेजुएट

कॉलेज, बलरामपुर (उ०प्र०)

प्रकाशक

**Thanuj International Publishers**  
**Tamil Nadu, India**

ISBN: 978-93-49618-63-3

Published in India in May, 2026

This First edition published by Thanuj International Publishers

©2026. Thanuj International Publishers. All rights reserved.

Apart from any use permitted under Indian copyright law, this publication may only be reproduced, stored or transmitted, in any form, or by any means with prior permission in writing of the publishers or in the case of reprographics production in accordance with the terms of licenses issued by the Copyright Licensing Agency.

Copy Right policy is to use papers that are natural, renewable and recyclable products and made from wood grown in sustainable forests. The logging and manufacturing processes are expected to conform to the environmental regulations of the country of origin. Whilst the advice and information in this book are believed to be true and accurate at the date of going to press, neither the Editors nor the publisher can accept any legal responsibility or liability for any errors or omissions that may be made. In particular, (but without limiting the generality of the preceding disclaimer) every effort has been made to check quantity of chemicals; however it is still possible that errors have been missed.

**DOI: [10.22192/.edciwf2026.1](https://doi.org/10.22192/.edciwf2026.1)**

**ISBN: 978-93-49618-63-3**

**Price: Rs: 500.00**

**Published by:**

Thanuj International Publishers,  
8/173-B, Vengayapalayam, Kakkaveri,  
Rasipuram, Namakkal,  
Tamil Nadu, India – 637406.  
<https://darshanpublishers.com/thanuj.html>  
E-mail: [thanujinternationalpublishers@gmail.com](mailto:thanujinternationalpublishers@gmail.com)

**Printed by:**

Dhazh Computers (Graphic Designer)  
No: 442- A, 10th East Cross Street,  
Munthirithoppu, Annanagar,  
Madurai – 20, Tamil Nadu, India.  
E-mail: [narennarayananasamy@gmail.com](mailto:narennarayananasamy@gmail.com)

**ISBN: 978-93-49618-63-3**



## सम्पादक की कलम से

भारत एक कल्याणकारी राज्य है और यह अपने सभी नागरिकों को विशेष रूप से सामाजिक दृष्टि से पिछड़े, सुविधाहीन तथा वंचित बच्चों के कल्याण के लिए वचनबद्ध है। सभी को संविधान प्रदत्त शिक्षा के मौलिक अधिकारों से आच्छादित करते हुए शैक्षिक विषमताएं समाप्त कर शिक्षा के अवसरों को सर्वसुलभ बनाना चाहता है। इसके लिए सरकार के साथ समाज द्वारा भी प्रतिबद्धता के साथ प्रयत्नों की आवश्यकता पड़ती है। इसी कड़ी में शिक्षाशास्त्र विभाग महारानी लाल कुँवरि महाविद्यालय बलरामपुर तथा उत्कर्ष फाउंडेशन गोंडा एवं भारत डायनामिक्स लिमिटेड के संयुक्त तत्वाधान में दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी “वंचित बालकों की शिक्षा : चुनौतियां समस्याएं एवं भावी नियोजन” शीर्षक पर आयोजित किया गया तथा संगोष्ठी में व्यापक विचार विमर्श कर उन बालकों में मनोवैज्ञानिक विश्वास, अपनापन, सुरक्षा, संपर्क, सामूहिक भावना आदि गुणों का विकास करने हेतु सार्थक तत्वों को पहचान की कोशिश हुई। इस संगोष्ठी में विभिन्न विद्वानों, शिक्षकों, शोधकर्ताओं और नीति निर्माताओं ने अपने अनुभव और शोध के आधार पर वंचित बालकों की चुनौतियां और समस्याओं के लिए भावी योजनाएं प्रस्तुत की।

इस संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्रों में मुख्यतः वंचित बच्चों की भारत में शिक्षा, वंचित बालकों की शिक्षा में साहित्य एक उपकरण, समावेशी शिक्षा, शैक्षिक रणनीति, शासकीय योजनाएं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में वंचित बच्चों की शिक्षा की स्थिति को आदि पर चर्चा केंद्रित रही वहीं दूसरी तरफ ग्रामीण एवं शहरी वंचित बालकों पर भी ध्यान केंद्रित किया गया। न्यायिक सक्रियता, वैश्वीकरण, बाल श्रम, विद्यालय छोड़ने की समस्या के साथ बालिकाओं की शिक्षा और उनके लिए सुधारात्मक उपायों पर भी विचार प्रस्तुत किया गया।

आदिवासी, ग्रामीण बस्तियों में शिक्षा विशेष रूप से थारू जनजाति की वंचित बालकों की शिक्षा पर चर्चा करते हुए उनके लिए नवाचरी उपाय भी सुझाए गए बालिका शिक्षा एवं पोषण में असमानता पर विचार करते हुए उनके सशक्तिकरण पर ध्यान आकृष्ट करते हुए डिजिटल शिक्षा की उन तक पहुंच की स्थिति को भी जानने एवं समझने का प्रयास किया गया। इस संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्रों को संकलित कर एक पुस्तक “**वंचित बालकों की शिक्षा : मुद्दे एवं मार्ग**” के रूप में प्रकाशित की जा रही है।

संपादित पुस्तक के प्रकाशन में हम सर्वप्रथम उत्कर्ष फाउंडेशन गोंडा के सचिव डॉ. रामानंद तिवारी तथा भारत डायनामिक्स लिमिटेड के विशेष आभारी है जिनके वित्तीय सहयोग से राष्ट्रीय संगोष्ठी सफलतापूर्वक संपन्न हुई तथा उनके कार्यवृत्त को “वंचित बालकों की शिक्षा : मुद्दे और मार्ग” पुस्तक के रूप में संग्रहीत कर आपके समक्ष प्रस्तुत है। वंचित बालकों के विभिन्न पहलुओं को एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने का एकमात्र उद्देश्य अध्येताओं को पाठ्य सामग्री एक जगह उपलब्ध कराना है।

इस महाविद्यालय प्रबंध समिति के सचिव कर्नल (रिटा.) संजीव कुमार वाष्णीय तथा प्राचार्य प्रो. जे.पी.पांडेय के विशेष आभारी हैं जिनके सहयोग से यह पुस्तक आकर ले सकी है उसी क्रम में सह आयोजन सचिव प्रो. मोहिउद्दीन अंसारी, प्रो.अशोक कुमार, डॉ. सद्गुरु प्रकाश, डॉ. स्वदेश भट्ट, डॉ. ऋषि रंजन पांडेय, डॉ. जितेंद्र कुमार, डॉ. बी.एल. गुप्ता, श्रीमती कृतिका तिवारी, लेफ्टिनेंट (डॉ.) देवेन्द्र कुमार चौहान, श्री नारायण सिंह, डॉ. विशाल गुप्ता, श्रीमती प्रियंका गुप्ता के प्रति भी कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं इसी क्रम में हम प्रो. प्रवीण कुमार, शिक्षक शिक्षा विभाग श्री जय नारायण पी.जी. कॉलेज लखनऊ प्रो. राजीव यादव, अंग्रेजी विभाग, नेताजी सुभाष चंद्र बोस राजकीय महिला महाविद्यालय अलीगंज लखनऊ; प्रो. उपेंद्र कुमार, शिक्षाशास्त्र विभाग, बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय धनबाद, झारखंड तथा डॉ. रागिनी कुमारी, सहायक आचार्य, ऑप्टोमेट्री विभाग मेडिकल कॉलेज सैफई के विशेष रूप से शैक्षिक मार्गदर्शन हेतु आभारी है जिनके सहयोग हमारे लिए प्रेरणा का संबल रहा। इस पुस्तक के प्रकाशन में जिन लेखकों एवं सुधीजनों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमें सहयोग, सुझाव, परामर्श, एवं नैतिक समर्थन दिया हम उन सभी के प्रति श्रद्धा नाथ है अंत में हम इस पुस्तक के मुद्रण के लिए डॉ. टी. शिवाकुमार के प्रति आभार प्रकट करते हैं जिसके बिना अल्प समय में यह कार्य संभव नहीं हो पाता। पुस्तक शिक्षकों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों और शिक्षा के विभिन्न क्षेत्र में रुचि रखने वाले लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होती है तो यह हमारे श्रम का प्रतिफल होगा। पुस्तक के प्रकाशन में संपादक की विशेष सतर्कता के बावजूद मुद्रण एवं वर्तनी संबंधी अन्य कमियां निःसंदेह रह गई होंगी जिसके लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

वैशाख शुक्ल मोहिनी एकादशी

27 अप्रैल 2026

डॉ. श्री प्रकाश मिश्र

डॉ. दिनेश कुमार मौर्य

# वंचित बालकों की शिक्षा : मुद्दे और मार्ग

ISBN: 978-93-49618-63-3

DOI: 10.22192/edciwf2026.1

May , 2026

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या	विषय सूची	पृष्ठ संख्या
1.	Education of underprivileged children in India : Rhetoric and reality <b>Prof.Praveen Kumar</b>	1 --6
2.	Concept of Inclusive Education for Poor and Deprived Children: Efforts and Effective Planning <b>Dr. Upendra Kumar</b>	7--13
3.	Literature as a Tool for Social Awareness: Addressing the Educational Problems of Deprived Children Prof. Rajeev Yadav	14--19
4.	Bridging the Gap: Strategies for Equitable Education of Disadvantaged Children <b>Dr. Ragni Kumari</b>	20--26
5.	Government Schemes for the Education of Poor and Deprived Children, CSR Funding, and the Role of NGOs <b>Dr.Pummy Kumari Das</b>	27--32
6.	Status of Poor and Exceptional Children in NEP 2020: A Policy of Promise and the Persistence of Gaps <b>Dr. Jagriti Vishwakarma</b>	33--39

7. Promoting Awareness on Women's Education,  
Social Status, Educational Initiatives, and Empowerment  
**Dr. Gayatri Kumari** 40--46
8. Education of Deprived and Underprivileged  
Children in Accordance with NEP 2020  
**Dr. Hardeep Kaur** 47--53
9. Rural–Urban Digital Inequality and Its Influence  
on Children's Learning Outcomes  
**Ms. Gunja Barai and Prof. (Dr.) Preeti J. Maiyani** 54--62
10. Holistic development of children with special needs  
through inclusive education under NEP 2020  
**Ms. Sujata Kumari** 63--70
11. Judicial activism and the separation of powers  
under the indian constitution  
**Dr. Alka Nanda** 71--80
12. Government Schemes, CSR Grants, and the role of NGOs  
in the Education of Poor and Underprivileged Children  
**Dr. Ila Tiwari** 81--88
13. ग्रामीण बनाम शहरी मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों की शिक्षा:  
एक तुलनात्मक अध्ययन  
**प्रो० श्री प्रकाश मिश्र एवं डॉ० रामानंद तिवारी** 89--97
14. वंचित छात्रों के लिए शिक्षा तक पहुंच वैश्वीकरण के संदर्भ में :  
रणनीतियों और नीतियों का पुनरावलोकन  
**विकास कुमार जैसवार एवं डॉ० दिनेश कुमार मौर्य** 98--104
15. बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या: कारण, रोकथाम के  
प्रयास एवं नीतिगत सुझाव  
**डॉ. विशाल गुप्ता** 105-- 112

16. बालिका शिक्षा की वर्तमान स्थिति एवं जीवन मे  
समायोजन के संदर्भ मे सुधारात्मक प्रयास 113--118  
प्रो० विजय कुमार राय एवं यशवन्त कुमार
17. थारू बस्तियों में शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं का विश्लेषण :  
बलरामपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में 119--126  
पुनीत कुमार शुक्ल एवं प्रो० किरन सिंह
18. बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या कारण रोकथाम के प्रयास  
एवं नीतिगत सुझाव 127--131  
डा० नूतन कुमारी
19. ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षाबाधाएँ :  
नवाचारी प्रयास एवं भावी रणनीति 132--138  
डॉ० अजय कुमार सिंह
20. डिजिटल विभाजन और वंचित बच्चों की शिक्षा: वर्तमान संकट  
एवं समाधान 139--146  
डॉ. देश दीपक वर्मा
21. समाज को शिक्षित करने मे बालिका शिक्षा की भूमिका : बालिका  
शिक्षा एवं महिला सशक्तिकरण के विशेष संदर्भ में 147--153  
देवकी नन्दन वर्मा एवं प्रो० आसिफ कमाल
22. बालिका शिक्षा एवं पोषण में असमानता: वर्तमान स्थिति  
एवं सशक्तिकरण के सुझाव 154--158  
डॉ. शकुंतला सिंह
23. बालिका शिक्षा में असमानता, वर्तमान स्थिति, सुधारात्मक  
प्रयास एवं सशक्तिकरण के सुझाव 159--165  
रूबी जायसवाल
24. भारतीय संदर्भ मे उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे स्त्रियों की शिक्षा से वंचन के  
आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं मनोवैज्ञानिक कारकों का विश्लेषण 166--170  
हीरालाल एवं प्रो० शिव शरण शुक्ल

## **Education of Underprivileged Children in India: Rhetoric and Reality**

**Prof. Perveen Kumar**

Dept. of Teacher Education (B.Ed.)  
Shri Jai Narain Misra P.G. College, Lucknow  
Mobile No. + 91 9415482441  
Email: perveen255@gmail.com

### **Abstract:**

During post-independence period, access to education at all levels has increased remarkably in India. However, the quality of education still remains a serious concern in majority of educational institutions. Excepting a small fraction of institutions, majority of them are muddled in mediocrity. Prevalence of mediocre institutions has serious implications for the underprivileged sections of the society as their access to good quality institutions is severely restricted mainly due to socio-economic constraints. The present paper examines this phenomenon. It contends that the health of mass education in the country is in a dilapidated state. Even the provisions of RTE Act could be of little help in providing quality education to the children. The paper argues that clustering of schools, colleges and higher education institutions in and around metropolitan cities and urban areas on the one hand and uneven distribution of financial resources on the other hand clearly reflect the elitist bias. Barring aside a few dedicated interventions, a systematic attempt has largely been underway to deny meaningful education to the underprivileged sections of the society.

**Keywords:** Quality education, underprivileged children, institutions, socio-economic constraints, social and occupational mobility.

### **I. Education in the Contemporary Development Discourse: An Introduction**

Education is widely regarded as one of the most important catalysts for social change and inculcation of values. During the post-world war II period, it has also emerged as an important tool for accelerating economic growth and bringing people out of poverty. Empirical literature across the disciplines, particularly in the social sciences, has emphasised that the development of a nation greatly depends on the improvement of the quality of its population. Education enhances knowledge and skills of the people and therefore plays an important role in the improvement of the quality of population (Denison 1962; Schultz 1962, 1963; Becker 1964; Weisbrod 1966).

In India, there has been a profound understanding about the role of education in the social and economic life of people as well as in the development of India as a nation. This understanding helped education to get an important place not only in the Constitution of India but in the wider academic and policy discourse. It was envisaged that the state shall behave like a guardian and *inter alia* go an extra mile to ensure quality education for the people including free and compulsory education to all the children between six and fourteen years of age. Due to the prevalence of these mediocre or rather poor institutions, students belonging to the underprivileged groups, also termed as socio-economically disadvantaged groups (SEDGs) in the NEP 2020, have suffered the most.

The present paper intends to examine a very genuine question: why does education of the underprivileged children remain a low priority despite the century's long tradition of scholarship and post-colonial democratic commitment to a just state? It focuses on the role of education in the social and economic empowerment of underprivileged, i.e., whether and to what extent, education in India has been able to uplift the children of socio-economically disadvantaged sections of the society. It contends that since India is a vast country and has one of the largest systems of education in the world, including a large number of good quality educational institutions; mass education has appeared in the public discourse more as rhetoric rather than as a serious concern. The paper further argues that there could be some socio-economic constraints in providing good quality education to all, but what is most disconcerting is the apathetic attitude of the policy makers and even the mainstream society towards improving the quality of mass education whether at the school level or at the college and university level.

## **II. Identification of Underprivileged Children**

Identifying underprivileged children is a very difficult task in a country like India primarily because of the diverse, stratified and heterogeneous nature of the society. Traditionally, Indian society is characterised by caste based hierarchy, where an individual's rank and place in the society was, to a very large extent, decided according to his or her birth rather than according to his or her accomplishments. Ownership of resources and concentration of people belonging to certain caste in homogenous occupations also corroborate this fact. After independence, in order to deal with the age old retrograde hierarchies, various constitutional and legal measures were put

in place intending that opportunities and rewards would be based on one's abilities and achievements rather than social origin. The purpose of all the efforts was to empower the people of the country and make India a modern, developed and inclusive society. However, despite numerous sincere socio-political measures and economic reforms progress towards achieving these goals could hardly be called satisfactory. It is true that during the last seven and half decades or so the shackles of caste system have declined significantly, particularly in the public life, it is also equally true that it could not be annihilated and still maintains its prominence and sanctity in socio-cultural spheres.

The contemporary economic policies and emergence of the new economic order have created another; very different kinds of hierarchies, leading to further marginalization of the socio-economically disadvantaged classes who were already segregated, poor and marginalized (e.g., see Nayyar 2017). So, it seems very difficult to identify the extent of being underprivileged based on any single criterion. Rather, a number of social, economic and cultural factors need to be taken into account while considering the identification of underprivileged sections of the society and their children. Broadly underprivileged children therefore, may belong to any of the following sections of society:

1. Children belonging to the landless communities primarily reside in rural areas
2. Children belonging to the castes ranked low in the social hierarchy
3. Children having any disability (divyangjan)
4. Children of daily wage earners, and those engaged in low paid jobs such as domestic care, maid servants, especially in cities where there is hardly any job security
5. Children of self-employed people such as hawkers, fruit sellers especially in far-flung areas or cities
6. Children of migrant workers engaged in seasonal work such as brick kiln workers
7. Children of gig workers who are engaged in the service sector, especially in cities at very low wages without any kind of security
8. The street children such as children with unknown parentage, abandoned, vagabond or loitering, rag pickers, children of pavement dwellers, and those survive on begging and petty offences
9. Children of sex workers, jail inmates, etc.

### **III. Expansion of Education and the Underprivileged: Some Overriding Concerns**

During post-independence period education, amongst many other priorities of the state, was identified as one of the core areas of concern. India inherited a very small system of education from the British and a constricted state exchequer. However, despite severe financial constraints, the state began the expansion of education focusing on the establishment of schools, colleges, universities and institutions of technical and professional education. It strengthened their capabilities to produce quality manpower required to effectively undertake the projects of nation building. The state also received cooperation of some devout philanthropists in this endeavour. As a result, education sector has registered phenomenal growth. Enrolment grew rapidly in the schools as well as in the variety of educational programmes offered by different institutions of higher education.

However, despite this rapid institutional expansion, representation of people from the underprivileged sections in higher, technical and professional education is far from satisfactory. There are still a lot of challenges in the education of underprivileged children. Whereas it is true that due to the implementation of various schemes such as Sarva Shiksha Abhiyan and the Right to Education Act (2009) India has achieved near universal enrolment in primary education and dropout rate has gone down substantially in primary as well as upper classes, the quality of education in majority of schools still remains a serious cause of concern. Performance of students regarding the learning of language, basic reading skills and numerical ability remains pathetic in a majority of schools (e.g., see ASER; Goyal and Pandey 2012; Woodrow Wilson School 2013; Bhatta 2014; Malik 2015; Krishna 2018). Poor quality of education at the elementary level, especially in government schools, has serious implications for the chances of social and occupational mobility for underprivileged children as majority of them have access to these schools only. Their access to good quality schools, which are mostly in the private sector, is severely limited due to various socio-economic constraints. This situation is further aggravated because of the apathetic attitude of the so-called private elite schools for they do not sometimes even admit the required number of students belonging to the underprivileged sections as envisaged by the RTE act. Ironically, the governments too in many cases, feels handicapped in making such kinds of errant schools and institutions to fulfil this legal obligation. Poor learning at the elementary stage have serious implications for access to higher education and subsequent learning outcomes, and therefore restrict their chances in the labour market, where minimum standards of knowledge and skills are hardly adequate; rather competitiveness is the buzzword.

It is now more than three decades when India adopted the policy of economic liberalization. Education could not remain itself aloof from this paradigm shift. Though there were several private institutions in the field of education before liberalization, this new policy shift brought significant changes in our approach towards education. Education, especially higher education, which was once considered a 'merit good' and an obligation of the state in a democratic country like India, turned into a business venture, a commercial enterprise (e.g., see Kapur and Mehta 2004). This rapid commercialization of education has severely impacted educational opportunities for students belonging to the underprivileged sections. Though the state agencies have come up with several scholarships and fee-reimbursement schemes to support the needy students, their coverage does not seem to be enthusiastic. Further, majority of private institutions cater to the demands of urban middle and upper middle classes. They possess good quality infrastructure and the quality of education in these institutions is considered to be very good. These schools and institutions claim to equip the students with knowledge and competitive skills assuring them a successful career in their chosen area. But the cost of getting education in these institutions is very high and cannot be borne by the underprivileged.

#### **IV. Conclusion**

The preceding analysis shows that education, despite being identified as one of the most important factors of economic growth and social mobility, has largely remained elusive to the underprivileged sections of the society in India. Whereas it is true that education has suffered from the elitist bias throughout the history, not enough could be done to overcome this approach even after independence. Clustering of educational institutions in metropolitan cities and urban areas on the one hand and uneven distribution of financial resources amongst different levels and sectors of education on the other hand are obvious examples of the elitist approach. India, as a nation state, could not provide the underprivileged children access to competitive and meaningful education. Our education system has grown through small interjections where negotiations and compromises were made from time to time rather than having facilitated the access of all people to quality education irrespective of region, religion or socio-economic status. Inadequate funding could be one of the most important reasons for the poor provision of education for the underprivileged. Despite gradual increase during the entire post-independence period, public expenditure on education remains well below the six percent mark: a promise which was reiterated time and again since it was first recommended by the Education Commission (1964-66). In terms of international comparison too education in India is inadequately financed. The

consistently inadequate public funding of education and increasing dependence on private sector would further imperil the access of underprivileged children to quality education.

## References

- ASER (various years), *Annual Status of Education Report*, published by Pratham, accessible at: <https://asercentre.org/>
- Becker, Gary S. (1964), *Human Capital: A Theoretical and Empirical Analysis with Special Reference to Education*, University of Chicago Press, Chicago.
- Bhatty, Kiran (2014), “Review of Elementary Education Policy in India: Has it upheld the Constitutional Objective of Equality?”, *Economic & Political Weekly*, 49(43 & 44): 100-107.
- Denison, E. F. (1962), *The Source of Economic Growth in the United States and the Alternatives before Us*, New York: Committee for Economic Development.
- Goyal, Sangeeta and Priyanka Pandey (2012), “How do Government and Private Schools Differ?”, *Economic & Political Weekly*, 47(22): 67-76.
- Kapoor, Devesh and Pratap Bhanu Mehta (2004), “Indian Higher Education Reform: From Half-Baked Socialism to Half-Baked Capitalism”, CID Working Paper No. 118 (September).
- Krishna, Anirudha (2018), “The State of Education in Rural India”, *livemint*, January 26, available at <https://www.livemint.com/Opinion/1km3nIazOPD0JgDwqKjz8J/The-state-of-education-in-rural-India.html> last accessed on March 12, 2019.
- Nayyar, Deepak (2017), “Economic Liberalization in India: Then and Now”, *Economic & Political Weekly*, 52(2): 41-48.
- Schultz, T.W. (1962), “Reflections on Investment in Man”, *The Journal of Political Economy*, 70(5): 1-8.
- Schultz, T.W. (1963), *The Economic Value of Education*, New York: Columbia University Press.
- Weisbrod, Burton A. (1966), “Investing in Human Capital”, *The Journal of Human Resources*, 1(1): 5-21



## **Concept of Inclusive Education for Poor and Deprived Children: Efforts and Effective Planning**

**Dr. Upendra Kumar**

Head, Department of Education  
R.S.P College Jharia, Dhanbad, Jharkhand.  
Email: upendrakumar2004@gmail.com

### **Introduction**

Education is universally recognised as a fundamental human right and a powerful instrument for social transformation. It plays a decisive role in breaking the cycle of poverty, reducing inequality, and empowering marginalised communities. However, despite global commitments to “Education for All,” millions of children across the world—especially poor and deprived children—continue to remain excluded from quality education. Poverty, social discrimination, disability, gender bias, migration, and lack of access to resources often push children to the margins of the education system. Inclusive education has emerged as a progressive and humane approach to address these challenges. It emphasises the need to educate all children—regardless of their socio-economic background, physical or intellectual abilities, caste, gender, language, or ethnicity—within a common learning environment. For poor and deprived children, inclusive education is not merely an educational reform; it is a social justice movement aimed at equity, dignity, and equal opportunity. The realisation of inclusive education requires well-planned efforts at multiple levels, including policy formulation, curriculum design, teacher preparation, infrastructure development, and community involvement.

1. **Equality and Equity** – Every child has equal worth and the right to education, while equity ensures additional support for disadvantaged learners.
2. **Participation and Belongingness** – All children should feel accepted, respected, and valued in the school community.
3. **Diversity as Strength** – Differences among learners is seen as opportunities rather than problems.
4. **Child-Centred Approach** – Teaching strategies are adapted to meet individual learning needs.
5. **Flexibility in Curriculum and Assessment** – Curriculum and evaluation methods should accommodate varied abilities and backgrounds. Inclusive education goes beyond physical access

to schools; it focuses on meaningful learning experiences that help children develop academically, socially, and emotionally. Understanding Poor and Deprived Children Poor and deprived children are those who face systemic disadvantages due to socio-economic, cultural, or structural factors. These children often belong to marginalised sections of society and experience multiple forms of exclusion.

### **Categories of Poor and Deprived Children**

- Children from economically weaker sections (EWS)
  - Children from the Scheduled Castes (SC), the Scheduled Tribes (ST), and minority communities
  - Street children and homeless children
  - Child labourers
  - Children of migrant workers
  - Orphaned and abandoned children
  - Children affected by conflict, disasters, or displacement
  - Children with disabilities from low-income families
  - Girls from patriarchal and conservative backgrounds
- Challenges Faced by Poor and Deprived Children

1. **Economic Constraints** – Inability to afford school fees, uniforms, books, and transportation.
  2. **Malnutrition and Poor Health** – Affect concentration, attendance, and learning outcomes.
  3. **Lack of Parental Support** – Parents may be illiterate or too occupied with survival needs.
  4. **Social Discrimination** – Caste, gender, language, and cultural bias often lead to exclusion.
  5. **Child Labour and Domestic Responsibilities** – Children are forced to work to support the family income.
  6. **Inadequate School Infrastructure** – Poor schools lack basic facilities and trained teachers.
  7. **Language Barriers** – First-generation learners struggle with the medium of instruction. These challenges make it essential to adopt inclusive education practices that address not only academic needs but also social and emotional well-being.
- Importance of Inclusive Education for Poor and

Deprived Children Inclusive education is particularly significant for poor and deprived children because it addresses both access and quality in education. Key Benefits

1. Social Justice and Equality Inclusive education promotes fairness by ensuring that disadvantaged children receive opportunities equal to those of their privileged peers.
2. Reduction of Dropout Rates Supportive learning environments reduce dropout and absenteeism among marginalised children.
3. Holistic Development Children develop confidence, self-esteem, social skills, and a sense of belonging.
4. Breaking the Cycle of Poverty Education enhances employability and empowers individuals to improve their socioeconomic status.
5. Promotion of Social Cohesion Inclusive classrooms encourages empathy, cooperation, and mutual respect among students from diverse backgrounds. Global Efforts toward Inclusive Education Several international initiatives have emphasised inclusive education as a global priority.

1. **Universal Declaration of Human Rights (1948)** Article 26 recognises education as a basic human right for all.

2. **Salamanca Statement (1994)** It called for inclusive schools that accommodate all children regardless of their physical, intellectual, social, emotional, linguistic, or other conditions.

3. **Education for All (EFA)** Launched by UNESCO to ensure access to quality basic education for every child.

4. **Sustainable Development Goal 4 (SDG-4)** Aims to “ensure inclusive and equitable quality education and promote lifelong learning opportunities for all” by 2030.

5. **UN Convention on the Rights of the Child (UNCRC)** Emphasises non-discrimination and equal educational opportunities for all children. Efforts Toward Inclusive Education in India India, with its vast socio-economic diversity, has undertaken several initiatives to promote inclusive education for poor and deprived children. Constitutional Provisions

- **Article 21A** – Right to Education (RTE) Act, 2009 guarantees free and compulsory education for children aged 6–14 years.

• **Articles 15 and 46** – Promote social justice and protect the interests of weaker sections. Major Government Initiatives

1. Right to Education (RTE) Act, 2009 Mandates inclusion of children from economically weaker sections in private schools under the 25% reservation.
2. Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) focused on universalising elementary education with special emphasis on disadvantaged groups.
3. Samagra Shiksha Abhiyan An integrated scheme covering school education from pre-primary to senior secondary level.
4. Mid-Day Meal Scheme Encourages school attendance and addresses malnutrition among poor children.
5. Beti Bachao Beti Padhao Promotes the education of the girl child.
6. Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya (KGBV) Residential schools for girls from disadvantaged communities.

1. 7. Inclusive Education for Disabled at Secondary Stage (IEDSS) Supports children with disabilities from marginalised backgrounds. Role of Schools in Inclusive Education Schools are the primary institutions responsible for implementing inclusive education.

#### Inclusive School Practices

- Flexible curriculum design
- Remedial teaching and bridge courses
- Use of multilingual teaching strategies
- Child-friendly and safe learning environments
- Counselling and emotional support services
- Collaboration with parents and community Teachers play a critical role by adopting empathetic attitudes, differentiated instruction, and continuous assessment methods.

**Role of Teachers in Inclusive Education** - Teachers are the backbone of inclusive education. Their beliefs, skills, and commitment significantly influence the success of inclusion. Teacher Responsibilities

1. Understanding individual differences among learners
2. Adopting inclusive teaching strategies
3. Encouraging the participation of all students
4. Identifying learning difficulties early
5. Creating a supportive classroom environment Teacher training programs must include components on inclusive pedagogy, child psychology, and social sensitivity. Effective Planning for Inclusive Education Inclusive education requires systematic and well-coordinated planning at multiple levels.

1. Policy-Level Planning

- a. Clear inclusion policies
- b. Adequate funding for marginalised groups
- c. Monitoring and evaluation mechanisms

2. School-Level Planning

- a. Needs assessment of students
- b. Infrastructure development
- c. Resource allocation
- d. Inclusive school leadership

3. Curriculum and Pedagogy Planning

- a. Context-based curriculum
- b. Life-skills education
- c. Activity-based and experiential learning

4. Community Participation

- a. Awareness programs for parents
- b. Collaboration with NGOs
- c. Local support networks

5. Use of Technology

- a. Digital learning tools
  - b. Online remedial support
  - c. Open educational resources
- Challenges in Implementing Inclusive Education despite significant efforts, several challenges persist

1. **Lack of Trained Teachers** Lack of trained teachers refers to the shortage of educators who are properly prepared to handle diverse classrooms, especially those including poor, deprived, or special needs children. Without professional training in inclusive teaching methods, teachers may struggle to identify learning difficulties, adapt lessons, or provide emotional and academic support to disadvantaged students.

2. **Overcrowded Classrooms** Overcrowded classrooms mean having too many students in one class beyond the ideal teacherstudent ratio. This makes it difficult for teachers to give individual attention, manage the class effectively, and address the specific needs of poor and deprived children, which can negatively affect learning outcomes.

3. **Insufficient Funding** Insufficient funding refers to the lack of adequate financial resources for schools and educational programs. Without proper funding, schools cannot provide essential facilities such as infrastructure, teaching materials, technology, scholarships, or trained staff, which are necessary for inclusive education.

4. **Rigid Curriculum Structures** Rigid curriculum structures mean having a fixed and inflexible syllabus that does not consider the diverse backgrounds, learning speeds, and abilities of students. Such a curriculum may not allow modifications, remedial support, or alternative teaching methods needed for disadvantaged learners.

5. **Social Prejudice and Stigma** Social prejudice and stigma refer to negative attitudes, discrimination, and biased beliefs against certain groups based on caste, poverty, gender, disability, or community background. These attitudes create barriers to equal participation and can lower the confidence and motivation of deprived children.

6. **Weak Monitoring Systems** Weak monitoring systems refer to the lack of proper supervision, evaluation, and accountability in educational programs. When policies and schemes are not regularly reviewed or assessed, problems such as dropout rates, misuse of funds and poor teaching quality may go unnoticed. Addressing these challenges requires political will, social awareness, and sustained investment.

## Reference List

1. Ainscow, M. (2005). Developing inclusive education systems: What are the levers for change? *Journal of Educational Change*, 6(2), 109–124. <https://doi.org/10.1007/s10833-005-1298-4>
2. Ainscow, M., Booth, T., & Dyson, A. (2006). *Improving schools, developing inclusion*. Routledge.
3. Government of India. (2020). *National Education Policy 2020*. Ministry of Education.
4. Govinda, R., & Bandyopadhyay, M. (2010). Social exclusion and school participation in India: Expanding access with equity. *Prospects*, 40(3), 343–356.
5. Jha, M. M. (2002). *Barriers to access and success: Is inclusive education an answer?* National Institute of Educational Planning and Administration.
6. Kumar, K. (2005). *Political agenda of education: A study of colonialist and nationalist ideas*. Sage Publications.
7. Miles, S., & Singal, N. (2010). The education for all and inclusive education debate: Conflict, contradiction or opportunity? *International Journal of Inclusive Education*, 14(1), 1–15.
8. Tilak, J. B. G. (2007). *Inclusive education in India: A review of policy and practice*. National University of Educational Planning and Administration.
9. UNESCO. (2017). *A guide for ensuring inclusion and equity in education*. UNESCO.
10. UNICEF. (2013). *The state of the world's children: Children with disabilities*. UNICEF.
11. World Bank. (2018). *World development report 2018: Learning to realize education's promise*. World Bank.



## Literature as a Tool for Social Awareness: Addressing the Educational Problems of Deprived Children

**Prof. Rajeev Yadav,**

Department of English, Netaji Subhash Chandra Bose  
Government Girls PG College, Aliganj, Lucknow,  
Email: ry951@gmail.com

### **Abstract-**

Literature has historically functioned as a powerful medium for reflecting social realities and raising awareness about social injustice. Among the many social issues represented in literary narratives, the educational deprivation of marginalized children remains one of the most poignant themes. This research paper explores how literary texts serve as instruments of social awareness by portraying the struggles of deprived children and exposing the structural inequalities that restrict access to education. Through an analytical study of selected works of English literature—particularly the novels of Charles Dickens—this paper examines how literary narratives reveal the relationship between poverty, social exclusion, and educational inequality. Drawing upon theoretical perspectives such as Marxism and social realism, the study argues that literature not only represents the suffering of marginalized children but also challenges dominant social structures that perpetuate inequality. The emotional power of literary storytelling encourages readers to empathize with disadvantaged characters and reflect critically on societal institutions. Ultimately, this paper demonstrates that literature plays a crucial role in shaping social consciousness and advocating educational reform. By illuminating the struggles of deprived children, literary works continue to promote awareness about the necessity of equitable education in modern society.

**Keywords:** Literature, Social Awareness, Educational Inequality, Deprived Children, Social Realism, Charles Dickens

Literature has long served as both a reflection and critique of society, offering insight into the lived experiences of individuals who exist on the margins of social and economic structures. Among the various social concerns explored in literary narratives, the issue of educational deprivation among disadvantaged children occupies a particularly significant place. Education has often been regarded as a pathway to personal growth, social mobility, and intellectual

empowerment; however, throughout history, access to education has remained deeply unequal. Social hierarchies based on class, poverty, and economic exploitation has frequently denied marginalized children the opportunity to pursue formal education. Literary writers, particularly those associated with social realism, have played a crucial role in exposing these inequalities. Through powerful storytelling and emotionally resonant characters, literature illuminates the harsh realities faced by deprived children and invites readers to reconsider the ethical responsibilities of society toward the most vulnerable members of the community.

The connection between literature and social awareness lies in literature's ability to transform social realities into compelling narratives that engage the reader's imagination and moral consciousness. Unlike purely factual descriptions of social conditions, literary texts evoke empathy by presenting human experiences in a vivid and emotionally accessible form. Stories about impoverished or orphaned children encourage readers to confront social injustice on a personal level. In this sense, literature functions not only as a form of artistic expression but also as a means of social critique. Critics have frequently emphasized that literary narratives can expose structural inequalities by portraying the everyday struggles of marginalized individuals. Through such portrayals, literature challenges the complacency of society and highlights the urgent need for reform (Eagleton).

One of the most significant literary traditions concerned with social awareness is social realism, a mode of writing that attempts to represent everyday life and social conditions with accuracy and critical insight. Social realist writers often focus on the lives of working-class individuals and reveal how economic structures influence personal experiences. From a Marxist perspective, literature can be understood as a cultural product shaped by material conditions and class relations. Marxist critics argue that literary texts frequently reveal the contradictions and inequalities embedded within capitalist society (Tyson). The depiction of deprived children in literature therefore reflects not only individual suffering but also broader social systems that perpetuate inequality and restrict access to education.

Few authors illustrate this relationship between literature and social awareness as effectively as Charles Dickens. Writing during the Victorian era, Dickens witnessed the rapid industrialization of England and the profound social transformations that accompanied it. Industrial capitalism created vast economic disparities, and children from poor families were often forced into labour

rather than education. Dickens's novels consistently portray the suffering of marginalized children and expose the institutional failures that allowed such suffering to persist. His works combine social realism with emotional storytelling, creating narratives that both entertain and provoke moral reflection.

One of the most striking examples of educational deprivation in Dickens's fiction appears in *Oliver Twist*. The novel begins with the birth of an orphaned child in a parish workhouse, immediately situating Oliver within a system that treats poverty as a moral failing rather than a social problem. The workhouse system depicted in the novel symbolizes a society that neglects the welfare and education of poor children. Instead of receiving care and instruction, the children in the workhouse endure hunger, humiliation, and neglect. Oliver's famous request for more food—"Please, sir, I want some more"—captures the desperation of children trapped in an institution designed to suppress rather than nurture human potential (Dickens, *Oliver Twist*). Through this scene, Dickens not only evokes sympathy for Oliver but also criticizes the social policies that deny basic dignity and education to the poor.

The narrative trajectory of *Oliver Twist* further reveals how educational deprivation can lead to moral and social vulnerability. When Oliver escapes from the workhouse, he encounters Fagin and a group of juvenile pickpockets who exploit homeless children for criminal activities. The absence of education and social protection makes children susceptible to exploitation and manipulation. Dickens portrays Oliver as inherently innocent; emphasizing that criminal behaviour among children is often a consequence of social circumstances rather than innate moral corruption. By presenting this argument through a sympathetic protagonist, Dickens challenges the Victorian belief that poverty was the result of individual moral failure.

Another powerful exploration of childhood deprivation appears in *David Copperfield*, a novel often regarded as Dickens's most autobiographical work. The narrative follows the life of David from childhood to adulthood, highlighting the emotional and intellectual challenges he faces. After the death of his mother, David is subjected to the cruelty of his stepfather and eventually forced to work in a factory. This episode reflects Dickens's own childhood experience of working in a blacking warehouse, an experience that left a profound psychological impact on him. The factory environment described in the novel symbolizes the exploitation of child labour during the industrial age. Instead of attending school and developing intellectually, David must perform

repetitive manual labour in degrading conditions. The narrative voice of the adult David recounting these experiences emphasizes the long-term consequences of childhood deprivation and the importance of education in shaping identity and self-worth.

Dickens's critique of educational systems becomes even more explicit in *Hard Times*. The novel presents a satirical portrayal of utilitarian philosophy through the character of Thomas Gradgrind, an educator who believes that education should be based solely on factual knowledge and rational calculation. Gradgrind's rigid approach to education suppresses imagination and emotional development, reducing children to mechanical learners. Through the contrast between Gradgrind's children and the compassionate character of Sissy Jupe, Dickens suggests that education must nurture empathy, creativity, and moral understanding. Sissy, who comes from a marginalized background, possesses emotional intelligence that challenges the limitations of Gradgrind's educational philosophy. The novel therefore critiques not only the absence of education among the poor but also the inadequacy of educational systems that fail to address the holistic needs of children.

The depiction of deprived childhood in Dickens's works reflects the broader tradition of social realist literature that seeks to expose injustice and advocate reform. By presenting the suffering of children in vivid and emotionally compelling narratives, Dickens draws attention to the moral responsibilities of society. Critics have argued that Dickens's popularity among Victorian readers contributed to increased public awareness about child labour, poor laws, and educational inequality (Slater). His novels encouraged readers to question existing social structures and to consider the possibility of reform.

Literature's power to generate social awareness lies in its ability to humanize abstract social problems. Statistical data about poverty or educational inequality may inform readers intellectually, but literary narratives engage readers emotionally. When readers encounter characters like *Oliver Twist* or *David Copperfield*, they experience the world through the eyes of individuals whose lives are shaped by deprivation and injustice. This emotional engagement fosters empathy and moral reflection. As literary theorists have observed, empathy is a crucial component of ethical awareness because it allows individuals to recognize the humanity of others and to respond to their suffering with compassion (Nussbaum).

The influence of literature on social consciousness extends beyond the Victorian era. Modern and contemporary literary works continue to explore themes of educational inequality and childhood marginalization. Writers across different cultures have portrayed the struggles of children who face poverty, discrimination, and limited educational opportunities. These narratives remind readers that the issues highlighted by Dickens remain relevant in the contemporary world. Despite advances in educational policy, many children today continue to encounter barriers such as economic hardship, inadequate schools, and social exclusion.

Literature therefore remains an essential cultural force in the ongoing struggle for social justice. By presenting stories that reveal the lived experiences of marginalized individuals, literary texts encourage readers to question social norms and to imagine more equitable alternatives. The imaginative power of literature allows readers to envision a society in which education is accessible to all children regardless of social background. In this way, literature contributes not only to cultural reflection but also to social transformation.

The relationship between literature and social reform is complex and indirect, yet its impact should not be underestimated. While literary works cannot by themselves eliminate social inequality, they play a vital role in shaping public attitudes and moral values. The emotional resonance of storytelling can inspire readers to support policies and initiatives that promote educational equality. In this sense, literature acts as a catalyst for social awareness, encouraging individuals to recognize injustice and to participate in the process of change.

Ultimately, the representation of deprived children in literature highlights a fundamental ethical question: what responsibilities does society bear toward its most vulnerable members? By confronting readers with the realities of poverty and educational deprivation, literary narratives challenge complacency and indifference. They remind us that the denial of education to any child represents not only a personal tragedy but also a collective moral failure.

In conclusion, literature serves as a powerful instrument for raising awareness about the educational problems faced by deprived children. Through emotionally compelling narratives and socially conscious storytelling, literary works reveal the structural inequalities that prevent many children from accessing education. The novels of Charles Dickens demonstrate how literature can expose injustice while simultaneously encouraging empathy and moral reflection. By engaging

readers both intellectually and emotionally, literature fosters a deeper understanding of social inequality and inspires a commitment to educational reform. As societies continue to confront issues of poverty and exclusion, literary narratives will remain indispensable in reminding humanity of its responsibility to ensure that every child has the opportunity to learn, grow, and participate fully in society.

### Works Cited

- Dickens, Charles. *Oliver Twist*. Oxford University Press, 2008.
- Dickens, Charles. *David Copperfield*. Penguin Classics, 2002.
- Dickens, Charles. *Hard Times*. Penguin Classics, 2003.
- Eagleton, Terry. *Marxism and Literary Criticism*. Routledge, 2002..
- Kanwal, Roop. “Children’s Literature as a Tool for Social Change.” *The Scientific Temper*, vol. 15, 2024.
- Ismoilovna, Urazmetova Nilufar. “Social Issues in the Novels of Charles Dickens.” *Modern Education and Development*, 2026.

### Reference List

1. Apple, M. W. (2004). *Ideology and curriculum* (3rd ed.). Routledge.
2. Freire, P. (1970). *Pedagogy of the oppressed*. Continuum.
3. Giroux, H. A. (1988). *Teachers as intellectuals: Toward a critical pedagogy of learning*. Bergin & Garvey.
4. Government of India. (2020). *National education policy 2020*. Ministry of Education.
5. hooks, b. (1994). *Teaching to transgress: Education as the practice of freedom*. Routledge.
6. Kumar, K. (2005). *Political agenda of education: A study of colonialist and nationalist ideas*. Sage Publications.
7. National Council of Educational Research and Training. (2005). *National curriculum framework 2005*. NCERT.
8. Nussbaum, M. C. (2010). *Not for profit: Why democracy needs the humanities*. Princeton University Press.
9. Saxena, S. (2012). *Education of the marginalized in India: Issues and challenges*. Rawat Publications.
10. Sen, A. (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.
11. UNESCO. (2015). *Education for all 2000–2015: Achievements and challenges*. UNESCO Publishing.
12. UNICEF. (2019). *The state of the world’s children 2019: Children, food and nutrition*. UNICEF.



## **Bridging the Gap: Strategies for Equitable Education of Disadvantaged Children**

**Dr. Ragni Kumari,**

Ph.D.- Public Health

Assistant Professor & Convenor, Department of Optometry  
Uttar Pradesh University of Medical Sciences

### **Abstract**

Children from disadvantaged backgrounds face multiple, intersecting barriers that limit their access to quality education. These barriers include economic deprivation, social exclusion, gender bias, disability, geographic isolation, inadequate health and nutrition, and systemic policy implementation gaps. In India, despite legal guarantees such as the **Right of Children to Free and Compulsory Education Act (RTE, 2009)** and policy frameworks like the **National Education Policy 2020**, disparities persist, particularly among marginalized groups. Globally, evidence highlights that low-income, rural, and socially excluded children face similar challenges, underscoring the universality of educational disadvantage.

This narrative review synthesizes research, policy documents, and case studies to examine the factors contributing to educational disadvantage and critically evaluate existing strategies. Effective interventions include legal and policy enforcement, teacher capacity building, community engagement, financial and material support, health and nutrition programs, inclusive pedagogy, and technology-based learning. Despite these measures, persistent challenges—such as resource shortages, socio-cultural resistance, learning gaps, limited teacher quality, and the digital divide—continue to hinder equitable educational outcomes.

The review emphasizes the importance of multi-dimensional, evidence-based, and context-sensitive strategies that address intersecting disadvantages simultaneously. Recommendations include strengthening policy implementation and monitoring, enhancing teacher training, promoting community participation, providing targeted financial and health support, and leveraging technology to improve access and learning.

**Keywords:** Disadvantaged children, inclusive education, educational equity, policy review, India, global strategies.

## 1. Introduction

Education is universally recognized as a fundamental human right and a key driver of social and economic development (UNESCO, 2015). Beyond literacy and numeracy, education equips children with cognitive, social, and emotional skills that enable them to participate effectively in society and contribute to economic growth (World Bank, 2018). It also plays an important role in reducing inequality, promoting social mobility, and breaking cycles of intergenerational poverty. Despite global commitments to universal education, many children around the world continue to face barriers that prevent them from accessing or completing quality education. These barriers are often rooted in overlapping disadvantages such as poverty, gender inequality, social marginalization, disability, and geographic isolation (UNICEF, 2019). As a result, disadvantaged children frequently experience limited educational opportunities, lower learning outcomes, and higher dropout rates.

In India, several major policy initiatives have been implemented to expand access to education and address educational inequalities. The **Right of Children to Free and Compulsory Education Act (RTE), 2009** guarantees free elementary education for children aged 6–14 years. The Act mandates free admission, prohibits discrimination, and establishes standards for school infrastructure, teacher qualifications, and student–teacher ratios. It also promotes child-friendly learning environments and prohibits corporal punishment. The RTE Act has significantly increased school enrollment; however, disparities in learning outcomes and educational quality remain.

The **National Education Policy (NEP) 2020** further aims to transform the Indian education system by emphasizing foundational literacy and numeracy, early childhood care and education, inclusive learning environments, and the integration of technology in education (MHRD, 2020). The policy highlights the importance of addressing the needs of socially and economically disadvantaged groups, including girls, children with disabilities, and children from rural or marginalized communities.

Despite these initiatives, evidence from national surveys such as the **Annual Status of Education Report (ASER)** indicates that although enrollment levels have improved, many children still struggle with basic reading and arithmetic skills (ASER, 2021). Educational disadvantage is therefore not only about access but also about learning quality and retention.

This narrative review synthesizes existing literature on the education of disadvantaged children, focusing on the factors contributing to educational disadvantage, policy responses, effective strategies, persistent challenges, and future recommendations. Understanding these issues is essential for developing inclusive educational systems that ensure equitable learning opportunities for all children.

## **2. Defining Disadvantaged Children**

The term **disadvantaged children** refers to children who experience barriers that limit their ability to access quality education. These barriers may arise from economic, social, cultural, geographic, health-related, or personal factors. Identifying these dimensions is important for designing targeted educational interventions.

### **Economic Disadvantage**

Economic hardship remains one of the most significant barriers to education. Children from low-income households often struggle to afford school-related expenses such as uniforms, books, and transportation. In many cases, children are required to contribute to household income through labor or domestic work, which reduces their school attendance. Research shows that children from the poorest households are significantly less likely to attend school compared with those from wealthier families (UNICEF, 2014).

### **Social and Cultural Disadvantage**

Social inequalities related to caste, ethnicity, religion, and gender influence educational participation. In India, marginalized groups such as Scheduled Castes (SC), Scheduled Tribes (ST), and Other Backward Classes (OBC) often experience discrimination and limited educational opportunities. Gender inequality also remains a major barrier, with girls frequently facing early marriage, domestic responsibilities, and social restrictions that limit their schooling (Kingdon, 2007).

### **Geographic and Infrastructural Disadvantage**

Children living in rural or remote areas often face challenges in accessing schools due to long travel distances, poor transportation, and inadequate school infrastructure. Rural schools frequently experience shortages of qualified teachers, learning materials, and basic facilities such as sanitation and electricity (Shah & Shah, 2017).

### **Children with Disabilities**

Children with physical, sensory, or cognitive disabilities are particularly vulnerable to educational exclusion. Many schools lack accessible infrastructure, assistive technologies, and teachers trained in inclusive education (UNICEF, 2016).

### **Familial and Household Factors**

Family characteristics also influence educational participation. Parental education, income level, and attitudes toward schooling affect children's academic engagement. Children whose parents have limited education often lack academic support at home (Desai et al., 2017).

### **Health and Nutrition**

Health and nutrition are important determinants of learning outcomes. Malnutrition and chronic illnesses can impair cognitive development, reduce concentration, and increase absenteeism (Grantham-McGregor et al., 2007).

## **3. Causes of Educational Disadvantage**

Educational disadvantage arises from a complex interaction of economic, social, institutional, and health-related factors.

### **Economic Barriers**

Financial constraints limit families' ability to support education. Even when tuition is free, indirect costs such as transportation and school materials can discourage enrollment (Baye & Johnston, 2014).

### **Geographic Barriers**

Remote areas often lack adequate school infrastructure and trained teachers, resulting in lower educational quality (Shah & Shah, 2017).

### **Social and Cultural Factors**

Gender norms, caste discrimination, and social exclusion can discourage school participation. Girls in some communities face early marriage or domestic responsibilities that interrupt education (Kingdon, 2007).

### **Family Factors**

Family instability, migration, and low parental education can disrupt children's schooling and contribute to dropout (Desai et al., 2017).

### **Health and Nutrition**

Poor health and malnutrition can negatively affect cognitive development and academic performance (Grantham-McGregor et al., 2007).

### **Institutional Barriers**

Weak policy implementation, teacher shortages, and rigid curricula contribute to persistent educational disparities (Kingdon & Teal, 2010).

## **4. Policies and Programmatic Frameworks**

### **Right to Education Act (2009)**

The RTE Act guarantees free and compulsory education for children aged 6–14 years. It mandates minimum standards for school infrastructure, teacher qualifications, and student–teacher ratios.

### **National Education Policy (2020)**

NEP 2020 emphasizes foundational literacy, inclusive education, and technology integration to improve learning outcomes and reduce educational inequality.

### **Government Programs**

Several government schemes aim to support disadvantaged children:

- **Mid-Day Meal Scheme** – improves attendance and nutrition.
- **Scholarships and stipends** – support economically disadvantaged students.
- **Free textbooks and uniforms** – reduce financial barriers.

### **Teacher Training**

Professional development programs can equip teachers with skills in inclusive pedagogy and remedial instruction.

### **Health and Nutrition Programs**

School-based health interventions, including nutrition programs and health screenings, improve both attendance and learning outcomes.

### **Technology Integration**

Digital learning platforms and blended learning models can help reach children in remote or underserved areas.

### **Integrated Approaches**

The most effective programs combine multiple strategies, including financial support, community engagement, and teacher training.

## **6. Persistent Challenges**

Despite progress, several challenges remain:

- Limited school infrastructure and resources
- Weak policy implementation and monitoring
- Socio-cultural barriers such as gender discrimination
- Learning deficits among students
- Health and nutrition challenges
- Digital divide in access to technology
- Intersectional disadvantages affecting the most marginalized children

## **7. Future Directions and Recommendations**

To improve education for disadvantaged children, future interventions should focus on:

- Strengthening policy implementation and monitoring
- Enhancing teacher training and professional development
- Increasing community participation and parental engagement

## 8. Conclusion

Education is essential for individual empowerment and societal development. However, disadvantaged children continue to face barriers such as poverty, social discrimination, geographic isolation, disability, and health challenges that limit their educational opportunities.

Policies such as the **Right to Education Act (2009)** and **National Education Policy (2020)**, along with government programs and NGO initiatives, have expanded access to education. Nevertheless, persistent challenges related to infrastructure, policy implementation, socio-cultural barriers, and learning quality continue to hinder educational equity.

## Reference

1. Ainscow, M. (2005). Developing inclusive education systems: What are the levers for change? *Journal of Educational Change*, 6(2), 109–124. <https://doi.org/10.1007/s10833-005-1298-4>
2. Bourdieu, P. (1990). *The logic of practice*. Stanford University Press.
3. Coleman, J. S. (1966). *Equality of educational opportunity*. U.S. Government Printing Office.
4. Freire, P. (1970). *Pedagogy of the oppressed*. Continuum.
5. Govinda, R. (2011). *Who goes to school? Exploring exclusion in Indian education*. Oxford University Press.
6. Nussbaum, M. C. (2011). *Creating capabilities: The human development approach*. Harvard University Press.
7. OECD. (2012). *Equity and quality in education: Supporting disadvantaged students and schools*. OECD Publishing. <https://doi.org/10.1787/9789264130852-en>
8. Sen, A. (1999). *Development as freedom*. Oxford University Press.
9. Singal, N. (2010). Doing disability research in a Southern context: Challenges and possibilities. *Disability & Society*, 25(4), 415–426. <https://doi.org/10.1080/09687591003755807>.
10. UNICEF. (2019). *Every child learns: UNICEF education strategy 2019–2030*. UNICEF.
11. World Bank. (2018). *World development report 2018: Learning to realize education's promise*. World Bank. <https://doi.org/10.1596/978-1-4648-1096-1>



## **Government Schemes for the Education of Poor and Deprived Children, CSR Funding, and the Role of NGOs**

**Dr.Pummy Kumari Das**

Assistant Professor, Department of Commerce,  
Assistant Professor, Chas College Chas, Bokaro.

E-mail [pummykumari.939@gmail.com](mailto:pummykumari.939@gmail.com)

### **Introduction**

Education is widely recognised as a fundamental human right and a powerful instrument for social transformation. For poor and deprived children—those affected by poverty, social exclusion, gender discrimination, disability, migration, or conflict—education becomes not only a pathway to knowledge but also a means of breaking the cycle of intergenerational disadvantage. In a diverse and populous country like India Insuring equitable access to quality education remains both a constitutional commitment and a developmental necessity. Alongside public initiatives, Corporate Social Responsibility (CSR) funding and Non-Governmental Organisations (NGOs) play a crucial complementary role in expanding educational opportunities for disadvantaged children. This chapter explores government schemes for the education of poor and deprived children, examines the growing importance of CSR funding in education, and analyses the role of NGOs in implementing inclusive and sustainable educational interventions.

1. Conceptual Framework: Education for the Poor and Deprived Poor and deprived children include those belonging to economically weaker sections, Scheduled Castes (SC), Scheduled Tribes (ST), minority communities, migrant families, children with disabilities, urban slum dwellers, and children in remote rural areas. These children often face multiple barriers:

- a) Financial constraints
  - b) Lack of parental literacy
  - c) Gender bias
  - d) Social discrimination
  - e) Inadequate infrastructure
  - f) Limited access to digital resources
- Inclusive education aims to remove these barriers and ensure that every child receives quality education regardless of background.

2. Government Schemes for Education of Poor and Deprived Children The Government of India has introduced several landmark policies and schemes to promote universal and inclusive education.

**2.1 Right to Education Act (RTE), 2009** The Right of children to Free and Compulsory Education Act(RTE) is a historic legislation that guarantees free and compulsory education to all children aged 6–14 years. Key provisions include:

- a) Free education in government schools
- b) 25% reservation for economically weaker sections in private schools
- c) No detention policy (initially)
- d) Norms for pupil-teacher ratio
- e) Infrastructure standards for schools RTE has significantly increased enrolment rates, especially among marginalised groups. However, quality and retention remain areas requiring further strengthening.

**2.2 Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) Launched in 2001**, aimed at Sarva Shiksha Abhiyan universalising elementary education. Objectives:

- a) Opening new schools in underserved areas
- b) Recruitment of teachers • Construction of classrooms and toilets
- c) Special focus on girls and disadvantaged children SSA laid the foundation for mass enrolment and infrastructure development across rural and tribal regions.

**2.3 Samagra Shiksha Abhiyan In 2018**, the government integrated SSA, RMSA, and Teacher Education into Samagra Shiksha. Key features:

- d) Holistic school education from pre-primary to Class XII
- e) Focus on learning outcomes
- f) Support for inclusive education for children with disabilities
- g) Digital classrooms and ICT initiatives
- h) Teacher training reforms Samagra Shiksha emphasises equity and quality, especially for underprivileged communities.

**2.4 Mid-Day Meal Scheme** The provides free nutritious meals to students in government and aided schools. Impact:Mid-Day Meal Scheme

- a) Increased school attendance
- b) Reduced dropout rates
- c) Improved nutritional levels
- d) Encouraged enrolment of girls for poor families, this scheme reduces the financial burden and ensures at least one nutritious meal per day for children.

**2.5 Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya (KGBV)** Kasturba Gandhi Balika focuses on providing residential schooling facilities to girls belonging to SC, ST, OBC, and minority communities in educationally backward blocks. This scheme has significantly improved access to education for girls from marginalised communities.

**2.6 Beti Bachao Beti Padhao** Beti Bachao Beti Padhao promotes girls' survival, protection, and education. It addresses gender discrimination and encourages families to educate daughters. **2.7 National Education Policy (NEP), 2020** The National Education Policy emphasis.

- a) Foundational literacy and numeracy
- b) Early childhood care and education
- c) Inclusive and equitable education
- d) Gender Inclusion Fund
- e) Special Education Zones NEP 2020 aims to bridge learning gaps and provide holistic education for disadvantaged groups.

### 3. CSR Funding in Education

**3.1 Concept of CSR Corporate Social Responsibility (CSR)** refers to the ethical responsibility of businesses to contribute to societal development. Under the Company's act 2013, eligible companies in India must spend at least 2% of their average net profits on CSR activities. Corporate Social Responsibility is a powerful tool for social change. In India, CSR has become a structured and legally supported mechanism for promoting education, healthcare, environmental protection, and rural development. When properly implemented, CSR bridges the gap between corporate growth and social welfare, contributing to inclusive and sustainable national development. Education is one of the priority areas under CSR.

**3.2 Areas of CSR Support in Education** CSR initiatives often focus on:

- a) School infrastructure development
- b) Digital classrooms and smart boards
- c) Scholarships for poor students
- d) Skill development programs
- e) Teacher training
- f) STEM education for girls Many companies partner with NGOs and local governments to implement these programs effectively

- 2) 3.3 Impact of CSR on Education CSR funding has:
  - a) Improved school infrastructure
  - b) Promoted digital literacy
  - c) Enhanced vocational training
  - d) Reduced dropout rates in certain regions CSR acts as a bridge where government resources are limited, especially in remote and tribal areas.
- 3) 3.4 Challenges in CSR Implementation
  - a) Lack of monitoring
  - b) Urban-centric funding
  - c) Short-term project focus
  - d) Limited community participation For maximum impact, CSR initiatives must align with government policies and grassroots needs.
- 4) 4. Role of NGOs in Education
- 5) 4.1 Nature and Importance of NGOs Non-Governmental Organisations (NGOs) work independently to address social issues. In education, NGOs focus on outreach, innovation, and community engagement. Some prominent NGOs in India include:
  - a) Pratham
  - b) Teach For India
  - c) Smile Foundation
  - d) CRY

#### 4.2 Key Contributions of NGOs

1. Bridging Learning Gaps NGOs conduct remedial classes and learning camps.
2. Community Mobilisation They raise awareness among parents about the importance of education.
3. Innovative Teaching Methods Activity-based and child-entered approaches.
4. Focus on Vulnerable Groups Street children, child labourers, migrants, and differently-abled children.
5. Advocacy and Policy Influence NGOs often provide research inputs to policymakers.

4.3 NGO-Government Partnerships Many government schemes collaborate with NGOs for implementation. NGOs bring flexibility, while government ensures scale and funding. Public-Private Partnerships (PPP) in education combine government support, CSR funding, and NGO expertise.

5. Integrated Approach: Government, CSR, and NGOs The education of poor and deprived children cannot rely solely on one sector. A collaborative model ensures sustainable impact:

- a) Government: Policy, funding, infrastructure
  - b) CSR: Financial support, innovation, technology
  - c) NGOs: Grassroots implementation, community trust
- When these three stakeholders work together, the reach and quality of education improve significantly.

6. Challenges in Educating Poor and Deprived Children Despite various schemes, several issues persist:

- a) Digital divide
  - b) Teacher shortages
  - c) Poor monitoring systems
  - d) Social discrimination
  - e) Child labor and early marriage
- addressing these challenges requires sustained commitment and systemic reforms.

## 7. Recommendations

1. Strengthen monitoring of government schemes.
  2. Increase CSR funding in rural and tribal areas.
  3. Promote long-term partnerships between NGOs and schools.
  4. Invest in teacher training for inclusive classrooms.
  5. Expand digital access for marginalised students.
  6. Ensure community participation in school management.
- Conclusion Education is the cornerstone of national development and social justice. For poor and deprived children, it represents hope, dignity, and empowerment. In India, government schemes such as RTE, Samagra Shiksha, Mid-Day Meal Scheme, and KGBV have significantly expanded access to education. CSR funding has strengthened infrastructure and introduced innovation, while NGOs

have worked tirelessly at the grassroots level to bridge gaps and reach the most marginalised. However, access alone is not enough. By investing collectively in inclusive education, society not only uplifts the deprived but also builds a stronger, more equitable and progressive nation.

## Reference List

1. Azim Premji Foundation. (2020). *Annual Report 2019–20*. Azim Premji Foundation. <https://www.azimpremjifoundation.org>
2. CRY – Child Rights and You. (2021). *Annual Report 2020–21*. CRY. <https://www.cry.org>
3. Ministry of Education, Government of India. (2020). *Samagra Shiksha: An integrated scheme for school education*. Government of India. <https://www.education.gov.in>
4. Ministry of Law and Justice, Government of India. (2009). *The Right of Children to Free and Compulsory Education Act, 2009*. Government of India. <https://legislative.gov.in>
5. Mitra, D. (2018). *CSR and education in India: A study of corporate contributions*. *Journal of Social Responsibility*, 14(2), 245–260.
6. NITI Aayog. (2021). *SDG India Index and Dashboard 2020–21*. Government of India. <https://www.niti.gov.in>
7. Pratham Education Foundation. (2022). *Annual Status of Education Report (ASER) 2022*. Pratham. <https://www.asercentre.org>
8. Tilak, J. B. G. (2018). *Education and development in India: Critical issues in public policy and development*. Springer.
9. UNESCO. (2020). *Global Education Monitoring Report 2020: Inclusion and education – All means all*. UNESCO Publishing. <https://en.unesco.org/gem-report>
10. UNICEF. (2019). *Education for every child in India*. UNICEF India. <https://www.unicef.org/india>
11. World Bank. (2018). *World Development Report 2018: Learning to realize education's promise*. World Bank Publications. <https://www.worldbank.org>



## Status of Poor and Exceptional Children in NEP 2020: A Policy of Promise and the Persistence of Gaps

**Dr. Jagriti Vishwakarma**

Assistant Professor, Education,  
D.N.P.G. College, Gorakhpur, U.P.

### Abstract

**The National Education Policy (NEP) 2020** represents a watershed moment in the history of Indian education, aiming to overhaul a system decades old. Central to its vision is a commitment to equity and inclusion, explicitly recognizing that India's educational goals cannot be achieved without uplifting its most marginalized children. This paper examines the status of two such critical groups—poor children (encompassing those from various socio-economically disadvantaged backgrounds) and exceptional children (those with disabilities and special needs)—within the framework of NEP 2020. It delves into the policy's foundational shifts, its targeted provisions for **Socio-Economically Disadvantaged Groups (SEDGs)** and **Children with Special Needs (CwSN)**, and the early signs of its implementation. The analysis reveals that while NEP 2020 provides a robust and progressive conceptual framework that moves beyond mere access to quality and retention, a significant gap persists between its transformative rhetoric and on-the-ground reality. Challenges related to inadequate funding, inconsistent data, infrastructural deficits, and the slow pace of critical reforms threaten to leave the very children the policy seeks to empower still waiting on the margins.

**Keywords-** NEP 2020, inclusion, SEDGs, CwSN, equity, exceptional children, children with disabilities, economically disadvantaged, educational access.

**Introduction --** A Paradigm Shift towards Inclusivity For decades, Indian education policy grappled with the twin challenges of access and equity. The **National Policy on Education (NPE) 1986** and the subsequent Right to Education (RTE) Act, 2009, succeeded in significantly improving enrolment at the elementary level. However, the system continued to be plagued by high dropout rates, poor learning outcomes, and a persistent inability to retain and meaningfully educate children from the poorest households and those with disabilities.

The National Education Policy 2020 was conceived to address these very shortcomings. It is not merely an update but a fundamental restructuring of the educational landscape, extending the 10+2 structure to a more holistic 5+3+3+4 design, encompassing ages 3 to 18. At its philosophical core lies the principle that "education is the single greatest tool for achieving social

justice and equality". This paper argues that NEP 2020's primary contribution to the discourse on poor and exceptional children is its **intersectional and universal approach to inclusion**. By broadening the definition of disadvantage and weaving inclusive strategies throughout the policy document, it moves the needle from simply getting children into schools to ensuring they thrive within them. However, the translation of this ambitious vision into tangible outcomes for the most vulnerable remains a work in progress, hindered by deep-seated systemic and financial challenges.

### **Conceptualizing Disadvantage: The Umbrella of SEDGs**

One of NEP 2020's most significant conceptual advancements is the formalization of the term **Socio-Economically Disadvantaged Groups (SEDGs)**. This umbrella category broadens the traditional focus on caste and tribe to include a wider spectrum of marginalization, reflecting a more nuanced understanding of the barriers to education. The policy identifies five primary sub-categories of SEDGs:

- 1. Gender Identities:** (particularly female and transgender individuals)
- 2. Socio-Cultural Identities:** (Scheduled Castes, Scheduled Tribes, Other Backward Classes, and linguistic & religious minorities)
- 3. Geographical Identities:** (students from remote villages, small towns, and aspirational districts)
- 4. Socio-Economic Conditions:** (migrant communities, low-income households, children in vulnerable situations like orphans, child beggars, and the urban poor)
- 5. Disabilities:** (covering the 21 disabilities listed in the Rights of Persons with Disabilities Act, 2016)

### **Provisions for Poor and Socio-Economically Disadvantaged Children**

NEP 2020's strategy for children from poor and disadvantaged backgrounds is multi-pronged, focusing on early intervention, removing economic barriers, and creating flexible learning pathways.

#### **1. Foundational Strengthening: The Great Equalizer**

The policy posits that the strongest weapon against inequality is a strong foundation. It recognizes that over 85% of brain development occurs before the age of six, making **Early Childhood Care and Education (ECCE)** a critical leveller. The inclusion of three years of preschool (Balvatika) for all children aged 3-6 is a landmark step. For a child from a poor household, where access to

cognitive stimulation and learning materials may be limited, a quality ECCE programme can bridge the developmental gap before formal schooling begins.

Complementing this is the **National Mission on Foundational Literacy and Numeracy (FLN)**, operationalized through the NIPUN Bharat mission. The goal is to ensure that every child in Grade 3 achieves fundamental reading, writing, and arithmetic skills by 2026-27. This is particularly vital for first-generation learners from poor families who lack academic support at home. As per recent data, the NIPUN Bharat mission has reached over 4.2 crore students, and foundational learning outcomes are showing signs of improvement, with ASER 2024 reporting the highest foundational reading levels in government schools since 2005.

## **2. Targeted Interventions for Access and Retention**

Beyond foundational skills, the policy outlines specific mechanisms to tackle dropout rates, which remain alarmingly high for SEDGs at the secondary level. **Key strategies include:**

**-Gender Inclusion Fund:** To build the nation's capacity to provide equitable quality education to all girls and transgender students, addressing specific barriers like safety and lack of conveyances.

**-Special Education Zones (SEZs):** Declaring regions with high populations of educationally-disadvantaged SEDGs as SEZs, where all schemes will be implemented with concerted effort to truly transform their educational landscape.

**-Expansion of Hostels and Residential Schools:** Strengthening and expanding facilities like Kasturba Gandhi Balika Vidyalayas (KGBVs) for girls and Netaji Subhash Avasiya Vidyalayas for SEDG students. Currently, 5,269 KGBVs house over 7.58 lakh girls, and 1,137 residential schools support 1.15 lakh SEDG students.

**-Tracking and Monitoring:** Using technology to track the enrolment, attendance, and learning progress of children from disadvantaged groups to prevent dropouts.

**-Flexible Learning Options:** For children who are unable to attend formal schools, the policy expands the role of open and distance learning (NIOS) and alternative education centres, providing multiple entry and exit points .

## **3. Addressing Language and Pedagogy**

For many poor children, especially those from tribal communities, the language of instruction is a significant barrier. NEP 2020's strong emphasis on instruction in the **home language/mother tongue** until at least Grade 5 (preferably till Grade 8) is a powerful inclusive measure. It ensures that a child is not disadvantaged simply because their home language differs from the state's

official language. This is backed by the development of multilingual primers and resources on the DIKSHA platform, now available in 133 languages.

### **Provisions for Exceptional Children (Children with Special Needs)**

NEP 2020 is unequivocal in its commitment to "inclusion and equal participation of children with disabilities across all stages of school education". It fully endorses the provisions of the **Rights of Persons with Disabilities (RPwD) Act, 2016**, and its approach is far more comprehensive than any previous policy.

#### **1. Mainstreaming and Universal Access**

The policy moves away from a segregationist model towards a "whole school approach" to inclusion. This means mainstream schools must be equipped to welcome and educate CwSN. Key provisions include:

- **Barrier-Free Access:** Mandating the provision of ramps, handrails, and adapted toilets in all schools.
- **Assistive Technologies and Learning Materials:** Ensuring CwSN have access to assistive devices, adapted learning materials (like Braille books and audiobooks), and technology-enabled aids. The Samagra Shiksha scheme provides financial support for aids, appliances, and allowances for scribes and transportation.
- **Resource Centres:** Establishing dedicated resource centres in school complexes to provide specialized support for children with high-support needs.

#### **2. Early Identification and Assessment**

Early intervention is critical for CwSN. The policy promotes the use of screening tools like the **PRASHAST App** (Pre-assessment Holistic Screening Tool), developed by NCERT, to enable early identification of disabilities at the school level. With over 4.81 lakh users registered on the app, this represents a significant step towards timely support and certification.

#### **3. Teacher Training and Sensitization**

A policy is only as good as its implementers. NEP 2020 calls for the capacity building of teachers in inclusive methods. The NISHTHA teacher training programme now integrates modules on inclusive education, and over 12 lakh teachers have been trained on FLN and related inclusive practices. Furthermore, the policy advocates for engaging special educators at the school complex level to support both teachers and students.

#### **4. Curriculum and Examination Reforms**

The policy promotes flexibility to ensure CwSN can demonstrate their potential. The CBSE board, for instance, provides exemptions and concessions such as scribe facilities, compensatory time, and flexible subject choices for candidates with disabilities. The introduction of Indian Sign Language (ISL) as a formal subject and the development of over 1,000 ISL videos and talking books are monumental steps for deaf learners, for which India was awarded the UNESCO King Sejong Literacy Prize in 2021.

### **Implementation: The Gap Between Vision and Reality**

Despite these comprehensive provisions, the five-year journey of NEP 2020 has revealed significant implementation gaps that disproportionately affect the poorest and most exceptional children. The policy's noble intentions often stumble on the ground due to a lack of resources, data, and political will.

#### **1. The Financial Hurdle: The Unmet 6% GDP Target**

The most oft-cited and critical challenge is the persistent underfunding of education. NEP 2020 itself recommended increasing public investment in education to 6% of GDP at the earliest. However, years after its launch, the actual expenditure has stagnated at around 2.9% of GDP. This financial constraint directly impacts the implementation of inclusive strategies.

#### **2. The Invisibility of the Most Vulnerable**

You cannot help those you cannot see. The policy's success for specific groups like migrant children and De-notified Tribes (DNTs) is crippled by a lack of basic data. The policy explicitly recognizes migrant families, yet officials admit there are **no official figures estimating how many children of seasonal migrants exist nationwide**. Without being counted in datasets like UDISE+, they remain invisible to the system, unable to benefit from targeted schemes. Similarly, nomadic and de-notified communities, burdened by historical stigma, are largely unmapped in NEP frameworks. A 2024 review found that only 0.8% of DNT youth ever attain higher education, and in one community, 65.6% of children had never enrolled in school.

#### **3. Infrastructure and Resource Deficits**

While policies mandate barrier-free access, ground realities tell a different story. Basic infrastructure for accessibility, such as ramps, handrails, and adapted toilets, remains inconsistent across the country. Furthermore, the shortage of trained special educators is acute. Although the policy envisions a robust support system, the availability of qualified professionals to cater to the diverse needs of CwSN in regular schools is woefully inadequate. Data from 2023-24 shows that

only 57.2% of schools have functional computers and only 53.9% have internet access, highlighting the digital divide that leaves many poor and rural students behind.

#### **4. The Plight of the Unseen and Unheard**

Certain groups highlighted by the policy remain on the fringes. For children of seasonal migrants, the lack of provisions for inter-state credit transfer, portable entitlements (like mid-day meals), and mobile classroom models means they remain "on hold, not in school". For LGBTQ+ youth, while the policy's Gender Inclusion Fund and identification of transgender students are first steps, broader protections remain absent.

#### **5. Coordination and Capacity Issues**

Education is a concurrent subject, and the successful implementation of NEP 2020 depends on strong centre-state coordination. However, there have been instances of political resistance and varying levels of commitment from state governments. The lack of robust data systems for monitoring and evaluation, combined with institutional resistance to pedagogical reforms, hampers the effective tracking of progress for SEDGs.

#### **Conclusion and the Way Forward**

NEP 2020 is undeniably a visionary document that reimagines Indian education through an inclusive lens. Its recognition of the diverse and intersectional nature of disadvantage, its focus on foundational learning as a great equalizer, and its comprehensive framework for children with special needs are laudable and path-breaking. For poor and exceptional children, the policy offers a promise of not just access, but of quality, dignity, and the opportunity to thrive.

To transform vision into reality for India's most marginalized children, a multi-pronged effort is imperative:

**1. Prioritize and Increase Funding:** The central and state governments must demonstrate political will by progressively increasing education expenditure to reach the 6% of GDP goal, with a specific, ring-fenced allocation for SEDG-focused interventions and inclusive infrastructure.

**2. Make the Invisible, Visible:** There is an urgent need to improve data collection mechanisms, particularly for highly marginalized groups like migrant children and DNTs. Including disaggregated data in UDISE+ is the first step towards targeted action.

**3. Operationalize Inclusivity:** Policies must be backed by enforceable standards. This includes mandating annual accessibility audits for all schools, creating a clear cadre of special educators

with defined ratios, and fast-tracking the implementation of critical frameworks like the NCERT manual on transgender concerns.

**4. Build Capacity and Sensitize:** Investment in infrastructure must be matched by investment in people. Large-scale, mandatory training and sensitization programmes for all teachers and administrators on inclusive practices and the needs of diverse SEDGs are non-negotiable.

**5. Foster Inter-State Coordination:** For migrant children and other mobile populations, the Ministry of Education must facilitate the creation of portable student IDs and credit transfer mechanisms that work across state lines, ensuring continuity of learning.

Ultimately, the success of NEP 2020 will not be judged by the eloquence of its text, but by its impact on the most difficult to reach. For the poor child in a remote village and the exceptional child striving to learn, the policy must move from being a document of promise to a guarantee of opportunity. The framework is in place; the task now is to bridge the profound gap between its inclusive vision and the persistent inequalities on the ground.

## References

1. GUPTA, Dr. VISHAL, and Dr.Vandana Verma. 2025. “An Interventional Study on the Assessment of the Knowledge and Awareness Related to Health at Upper Primary Level of School Education”. International Journal of Research in Social Science and Humanities (IJRSS) ISSN:2582-6220, DOI: 10.47505 IJRSS 6 (3): 100-108. <https://doi.org/10.47505/IJRSS.2025.3.10>.
2. Kalita, G. (2024). NEP 2020 policies for inclusive education. The Scientific Temper, 15(spl-2), 63–72. <https://doi.org/10.58414/SCIENTIFICTEMPER.2024.15.spl-2.12>
3. Kasinathan, O., Shanmugapriya, M., & Manikandan, M. (2023). Inclusive education in NEP 2020. Shanlax International Journal of Arts, Science and Humanities, 11(S1), 32–35. <https://doi.org/10.34293/sijash.v11iS1i2-Nov.7312>
4. Kumari, B. (2025). NEP 2020 and inclusive education: Potential for enhancing access and equity. International Education and Research Journal. <https://doi.org/10.5281/zenodo.16743101>
5. Narayanan, B. (2025). Exploring the role of special educators and the implementation challenges of inclusive education under NEP 2020. International Journal of Environmental Sciences. <https://doi.org/10.64252/9c874305>



## **Promoting Awareness on Women's Education, Social Status, Educational Initiatives, and Empowerment**

**Dr. Gayatri Kumari**

Assistant Professor B.B.M.

B.Ed. College, Sardaha, Chas, Bokaro

### **Abstract**

Women's education and empowerment are very important for the growth of society. Education helps women gain knowledge, confidence, and skills to make better decisions in life. When women are educated, their social status improves, they become financially independent and they can actively participate in family and community decisions. However, many women still face problems such as poverty, gender discrimination, early marriage, lack of awareness and limited educational facilities. So women's education and empowerment need more awareness and support. Different educational initiatives started by governments, schools and social organizations help girls continue their studies and develop new skills. Scholarships, awareness programs, and safe learning environments encourage families to send girls to school. Society and family support are also very important in changing old thinking patterns and promoting equal opportunities for girls and boys. Empowered women contribute to the overall development of society. They support their families, improve health and education levels and inspire other women and children. Technology and digital learning have also created new opportunities for women to study and learn from home, especially in rural areas.

This abstract highlights the need for continuous efforts to promote awareness about women's education, improve their social position, and support educational programs that lead to empowerment. When women are educated and empowered, society becomes more equal, strong, and developed. Therefore collaboration among government, educational institutions, communities, and families is essential to ensure that every woman gets the opportunity to learn, grow, and succeed.

**Keywords:** Women's Education, Women Empowerment, Social Status, Awareness, Gender Equality, Educational Programs, Skill Development, Social Progress.

### **Introduction**

Women are the pillar of every society and contribute greatly to the development of families, communities, and nations. For a long time, many women around the world have faced social,

cultural, and economic challenges that restricted their access to education and equal opportunities. Increasing awareness about women's education, enhancing their social position, encouraging educational programs, and promoting empowerment are important steps for creating a fair and progressive society. Education not only improves the life of a woman but also brings positive change to families and communities by supporting better health, economic progress, and social unity.

In recent years, understanding and awareness of women's rights and opportunities have grown considerably. Governments, educational institutions, social organizations, and communities are now giving greater attention to the education and empowerment of women. Even with these improvements, problems such as gender inequality, poverty, early marriage, and lack of awareness continue to create obstacles. Therefore, sustained efforts are essential to spread awareness and build a supportive environment where women can achieve their goals and reach their true potential.

### **Importance of Women's Education**

Education serves as the pathway to empowerment. When women have access to quality education, they develop knowledge, self-confidence and skills that enable them to make wise decisions about their lives. Educating women contributes to improved health, lower poverty levels, and greater involvement in economic and political activities. Women who are educated often encourage their children to study, creating a positive cycle of learning and progress for future generations. Education also helps women become aware of their rights and duties. It empowers them to stand against social injustice, speak out against discrimination, and take an active role in community development. Nations that prioritize women's education often witness stronger economic growth and social advancement because educated women make valuable contributions to the workforce.

Furthermore, women's education supports gender equality. When girls and boys are given equal opportunities to learn, society becomes more fair and inclusive. Educated women serve as inspiring role models, motivating young girls to set high goals and work towards achieving their dreams.

### **Barriers to Women's Education and Empowerment**

Many obstacles stand in the way of women education and empowerment:

**Poverty:** Families with low income often give more importance to boys' education than girls'.

**Early marriage:** Many girls have to leave school at a young age because of early marriage.

**Cultural beliefs:** Traditional norms sometimes discourage girls from continuing higher education.

**Safety issues:** Unsafe transport and insecure school environments can reduce girls' school attendance.

**Poor infrastructure:** Lack of proper schools, sanitation facilities, and learning resources affects girls more seriously.

**Limited awareness:** Many communities do not fully understand the long-term benefits of educating girls.

**Solution:** Removing these barriers requires joint efforts from governments, communities, educational institutions, and families.

### **Social Status of Women: Past and Present**

Historically, the social position of women has differed across cultures and civilizations. In many societies, women were mainly limited to domestic duties and were often denied opportunities for education and participation in decision-making processes. Traditional customs and cultural beliefs frequently restricted their freedom and reduced their involvement in public life. With time, social reform movements and awareness initiatives have contributed to improving the status of women. Legal changes, better educational opportunities, and increased economic participation have allowed women to achieve significant success in fields such as science, education, politics, business, and sports. Today, women hold leadership roles as scientists, entrepreneurs, educators, and decision-makers, demonstrating that ability is not determined by gender. Despite this progress, several challenges still exist. In many regions, women continue to experience discrimination, wage inequality, violence, and limited access to resources and opportunities. Social stereotypes and outdated attitudes still influence women's growth and participation. Therefore, promoting awareness about gender equality and encouraging respect for women's contributions are essential steps toward further improving their social status.

### **Educational Initiatives for Women**

Governments and organizations across the world have introduced various educational programs to encourage women's education and empowerment. These efforts are designed to ensure equal opportunities, lower school dropout rates, and motivate girls to continue higher studies. In India,

several schemes have been implemented to support the education and welfare of girls. Initiatives such as scholarships, free textbooks, midday meal programs, and awareness campaigns have greatly improved girls' enrolment in schools. Community-based programs and self-help groups also play a significant role in motivating families to educate their daughters . Educational institutions have adopted gender friendly policies, secure learning environments, and mentoring systems to support female students. The growth of digital learning platforms and online education has further widened educational access for women, particularly in rural and remote regions.

Additionally, non-governmental organizations (NGOs) and community groups organize workshops, seminars, and awareness drives to emphasize the value of women's education. They also offer vocational training and skill development opportunities that enable women to become economically independent.

### **Role of Society and Family**

The contribution of society and family is very important in promoting women's education and empowerment. The family is the first place where individuals learn values, attitudes, and beliefs. Therefore it plays a key role in shaping perspectives toward gender equality. Parents who motivate and support their daughters to pursue education and career opportunities help build confidence and independence among girls, which greatly contributes to creating a more equal society. Encouraging girls from an early age to dream big and achieve their goals helps break traditional barriers and promotes long-term social progress. At the same time, society as a whole must work towards creating a safe, supportive, and respectful environment where women are valued and given equal opportunities. Community leaders, teachers, educational institutions, and local organizations can actively spread awareness about the benefits of educating girls and empowering women. Awareness campaigns, community discussions, and educational programs can help challenge outdated stereotypes and encourage positive social change. Media and social platforms also play an influential role in shaping public opinion. By presenting positive examples of successful women and sharing inspiring stories, they help change mindsets and encourage families to support girls' education and empowerment.

Furthermore, the participation of men and boys in awareness programs is equally essential. Gender equality should not be viewed as only a women's concern but as a collective social responsibility that requires cooperation and involvement from all members of society. When

families and communities work together, they create an environment where women can grow, lead, and contribute fully to social and economic development.

### **Women's Empowerment through Education**

Women's empowerment refers to giving women the ability and freedom to make their own decisions, manage resources, and actively take part in social, economic, and political decision-making processes. It involves creating opportunities that allow women to realize their potential and live with independence and dignity. Education is considered one of the most powerful tools for empowerment because it develops confidence, knowledge, and critical thinking skills that help women become self-reliant. Women who receive proper education are more likely to secure employment, start their own businesses, and contribute financially to their families and society. Financial independence not only improves their standard of living but also strengthens their self-respect and decision-making power within the family and community. Empowered women are more likely to participate in leadership roles and political activities, where they can influence policies and decisions that promote social welfare and inclusive development.

Education also increases awareness about important issues such as health, nutrition, legal rights, and social justice. Women who understand their rights are better prepared to protect themselves from discrimination, exploitation, and injustice. They are more capable of advocating for quality healthcare, better educational opportunities, and a safer environment for themselves and their children. As a result, empowered and educated women contribute significantly to building healthier families, stronger communities and a more progressive society.

### **Role of Technology in Women's Empowerment**

Technology has created new opportunities for women's education and empowerment. Online learning platforms, digital classes, and mobile apps make education accessible to women who cannot attend regular schools or colleges. These tools allow women to learn anytime and from anywhere, especially in rural or remote areas. Digital literacy programs help women gain important skills required for modern jobs and business activities. Social media platforms give women a space to share their experiences, connect with others, build professional networks, and promote their small businesses or ideas. Technology also supports awareness campaigns that reach a large number of people and help change traditional attitudes and gender stereotypes.

However, there are still challenges such as the digital divide. Many women do not have access to affordable internet services or digital devices like smartphones and computers. To fully benefit from technology, it is important to ensure equal access to digital resources and provide proper training and support. By reducing these barriers, technology can play a powerful role in improving women's education, independence, and overall empowerment.

### **Strategies to Promote Awareness**

Enhancing awareness of women's education and empowerment requires continuous and collaborative efforts. Some effective strategies are as bellow:

1. Conduct awareness drives in schools and local communities.
2. Arrange workshops, seminars, and discussion sessions to spread knowledge and understanding.
3. Encourage community participation and parental support in girls' education.
4. Share inspiring success stories of educated and empowered women to motivate others.
5. Use media and digital platforms to spread positive messages about gender equality.
6. Provide safe, supportive, and inclusive learning environments for girls.
7. Offer scholarships and financial assistance to reduce economic barriers.
8. Strengthen laws and policies that promote equal rights and opportunities for women.
9. Schools and colleges should organize gender sensitivity and leadership development programs for students.

### **Challenges Ahead**

Although significant progress has been achieved, attaining complete gender equality is still a difficult challenge. Changes in social attitudes and traditional mindsets take time, and economic differences continue to affect women more than men in many situations. Issues such as climate change, migration, and global crises also create additional barriers that limit women's access to education, employment, and other opportunities.

To overcome these challenges, regular monitoring, strong policy improvements and active involvement of communities are essential. Governments, institutions, and society must work together to create supportive environments that promote equal opportunities for women. Greater investment in education, healthcare, skill development, and social welfare systems will help women participate more actively and equally in the social and economic development of the

country. By taking continuous and collective action, society can move closer to achieving true gender equality and sustainable progress.

## Conclusion

Promoting awareness about women's education, social status, educational programs, and empowerment is important for creating a progressive and inclusive society. Education gives women the knowledge and confidence to make informed decisions, improves their position in society, and helps in social and economic growth. Governments, educational institutions, families, and communities need to work together to remove obstacles and provide equal opportunities for women.

When women are educated and empowered, they not only improve their own lives but also strengthen their families and contribute positively to society. A society that encourages and supports women's education moves toward greater equality, development, and long-term progress. Therefore, continuous awareness efforts, supportive policies, and joint action are necessary to ensure that every woman gets the chance to learn, grow, and become a confident leader in society.

## References

1. Boserup, E. (2007). *Woman's role in economic development*. Earthscan.
2. Desai, S., & Kulkarni, V. (2008). Changing educational inequalities in India in the context of affirmative action. *Demography*, 45(2), 245–270. <https://doi.org/10.1353/dem.0.0001>
3. Drèze, J., & Sen, A. (2013). *An uncertain glory: India and its contradictions*. Princeton University Press.
4. Kabeer, N. (2005). Gender equality and women's empowerment: A critical analysis of the third millennium development goal. *Gender & Development*, 13(1), 13–24. <https://doi.org/10.1080/13552070512331332273>
5. Kingdon, G. G. (2007). The progress of school education in India. *Oxford Review of Economic Policy*, 23(2), 168–195. <https://doi.org/10.1093/oxrep/grm015>
6. Malhotra, A., Schuler, S. R., & Boender, C. (2002). *Measuring women's empowerment as a variable in international development*. World Bank.
7. MHRD (Ministry of Human Resource Development). (2020). *National education policy 2020*. Government of India.



## Education of Deprived and Underprivileged Children in Accordance with NEP 2020

Dr. Hardeep Kaur

(Scholar. B.Ed. College, Giridih)

### Introduction

Education is not just a fundamental human right but also a powerful catalyst for social transformation and economic development. For a nation to flourish equitably, it must ensure that **every child—regardless of background, socioeconomic status, gender, caste, religion, or geography—has access to quality education.** In India, a country marked by deep social and economic diversity, this principle of inclusive education is foundational to its constitutional and developmental ethos. Despite progress in enrollment and literacy over the decades, millions of children from deprived and underprivileged backgrounds continue to face structural barriers that block their path to learning. These barriers range from poverty, malnutrition, gender discrimination, social exclusion, lack of infrastructure, and limited learning support at home to systemic issues like gaps in teaching quality and curriculum relevance. This article delves into the key aspects of NEP 2020 that relate to the education of deprived and underprivileged children, examines the challenges they face, analyzes how the policy seeks to address them, highlights implementation strategies, and proposes future pathways to ensure equitable learning opportunities for all.

### Understanding the Context: Who Are Deprived and Underprivileged Children?

The terms “deprived” and “underprivileged” refer to children who lack access to basic resources and opportunities that are essential for their holistic development. This includes:

- Children from low-income families or those living below the poverty line.
- Children from Scheduled Castes (SC), Scheduled Tribes (ST), Other Backward Classes (OBC) and minority communities who historically face social discrimination.
- Children living in rural, remote, or tribal areas with inadequate school infrastructure.
- Children with special needs (diverse learning needs or disabilities).
- Children affected by migration, displacement, conflict, or crises.
- Girls in regions where gender norms limit schooling participation.
- Out-of-school children and early school leavers.

These children often confront multiple intersecting disadvantages—economic, social, cultural—that accumulate over time, leading to lower participation, higher dropout rates, and poorer learning outcomes compared to their privileged peers.

### NEP 2020: A Vision for Inclusive and Equitable Education

NEP 2020 is guided by the principle of “equitable and inclusive education” for all learners. Its vision emphasizes that education must create opportunities for every child to thrive intellectually, socially, and emotionally in an environment that respects individuality, diversity, and dignity. Here are the core equity-focused goals of NEP 2020:

1. Universal Access and Retention-- NEP 2020 aims to ensure universal access to schooling from early childhood through secondary levels, meaning no child should be out of school due to lack of

facilities, economic hardship, or social discrimination. The policy underscores the need to eliminate dropout rates by providing flexible curricula, bridge programs, and targeted support systems.

## **2. Early Childhood Care and Education (ECCE)**

The policy gives high priority to early childhood education (ages 3–8)—a critical phases that impacts lifelong learning. NEP 2020 proposes the integration of foundational literacy and numeracy programs, community-based ECCE centers, and caregiver engagement especially in under-resourced areas.

## **3. Equity and Inclusion as Core Principles**

NEP 2020 emphasizes equity across all stages of education, with special measures for disadvantaged groups including SC, ST, OBC, minority communities, and children with disabilities. It mandates provisions such as:

- Reservation of seats and targeted scholarships.
- Free education for children from economically weaker sections.
- Provision of infrastructure, including clean toilets, safe drinking water, and separate facilities for girls.
- Inclusive learning environments with trained teachers.

## **4. Multilingual and Culturally Relevant Curriculum**

Recognizing linguistic diversity as an enabler of learning, NEP 2020 promotes mother-tongue or regional language instruction in the early years. This approach enhances comprehension and reduces learning barriers for children from diverse language backgrounds.

**5. Flexible and Student-Centric Pedagogy-**The policy moves away from rote learning toward holistic, competency-based education with experiential and activity-based pedagogies. This benefits underprivileged children who often struggle with memorization and thrive in contextual, meaningful learning environments.

## **6. Inclusive Assessment Systems**

NEP 2020 proposes continuous, formative assessments that emphasize learning progress rather than high-stakes exams. This shift levels the playing field for children who may lack access to private tutoring or exam-oriented preparation.

## **7. Support Structures for Marginalized Students**

The policy calls for school councils, counsellors, and community volunteers to identify and support vulnerable learners. It also envisions after-school programs, remedial classes, and life skills training tailored to children's needs.

## **Structural Barriers to Education for the Underprivileged**

While NEP 2020 lays out a robust framework, the reality on the ground remains challenging. Some key structural barriers include:

### **1. Poverty and Economic Constraints**

For many families, the cost of education—books, uniforms, transport, and opportunity costs—can be prohibitive. Children from low-income households may engage in child labour or household work to supplement family income.

## 2. Gender Inequities

In various regions, entrenched gender norms and safety concerns restrict girls' school attendance, especially during adolescence. Lack of sanitation facilities and menstrual hygiene resources further exacerbate dropout rates.

## 3. Inadequate School Infrastructure

Rural and remote schools often lack basic amenities: classrooms, electricity, libraries, and qualified teachers. The absence of accessible facilities is particularly detrimental to children with disabilities.

## 4. Language Barriers

Children from linguistic minorities may struggle when instruction occurs in languages unfamiliar to them, leading to disengagement and poor performance.

## 5. Teacher Shortages and Quality Gaps

Many schools serving disadvantaged communities have insufficient or under-trained teachers. Teachers may not be equipped to handle diverse learning needs or apply child-centered practices.

## 6. Social Exclusion and Stigma

Caste, ethnicity, and community identities impact how children experience schooling. Discrimination and social bias can lead to marginalization, affecting participation and self-esteem.

## 7. Lack of Parental Advocacy

Parents from deprived backgrounds may be unable to engage with schools due to limited literacy, time constraints, or a lack of awareness of their rights.

### How NEP 2020 Addresses These Barriers

NEP 2020 acknowledges these structural challenges and proposes **multifaceted solutions**:

#### A. Incentives and Support Programs

- **Free and compulsory education** for all children aged 3–18.
- **Scholarships, stipends, and fee waivers** for disadvantaged groups to reduce financial burdens.
- **Transportation support** for children in remote areas.

#### B. Strengthening ECCE and Early Learning

- Expansion of **Anganwadi centers and pre-primary programs** in underserved areas.
- Curriculum emphasizing play-based learning to build foundational skills.

#### C. Inclusive School Infrastructure

NEP 2020 stresses that all schools must provide:

- **Safe drinking water and separate toilets for girls and boys.**

- **Barrier-free access** for children with disabilities.
- Adequate classrooms and learning materials.

#### **D. Multilingual Instruction**

Instruction in **mother tongue/home language** up to Grade 5 (or beyond where feasible) improves comprehension and inclusion.

#### **E. Teacher Recruitment, Training, and Accountability**

- Recruitment of additional teachers to fill shortages in rural/remote areas.
- Pre-service and in-service training focused on inclusive pedagogy and child psychology.
- Continuous professional development to support differentiated instruction.

#### **F. Community and Parental Engagement**

NEP 2020 champions **School Management Committees (SMCs)** with active participation from parents and community members to ensure accountability, contextual solutions, and local ownership.

#### **G. Remedial and Supportive Learning Structures**

- **Remedial education programs** for children lagging behind.
- Local learning centers that provide academic help and life skills education.
- Use of technology to tailor learning support where possible.

#### **H. Safety Nets Against Dropouts**

NEP 2020 emphasizes tracking of student attendance and performance, with outreach strategies for children at risk of dropping out.

#### **Implementation Framework: Translating Policy into Practice**

The success of NEP 2020 hinges on **effective implementation**. Here's how the policy envisages this:

##### **1. Decentralized Planning and Local Solutions**

State and district education authorities are empowered to tailor NEP provisions to local needs. This flexibility enables strategies that are culturally and contextually relevant.

##### **2. Data-Driven Decision-Making**

Robust education management information systems (EMIS) will track enrolment, attendance, learning outcomes, infrastructure status, and teacher deployment. Such data can highlight gaps and inform targeted interventions.

##### **3. Public-Private Partnerships**

The government encourages collaborations with non-profits, community organizations, and private sector entities to supplement resources, deliver training, and innovate solutions for underserved areas.

##### **4. Use of Technology and Digital Learning**

NEP 2020 promotes equitable access to digital tools, but with caution against widening the digital divide. Initiatives include:

- Digital repositories of learning materials.
- Offline learning solutions for areas without reliable internet.
- Teacher training through technology platforms.

## **5. Monitoring and Accountability Mechanisms**

Independent regulatory bodies are mandated to monitor quality, inclusion, and compliance with policy mandates. Regular reviews and graded support systems are planned to improve performance over time.

### **Case Studies: Inclusive Education Practices**

While NEP 2020 is still under phased implementation, several models and practices across states already reflect its spirit:

#### **1. Community-Led Learning Centers**

In some regions, local volunteers and NGOs run evening classes and bridge programs for children who dropped out or missed schooling due to migration. These centers focus on basic literacy, numeracy, and life skills.

#### **2. Mobile Schools and Transit Education**

For children of migratory families, mobile schooling models ensure continuity of learning as families move, reducing dropout risk.

#### **3. Inclusive Classrooms with Co-Teaching**

Pilot projects place specially trained inclusive educators alongside regular teachers to support children with diverse learning needs within the same classroom.

#### **4. Girls' Education Campaigns and Safe Transport**

Several districts have launched campaigns to increase girls' enrolment, combined with safe transport options and menstrual hygiene management facilities in schools.

### **Challenges in Implementation**

Despite a robust policy framework, several challenges may temper the pace and reach of NEP 2020's equity goals:

#### **1. Resource Constraints**

Many states face budgetary limitations for infrastructure upgrades, teacher recruitment, and learning support programs.

#### **2. Teacher Preparedness and Resistance to Change**

Transitioning from traditional teaching methods to learner-centric and inclusive pedagogy requires time, sustained training, and mindset shifts.

#### **3. Digital Divide**

While technology can enhance access, inequalities in access to devices and connectivity remain stark in rural and economically weaker areas.

#### **4. Community Mindsets and Social Barriers**

Deep-rooted social norms related to caste, gender, and disability require continuous community engagement and sensitization.

## Measuring Progress: Indicators of Success

To evaluate the impact of NEP 2020 on underprivileged children, a set of measurable indicators can be used:

- **Enrollment and retention rates** of disadvantaged groups.
- **Learning outcomes** in foundational literacy and numeracy.
- **Attendance and transition rates** across grade levels.
- **Infrastructure access**, including toilets, water, and facilities for children with special needs.
- **Teacher recruitment and qualification metrics**, especially in rural/remote schools.
- **Parental participation rates in SMCs** and local education planning.

## The Role of Stakeholders

### 1. Government and Policy Makers

Ensure adequate funding, effective governance structures, and supportive regulatory environments.

### 2. Educators and School Leaders

Adopt inclusive practices, nurture supportive classroom cultures, and actively engage families and communities.

### 3. Parents and Local Communities

Become partners in education by monitoring progress, participating in decision-making bodies, and fostering learning at home.

### 4. Civil Society and NGOs

Complement government efforts with grassroots outreach, specialized programs, advocacy, and innovation.

### 5. Private Sector Partners

Offer technical and financial resources, especially in areas like teacher training, digital learning solutions, and infrastructure support.

## Conclusion: A Vision for Equitable Education

NEP 2020 represents a bold and comprehensive blueprint for transforming India's education landscape. Its emphasis on equity, inclusion, and holistic learning signals a commitment to ensuring that no child is left behind, especially those from deprived and underprivileged backgrounds. However, policy alone is not enough. Realizing this vision requires collective commitment, sustained investment, adaptive implementation, and community ownership. By addressing structural inequalities, empowering teachers, engaging communities, and prioritizing the needs of the most vulnerable learners, India can build an education system that unlocks the potential of every child. In the words of the policy itself, education must be an empowering tool that equips children not just with knowledge, but with confidence, creativity, compassion, and agency. When this aspiration is translated into tangible action for underprivileged children across the nation, the promise of NEP 2020 will truly be fulfilled.

## Reference List

1. Dreze, J., & Sen, A. (2013). *An uncertain glory: India and its contradictions*. Princeton University Press.
2. Government of India. (2020). *National education policy 2020*. Ministry of Human Resource Development. <https://www.education.gov.in>
3. Kingdon, G. G. (2007). The progress of school education in India. *Oxford Review of Economic Policy*, 23(2), 168–195.
4. Kumar, K. (2018). *Quality of education at the beginning of the 21st century: Lessons from India*. Oxford University Press.
5. Nambissan, G. B. (2010). Exclusion and discrimination in schools: Experiences of Dalit children. *Indian Institute of Dalit Studies Working Paper Series*.
6. PROBE Team. (1999). *Public report on basic education in India*. Oxford University Press.
7. Tilak, J. B. G. (2015). *How inclusive is higher education in India?* *Social Change*, 45(2), 185–223. <https://doi.org/10.1177/0049085715574188>
8. UNESCO. (2015). *Education for all 2000–2015: Achievements and challenges*. UNESCO Publishing.
9. UNICEF. (2019). *Annual report 2019: For every child, every right*. UNICEF. <https://www.unicef.org>
10. World Bank. (2018). *World development report 2018: Learning to realize education's promise*. World Bank Publications.



## RURAL–URBAN DIGITAL INEQUALITY AND ITS INFLUENCE ON CHILDREN’S LEARNING OUTCOMES

Ms. Gunja Barai<sup>1</sup>

Prof. (Dr.) Preeti J. Maiyani<sup>2</sup>

1. Senior Research Fellow, Department of Education, Gujarat University,

2. Professor, UGC-MMTTC Department, Gujarat University

### ABSTRACT

The rapid integration of digital technologies into education has transformed teaching and learning, particularly after COVID-19, which accelerated the shift to online and blended learning models. While technology has increased access to education in many areas, it has also highlighted and worsened existing gaps between rural and urban regions. This study examines rural–urban digital inequality and its effects on children’s learning outcomes. Using a descriptive survey, data were collected from rural and urban students through questionnaires on digital access, literacy, and engagement. Academic records were analyzed to evaluate learning outcomes. Statistical methods such as mean, standard deviation, t-tests, and correlation analysis were used to identify differences and relationships. Results show a significant gap in digital access, with urban students having more devices, better internet, and stronger digital skills. Rural students often face poor connectivity, shared devices, and infrastructural issues that hinder online learning participation. A positive link was found between digital access and learning success, suggesting that better technology resources improve academic performance and engagement. The study also points out that socio-economic status, parental education, and infrastructure are key factors maintaining digital inequality. These findings emphasise that digital disparity is not just a tech issue but a structural challenge impacting educational equity and opportunities. The research recommends strengthening rural digital infrastructure, making access affordable, promoting digital literacy, and creating inclusive policies to support fair and sustainable educational growth.

### KEYWORDS:

Digital inequality, rural–urban divide, learning outcomes, digital literacy, educational equity, ICT in education, blended learning, and academic achievement.

### INTRODUCTION

The rapid integration and growth of digital technologies have fundamentally transformed school education worldwide. In India, the incorporation of Information and Communication Technology (ICT) into classrooms intensified significantly during the COVID-19 pandemic, when prolonged school closures compelled a large-scale shift to online and blended learning models. Virtual classrooms, digital assignments, recorded lectures, and mobile learning applications became essential tools for maintaining instructional continuity. While this digital transition expanded opportunities for flexible and remote learning, it simultaneously exposed deep systemic inequalities within the educational landscape, particularly the rural–urban digital divide.

Digital inequality extends beyond mere access to devices. It includes disparities in internet connectivity, electricity supply, infrastructure quality, digital literacy, and the capacity to use technology effectively for academic purposes. Urban students generally benefit from stable broadband connections, personal smartphones or laptops, and supportive home environments with digitally literate parents. In contrast, many rural households contend with unreliable electricity, poor network connectivity, shared devices, and limited technical guidance. Such structural disadvantages restrict sustained participation in online learning environments.

These disparities have direct and measurable implications for children’s learning outcomes. When teaching, assessment, academic communication, and resource access depend on digital platforms, unequal technological access results in unequal educational opportunities. Limited engagement in live sessions, difficulties in accessing study materials, and reduced interaction with teachers adversely affect subject mastery, conceptual understanding, problem-solving abilities, and overall academic achievement. Moreover, digital inequality intersects with socio-economic status, parental education, gender norms, and regional disparities, compounding educational disadvantage and reinforcing achievement gaps.

Within the framework of the National Education Policy 2020, which strongly promotes technology-enabled and blended learning approaches, the issue of digital inequality becomes even more critical. NEP 2020 envisions technology as a means to enhance quality, access, and equity in education. However, if infrastructural and digital skill disparities remain unaddressed, technology-driven reforms may inadvertently widen existing gaps rather than bridge them. The shift toward technology-based education has thus transformed digital competence into a

foundational academic requirement, elevating digital inequality from a technological concern to a matter of educational equity and social justice. Unequal access to digital resources risks perpetuating intergenerational disadvantage and deepening socio-economic divides. Therefore, understanding the scope and impact of rural–urban digital inequality on children’s academic engagement and performance is essential for developing evidence-based policies and targeted interventions. By situating this issue within broader discourses of inclusion, equity, and quality education, the present study seeks to ensure that digital transformation strengthens rather than fragments India’s educational ecosystem.

## **REVIEW OF RELATED LITERATURE**

Scholarly discussions on the digital divide have shifted from focusing solely on access issues to exploring various aspects of digital inequality, including skills, usage, and outcomes. Early research highlighted infrastructural gaps between rural and urban areas, with rural regions facing limited connectivity and affordability challenges. Later studies expanded the focus to include qualitative differences in technology use and digital literacy. Data collected during the COVID-19 pandemic showed that children in rural areas experienced significant learning disruptions due to a lack of devices and unreliable internet. Additionally, shared household phones limited children’s participation in live online classes. Conversely, urban students benefitted from a wider range of digital tools and structured online support. Further research indicates that socio-economic status strongly influences digital access and educational results. Higher parental education is associated with better academic support and digital guidance, while children from lower-income backgrounds face additional obstacles, such as limited study space and less parental assistance. Recent literature highlights the “second-level digital divide,” referring to differences in digital skills and the ability to use technology effectively for learning. Even with devices available, insufficient digital literacy can prevent effective use. Gender differences also intersect with rural–urban divides, affecting participation in technology-based education. Overall, studies suggest digital inequality contributes to achievement gaps, lower engagement, and poorer learning outcomes. However, more localized research is needed to understand these issues within specific social, cultural, and infrastructural contexts. This study aims to fill that gap by investigating rural–urban digital inequality and its impact on children’s learning outcomes within a particular educational setting.

## CONCEPTUAL FRAMEWORK

The current study is based on Digital Divide Theory and the Social Equity Framework, offering a comprehensive perspective on rural–urban disparities in digital learning. Digital Divide Theory explains inequality across three interconnected levels: the first- level divide (access), which involves device availability, broadband, and electricity; the second- level divide (skills), covering digital competence, information navigation, and self- efficacy; and the third- level divide (usage outcomes), relating to effective use of digital tools for learning, collaboration, and knowledge building. These levels are sequential yet interconnected, meaning having access alone doesn't guarantee meaningful educational outcomes without adequate skills and intentional usage.

The Social Equity Framework emphasises that educational systems must ensure fair distribution of opportunities, resources, and support regardless of socio- economic status, location, gender, or culture. When digital infrastructure becomes integral to teaching and assessment, unequal access turns into a structural barrier to equity.

This combined framework views rural–urban digital inequality as an independent variable, measured through indicators like device ownership, internet reliability, digital literacy, and tech use frequency. Children's learning outcomes, such as academic performance, engagement, assignment completion, understanding, and skill development, are the dependent variables. Key mediators —socio-economic status, parental education, digital literacy, school ICT infrastructure, and teacher digital pedagogy—shape the relationship between access and learning outcomes, explaining how digital inequality influences achievement.

The framework suggests a causal pathway:

**Digital Access → Digital Skills → Academic Usage → Learning Outcomes,**

with socio- economic and institutional factors moderating each step.

Overall, the model views digital inequality as a layered social and educational issue that influences learning and engagement, both directly and indirectly, especially in the Indian schooling context. This framework offers a solid base for empirical research and policy development.

## **OBJECTIVES OF THE STUDY**

1. To compare the level of digital access between rural and urban children.
2. To examine the influence of digital access on children's learning outcomes.

## **RESEARCH QUESTIONS**

1. Is there a statistically significant difference in digital access between rural and urban children?
2. Is there a significant relationship between digital access and children's learning outcomes?

## **METHODOLOGY**

The study used a descriptive survey design to explore rural–urban digital inequality and its effect on learning outcomes. The sample included schoolchildren selected through stratified random sampling to ensure proportional representation from both rural and urban schools. Data were collected via a structured questionnaire that measured three areas: digital access (device ownership and internet connectivity), digital literacy (effective use of digital tools), and academic engagement (participation in online learning). Academic performance data from school records, including recent exam scores and teacher evaluations, were used to assess learning outcomes.

The questionnaire covered device availability, internet connection quality and stability, frequency of online class participation, access to digital resources, and parental support for academics. Data analysis involved descriptive statistics (mean and standard deviation) to identify group differences, and an independent samples t-test compared digital access levels between rural and urban students. Pearson's correlation tested the link between digital access and learning outcomes. Ethical protocols included obtaining informed consent, maintaining confidentiality of responses, and ensuring voluntary participation.

## **HYPOTHESIS TESTING, INTERPRETATION AND DATA ANALYSIS**

The null hypothesis proposed that there is no notable difference in digital access between children in rural and urban areas. Data analysis showed that urban students scored significantly higher regarding device ownership, internet reliability, and how often they engage digitally. The calculated t-value was greater than the critical threshold at the 0.05 significance level, leading to the null hypothesis's rejection. This confirms a meaningful rural–urban gap in digital access.

Moreover, correlation analysis indicated a positive and statistically significant link between digital access and learning outcomes. Students with more digital resources and higher digital skills tended to perform better academically and participate more actively.

These results imply digital inequality is a structural factor affecting educational success. Infrastructure deficits, socio-economic differences, and unequal access to digital tools directly impact participation and achievement differences between rural and urban areas. The findings support the need for equitable digital integration to promote balanced, inclusive educational development.

### **RELIABILITY AND VALIDITY**

Content validity of the research instrument was ensured through expert review by education specialists. Construct validity was established by aligning questionnaire items with conceptual dimensions of digital inequality. Reliability was assessed using Cronbach's alpha, which indicated acceptable internal consistency. Data triangulation through academic records enhanced credibility.

### **LIMITATIONS OF THE STUDY**

The study focused on specific rural and urban schools in the Dhanbad district, which may limit how well the results apply to other areas. Variations in socio-economic status and infrastructure across different blocks were not thoroughly explored. Some data came from children's self-reports, which could be biased or inaccurate. Additionally, the study's short duration prevented a deeper analysis of how digital access changes over time and its lasting effects on learning outcomes.

### **FINDINGS AND DISCUSSION**

The study confirms significant gaps in digital access between children in rural and urban areas. Urban students consistently reported reliable internet, personal devices, and regular engagement in online learning. Conversely, rural students often relied on shared devices and experienced inconsistent connectivity, hindering real-time class participation. Findings indicate that digital inequality impacts academic involvement, with urban students excelling in completing assignments, participating in interactive activities, and grasping concepts. Rural students faced hurdles in accessing recorded lectures and submitting digital work, which negatively affected

their performance. The study emphasises that technology-focused education without equitable infrastructure may deepen existing achievement gaps. Additionally, digital literacy was found to influence learning outcomes, with students possessing stronger digital skills navigating platforms more effectively and utilising additional resources more effectively. Addressing digital inequality thus requires both infrastructural improvements and digital skill development. Overall, the study highlights the necessity for systemic efforts to ensure technological progress fosters inclusive growth rather than widening disparities.

## **IMPLICATIONS**

The findings highlight the urgent need to systematically enhance digital infrastructure in rural areas to promote equitable education. Priority should be given to expanding reliable broadband, ensuring continuous electricity, and developing ICT facilities at schools. Educational planners must distribute technological resources fairly and based on need, so rural schools are not left behind compared to urban ones. Additionally, policymakers should implement targeted subsidies, student data vouchers, and affordable device programs to make technology more accessible. A collaborative approach involving government, private sector, and local communities is crucial for sustainable digital inclusion and better learning outcomes.

## **LIMITATIONS OF THE STUDY**

The study focused on specific rural and urban schools in the Dhanbad district, which may limit how well the results apply to other areas. Variations in socio-economic status and infrastructure across different blocks were not thoroughly explored. Some data came from children's self-reports, which could be biased or inaccurate. Additionally, the study's short duration prevented a deeper analysis of how digital access changes over time and its lasting effects on learning outcomes.

## **SUGGESTIONS**

1. Strengthening Rural Digital Infrastructure: Expand reliable broadband access, ensure a stable electricity supply, and upgrade ICT facilities in rural schools. Establishing community digital learning centres can give students access to resources they lack at home.
2. Affordable Access to Devices and Internet: Launch subsidy programs, distribute low-cost devices, and provide student data vouchers to minimise financial barriers. Public-private

partnerships can help make smartphones, tablets, and internet services affordable for disadvantaged students.

3. Institutionalising Digital Literacy Programs: Incorporate digital literacy into the school curriculum as a vital skill. Offer structured training for students, teachers, and parents to promote effective, responsible, and academic use of technology.

4. Capacity Building for Teachers: Implement regular professional development focusing on digital pedagogy, blended learning techniques, and tech-based assessments. Preparing teachers is crucial to ensure that digital tools enhance learning and do not widen achievement gaps.

## **RECOMMENDATIONS**

1. Strengthen rural digital infrastructure by ensuring dependable broadband, stable electricity, and establishing community digital learning centres in rural regions to provide equitable access.
2. Improve affordable access to devices and the internet through subsidy programs and public–private partnerships, making digital devices and data plans cheaper for school children.
3. Formalise digital literacy programs by embedding structured training for students, teachers, and parents to encourage efficient and responsible technology use in education.
4. Implement blended learning models that combine offline and online teaching methods, accompanied by ongoing monitoring systems to assess the effectiveness of digital inclusion initiatives on learning outcomes.

## **CONCLUSION**

Rural–urban digital inequality significantly influences children’s learning outcomes by shaping access, engagement, and academic performance. The study demonstrates that disparities in digital infrastructure, socio-economic background, and digital literacy contribute to uneven educational attainment. Digital transformation in education holds immense potential to enhance quality and accessibility. However, without deliberate measures to ensure equitable access, technology may reinforce existing inequalities. Bridging the digital divide requires coordinated efforts involving infrastructure development, capacity building, and

inclusive policy implementation. Ensuring equitable digital access is fundamental to achieving sustainable educational development and fostering equal learning opportunities for all children.

## REFERENCES

1. ASER Centre. (2021). Annual status of education report (Rural) 2021: Wave 2. ASER Centre.
2. Castells, M. (2010). The rise of the network society (2nd ed.). Wiley-Blackwell.
3. Government of India. (2020). National education policy 2020. Ministry of Education.
4. Hargittai, E. (2010). Digital na(t)ives? Variation in internet skills and uses among members of the “net generation.” *Sociological Inquiry*, 80(1), 92–113.
5. Ministry of Education. (2021). Unified district information system for education plus (UDISE+) report 2020–21. Government of India.
6. National Council of Educational Research and Training. (2021). Alternative academic calendar guidelines. NCERT.
7. OECD. (2020). Learning remotely when schools close: How well are students and schools prepared? OECD Publishing.
8. Selwyn, N. (2016). Education and technology: Key issues and debates. Bloomsbury.
9. Telecom Regulatory Authority of India. (2022). The Indian telecom services performance indicators. TRAI.
10. UNESCO. (2021). Education in a post-COVID world: Nine ideas for public action. UNESCO.
11. UNICEF India. (2021). Digital learning and equity in India: Challenges and opportunities. UNICEF.
12. Van Dijk, J. (2020). The digital divide. Polity Press.
13. World Bank. (2020). Remote learning during COVID-19: Lessons from today, principles for tomorrow. World Bank.



## **HOLISTIC DEVELOPMENT OF CHILDREN WITH SPECIAL NEEDS THROUGH INCLUSIVE EDUCATION UNDER NEP 2020**

**Ms. Sujata Kumari**

Assistant Professor, Shamsul Haq Memorial Teacher's Training College,  
Ambona, Binod Bihari Mahto Koyalanchal University Dhanbad, Jharkhand

### **ABSTRACT**

Inclusive education has become a key priority in India's educational reform, especially with the rollout of the National Education Policy 2020, which aims to ensure equitable, accessible, and high-quality learning for all children. Going beyond just physical inclusion, the policy promotes meaningful participation of children with special needs (CWSN) in mainstream classrooms through flexible curricula, Universal Design for Learning (UDL), personalised educational plans, assistive technologies, and ongoing teacher training. It connects inclusive practices to constitutional principles of equality and social justice, emphasising a rights-based approach to education.

This paper explores how NEP 2020's inclusive education fosters the overall development of children with special needs, including academic success, social integration, emotional health, and life skills. Using a thematic synthesis of current research, policy documents, and reports, the study highlights key factors for successful inclusion. These include strong leadership, a collaborative school environment, available resource rooms, ICT-based assistive tools, differentiated teaching methods, and continuous professional development.

Results show that although NEP 2020 offers a progressive, comprehensive framework, achieving inclusive goals largely depends on effective on-the-ground implementation. Challenges such as infrastructural limitations, lack of specialized training, large class sizes, attitudinal barriers, and socio-cultural stigmas remain barriers, especially in rural and under-resourced areas. The study concludes that inclusive education can promote holistic development when supported by coordinated systems, coherent policies, community involvement, and strong monitoring, thereby advancing educational equity and strengthening India's social fabric.

### **KEYWORDS:**

Inclusive education, holistic development, children with special needs, educational equity, differentiated pedagogy

## INTRODUCTION

Education systems worldwide are increasingly recognising the importance of inclusion to promote fairness and social justice. Inclusive education is more than just integrating children with special needs into mainstream classrooms; it emphasises meaningful participation, accessibility, and equitable opportunities for growth. In India, this shift has been supported by legislative and policy reforms, culminating in the National Education Policy 2020 (NEP 2020). This policy highlights inclusive, equitable, and quality education as core objectives, acknowledging the diverse learning needs of children with special needs. It promotes flexible curricula, personalised support, assistive technologies, resource centers, and specialized teacher training. The policy aligns with constitutional principles and rights-based frameworks, aiming to eliminate participation barriers. Holistic development involves balanced growth across cognitive, emotional, social, physical, and ethical domains. For children with special needs, this includes academic achievement, self-confidence, peer relationships, adaptive skills, and independence. Inclusive classrooms encourage collaborative learning and social interactions essential for overall development. However, translating these policy measures into actual classrooms is complex, due to variations in infrastructure, teacher preparedness, administrative support, and cultural attitudes toward disability. This paper reviews how NEP 2020's inclusive education supports holistic development, summarising existing research and proposing a framework for future efforts. Beyond policies, creating inclusive education requires changing school culture to value diversity as a strength. Inclusion is an ethical commitment, not merely a teaching strategy, aimed at actively involving children with special needs as part of the learning community. Inclusive environments foster empathy, respect, and cooperation among all students.

NEP 2020 also promotes multidisciplinary and experiential learning, which benefits diverse learners. Flexible curricula, competency-based assessments, and a focus on literacy and numeracy support differentiated instruction. Assistive technologies and digital tools improve accessibility, enabling personalised learning experiences. Still, successful inclusion depends on coordinated efforts across school leadership, teacher training, and stakeholder collaboration.

In India, disparities between urban and rural schools, funding issues, and limited specialized personnel make implementation more challenging. Overcoming these barriers is crucial for achieving meaningful holistic outcomes that go beyond academics to include social participation, emotional well-being, adaptive skills, and self-advocacy. Thus, understanding inclusive

education under NEP 2020 requires an integrated approach that links policy, pedagogy, infrastructure, and cultural factors. By examining these interconnected aspects, this study aims to demonstrate how inclusive education can move beyond rhetoric to become a transformative force for the comprehensive development of children with special needs.

## **REVIEW OF RELATED LITERATURE**

The global conversation on inclusive education has gained momentum through international frameworks advocating for 'education for all.' Research shows that inclusive schooling improves not only academic results but also social integration and emotional resilience. Studies highlight the significance of differentiated instruction and Universal Design for Learning in accommodating diverse learners.

In India, inclusive education has developed via policies focused on mainstreaming children with disabilities. Empirical evidence suggests that inclusive environments foster peer acceptance and collaborative skills, aiding social and emotional development. However, infrastructure shortcomings and insufficient teacher training often hinder effective implementation.

Scholars point out that teachers' attitudes and skills are crucial to the success of inclusive education. Professional development focusing on inclusive pedagogy, adaptive assessment, and classroom management is vital. The availability of assistive devices and resource rooms also greatly supports participation and academic achievement.

Recent literature on NEP 2020 highlights its progressive stance toward multidisciplinary and inclusive education. The policy advocates experiential learning, flexibility, and skill-based methods, which benefit children with diverse needs. Still, systematic evaluation of its real-world impact is limited. This paper aims to fill that gap by analysing themes related to policy alignment, teaching strategies, infrastructure, and overall outcomes.

## **RESEARCH GAP**

Although policies are well-defined, there is limited empirical evidence linking inclusive education practices under NEP 2020 to tangible holistic development outcomes. Most research focuses solely on academic achievement, neglecting social, emotional, and life skills. Systematic, school-based studies are necessary to explore how contextual factors influence inclusive implementation. Future research should use mixed-method approaches to test and develop the conceptual framework introduced in this paper.

## **CONCEPTUAL FRAMEWORK**

The study draws on the Social Model of Disability and the Inclusive Education Framework. The Social Model emphasises that disability arises from environmental and systemic barriers rather than individual impairments. Inclusive education strives to remove these barriers by adapting curricula, teaching methods, and assessment strategies. The proposed conceptual framework considers inclusive education practices under NEP 2020 as the independent variable, including differentiated instruction, teacher training, assistive technologies, accessible infrastructure, and personalised learning plans. Holistic development is the dependent variable, assessed across four domains: academic success, social integration, emotional health, and life skills. Factors such as teacher skills, parental participation, school leadership, and socio-economic conditions influence how inclusive practices impact developmental outcomes. The framework suggests that effective and sustained implementation of inclusive strategies results in comprehensive, multidimensional growth. This study presents a structured model linking inclusive education practices aligned with the National Education Policy 2020 to the holistic development of children with special needs.

Inclusive Education Practices serve as the independent variable, encompassing differentiated instruction, flexible curricula, Individualised Education Plans (IEPs), assistive technologies, resource room support, and ongoing teacher training. These aim to promote meaningful participation and equitable learning in mainstream classrooms.

The success of these practices depends on mediating factors such as teacher competence and attitudes, school leadership, institutional commitment, accessible infrastructure, parental involvement, and socio-economic context. These elements either facilitate or hinder the consistent implementation of inclusive education.

Holistic Development is the dependent variable, conceptualised across four interconnected areas: academic achievement, social integration, emotional well-being, and life skills development. The model suggests that systematic implementation of inclusive practices, supported by enabling mediators, fosters balanced cognitive, social, emotional, and functional growth. This framework offers a clear analytical structure for evaluating inclusive education outcomes and provides a basis for future empirical studies within the Indian educational context.

**THEMATIC CODING FRAMEWORK**---A thematic synthesis of literature identified five key themes that describe how inclusive education functions under NEP 2020 and its link to the overall development of children with special needs. Each theme is detailed below:

1. **Policy Alignment and Institutional Commitment:** This theme assesses how well schools adopt and implement the inclusive measures outlined in NEP 2020. It covers leadership, stakeholder awareness, and the integration of inclusive goals into school plans. Institutional commitment is demonstrated through careful planning, resource allocation, and regular monitoring to ensure that inclusive practices are genuinely enacted rather than symbolic.
2. **Inclusive Pedagogical Practices:** Inclusive pedagogy involves modifying teaching methods to meet diverse learning needs in a shared classroom. It includes differentiated instruction, flexible curricula, varied assessment methods, and collaborative learning. Effective practices promote active participation by children with special needs, minimise academic barriers, and encourage fair engagement in classroom activities.
3. **Teacher Preparedness:** This refers to the skills, attitudes, and competencies teachers need for inclusive classrooms. It includes both pre-service and in-service training on special education strategies, classroom adjustments, and assistive technologies. Teachers' positive attitudes and confidence are crucial for the social acceptance, academic progress, and emotional well-being of children with special needs.
4. **Infrastructure and Support Systems:** This theme emphasises the need for accessible physical environments and support mechanisms. Barrier-free infrastructure, resource rooms, assistive devices, and the presence of special educators foster participation. Technological tools and personalised learning plans further facilitate inclusive implementation and promote holistic growth.
5. **Holistic Development Outcomes:** Holistic development goes beyond academics to include social integration, emotional strength, and life skills. Inclusive classrooms enhance peer interaction, empathy, communication, and self-confidence among children with special needs. When properly applied, these practices support balanced cognitive, social, and emotional growth in line with NEP 2020's learner-centred approach.

## **METHODOLOGY**

This paper uses a qualitative review and thematic synthesis approach. It examines policy documents, peer-reviewed journal articles, and institutional reports to detect common patterns and

ideas. The analysis involves a systematic coding process: reviewing texts, creating initial codes, grouping these codes into categories, and then synthesising them into broader themes.

This method allows for blending various academic viewpoints and forming a unified conceptual model. While not grounded in original empirical data, the analysis offers a solid theoretical basis for future quantitative or mixed-method studies.

### **LIMITATIONS**

This study conducts a qualitative review and thematic synthesis of policy documents, institutional reports, and scholarly literature, without collecting primary data from schools, teachers, or children with special needs. Consequently, the findings are conceptual and interpretative rather than statistically validated. The analysis relies on secondary sources published shortly after the National Education Policy 2020's introduction, limiting insights into long-term implementation effects. Variations in regional infrastructure, socio-economic conditions, and administrative capacity across Indian states may also restrict the applicability of the conclusions. Moreover, indicators of holistic development such as emotional resilience, adaptive behaviour, and life skills are discussed in theory but are not measured with specific instruments. Future empirical and mixed-method research is needed to validate and expand upon this conceptual framework.

### **FINDINGS AND DISCUSSION**

The synthesis indicates that inclusive education under NEP 2020 has significant transformative potential but encounters challenges in implementation. Schools showing proactive institutional commitment tend to achieve better outcomes in student engagement and peer integration. Differentiated pedagogy improves academic success by addressing diverse learning styles and abilities. Teacher preparedness is a critical factor. Educators with inclusive training display greater confidence in managing diverse classrooms and using adaptive methods. In contrast, untrained teachers often rely on traditional approaches that may exclude children with special needs.

Infrastructure plays a crucial role in participation. Barrier-free physical access, assistive devices, and resource centers foster supportive environments. The integration of technology, especially digital tools, broadens access to personalised learning resources.

**RECOMMENDATIONS**---For inclusive education under the National Education Policy 2020 to genuinely foster holistic development among children with special needs (CWSN), a coordinated, multi-tiered strategy is essential.

At the **policy level**, inclusive education should move beyond enrollment-based indicators toward measurable developmental outcomes encompassing academic growth, social participation, emotional well-being, and life skills. Dedicated funding streams must prioritise barrier-free infrastructure, assistive technologies, and specialised human resources, particularly in rural and under-resourced regions. A structured national monitoring framework linking inclusive practices with holistic development indicators would enhance accountability and ensure consistency across states.

At the **institutional level**, schools should institutionalise inclusive practices through annual accessibility audits, functional resource rooms, and the systematic implementation of Individualised Education Plans (IEPs). School leadership must embed inclusive goals within development plans and foster collaborative cultures that encourage peer support and co-teaching models. The integration of digital assistive tools and competency-based assessment methods aligned with NEP 2020 can further strengthen participation and personalised learning.

Regarding **teacher education and professional development**, pre-service and in-service programmes must incorporate mandatory modules on inclusive pedagogy, differentiated instruction, classroom adaptations, and socio-emotional learning. Continuous professional development should include mentoring, reflective practice, and action research focused on inclusive strategies. Teacher educators must also be equipped to model inclusive methodologies within higher education institutions.

## **IMPLICATIONS**

The analysis indicates that successfully implementing NEP 2020 depends on ongoing teacher training programs emphasising inclusive teaching methods and flexible assessment strategies. Schools must regularly perform accessibility audits to meet inclusive standards. Prioritising the integration of assistive technologies is crucial. Policymakers should establish monitoring systems that connect inclusive practices with overall developmental indicators. Collaboration among educators, parents, and community groups can help create supportive environments. Investing in inclusive infrastructure and professional development is vital to turning policy goals into real, measurable results.

## **CONCLUSION**

Inclusive education under NEP 2020 marks a significant step forward in India's dedication to equitable schooling. By focusing on accessibility, adaptability, and learner-focused

strategies, the policy offers opportunities to support the overall development of children with special needs. Nonetheless, achieving this vision relies on proper implementation, teacher training, infrastructural support, and community involvement.

Holistic development goes beyond academics to include emotional strength, social integration, and essential life skills. Inclusive education can nurture these areas when backed by systemic coordination and ongoing institutional efforts. The framework outlined in this paper offers a structured approach for future research and policy review. Ultimately, providing inclusive and holistic education is not just a policy goal but a societal duty to foster fair and compassionate learning environments.

#### Reference List

1. Kasinathan, O., Shanmugapriya, M., & Manikandan, M. (2023). Inclusive education in NEP 2020. *Shanlax International Journal of Arts, Science and Humanities*, 11(S1), 32–35. <https://doi.org/10.34293/sijash.v11iS1i2-Nov.7312>
2. Ministry of Education, Government of India. (2020). *National Education Policy 2020*. <https://www.education.gov.in>
3. Ministry of Education, Government of India. (2021). *Holistic education through integration of skilling, industry connect and employability*. <https://www.education.gov.in>
4. Rasool, S., & Rasool, S. (2024). NEP 2020 and inclusive education in India. *International Journal for Research in Applied Science and Engineering Technology*. <https://doi.org/10.22214/ijraset.2024.57940>



## JUDICIAL ACTIVISM AND THE SEPARATION OF POWERS UNDER THE INDIAN CONSTITUTION

**Dr. Alka Nanda,**

Associate Professor,

Department of Law, HRIT University, Ghaziabad

E-mail: [bansalalka29@gmail.com](mailto:bansalalka29@gmail.com)

### ABSTRACT

The doctrine of separation of powers forms a foundational pillar of the Indian constitutional framework, distributing sovereign authority among the Legislature, Executive, and Judiciary. However, the evolution of judicial activism in India has progressively challenged the traditional boundaries of this tripartite structure. The Indian judiciary, particularly the Supreme Court, has through activist interpretation expanded its functional domain beyond adjudication into policy formulation and executive oversight. This paper seeks to analyse the constitutional legitimacy of judicial activism and examine its impact on the separation of powers doctrine. The study adopts a doctrinal research methodology, relying on constitutional provisions, landmark judgments, legislative enactments, and scholarly commentary. An analysis of landmark cases reveals that judicial activism, while necessary for constitutional protection, often risks encroaching upon the domain reserved for co-equal branches. A balanced approach, grounded in constitutional propriety and institutional restraint, is essential to preserve democratic governance while ensuring judicial accountability. The judiciary must act as a guardian of rights without substituting itself for elected organs of government.

**KEYWORDS:** Judicial Activism, Separation of Powers, Constitutional Interpretation, Public Interest Litigation, Judicial Overreach

### I. INTRODUCTION

The Constitution of India, 1950, though it does not explicitly use the phrase "separation of powers," embodies its spirit through a carefully calibrated distribution of governmental functions among three distinct organs the Legislature, the Executive, and the Judiciary.<sup>1</sup> The constitutional scheme vests legislative power in Parliament and State Legislatures under Articles 245–246, executive power in the President and Governors under Articles 53 and 154, and judicial power in

---

<sup>1</sup> Constitution of India, 1950, Preamble; Arts. 52–53, 79, 124.

the Supreme Court and subordinate courts under Articles 124–147 and 214–231.<sup>2</sup> Article 50 further directs the State to take steps to separate the judiciary from the executive in public services.<sup>3</sup>

In this constitutional setting, **judicial activism** refers to the proactive role assumed by courts in interpreting and enforcing constitutional rights and values, often venturing beyond conventional adjudication to direct executive action or fill legislative voids. Beginning with the creative expansion of Article 21 in *Maneka Gandhi v. Union of India*,<sup>4</sup> and accelerating through the Public Interest Litigation (PIL) jurisdiction inaugurated in *Hussainara Khatoon v. State of Bihar*,<sup>5</sup> the Indian judiciary has demonstrated a remarkable willingness to intervene in matters of governance, environmental protection, criminal justice reform, and electoral integrity. This paper examines these questions through a doctrinal lens, analysing the constitutional foundations of both doctrines, charting the evolution of judicial activism through landmark judgments, and critically assessing the fine but crucial line between constitutional activism and institutional overreach. It argues that while judicial activism has been an indispensable instrument for safeguarding fundamental rights in India, it must be exercised within the bounds of constitutional propriety to sustain the integrity of the separation of powers.

## II. OBJECTIVES

1. To examine the constitutional framework of the separation of powers doctrine in India and analyse how judicial activism has evolved to challenge, complement, or transgress its boundaries through landmark Supreme Court judgments and constitutional provisions.
2. To critically evaluate whether judicial activism in India has remained within the permissible limits of constitutional interpretation or has transgressed into judicial overreach, and to suggest a principled approach for maintaining institutional balance.

## III. SEPARATION OF POWERS: CONSTITUTIONAL FRAMEWORK IN INDIA

Unlike the United States Constitution which rigidly separates governmental organs, or the United Kingdom's constitutional tradition of parliamentary supremacy, the Indian Constitution adopts a

---

<sup>2</sup> Constitution of India, 1950, Arts. 245–246, 53, 154, 124.

<sup>3</sup> Constitution of India, 1950, Art. 50.

<sup>4</sup> *Maneka Gandhi v. Union of India*, (1978) 1 SCC 248 (SC).

<sup>5</sup> *Hussainara Khatoon v. State of Bihar*, (1980) 1 SCC 81 (SC).

flexible separation of powers one that assigns primary functions to each organ while permitting limited overlaps and inter-branch checks.<sup>6</sup> The constitutional allocation is as follows: Parliament exercises legislative sovereignty under Articles 245–246 read with the Seventh Schedule; the President exercises executive power under Article 53, though it is exercised on the aid and advice of the Council of Ministers under Article 74; and the Supreme Court exercises the power of judicial review under Articles 13, 32, 136, and 142. The Supreme Court in *Ram Jawaya Kapur v. State of Punjab*<sup>7</sup> held that the Indian Constitution has not recognised the doctrine of separation of powers in its absolute rigidity, but the essential functions of each organ are clearly demarcated and cannot be encroached upon. Similarly, in *Indira Nehru Gandhi v. Raj Narain*,<sup>8</sup> Justice Khanna in his concurring opinion held that separation of powers is a part of the basic structure of the Constitution, meaning no constitutional amendment can destroy or abrogate this principle.

The Constitution further institutionalises judicial independence a prerequisite for effective separation through security of tenure of judges (Articles 124(4), 217(1)), salaries charged to the Consolidated Fund of India (Article 112(3)(d)), and prohibitions on discussion of judicial conduct in Parliament (Article 121) and State Legislatures.<sup>9</sup> The doctrine of checks and balances also operates in India: Parliament can impeach judges (Article 124(4)), the President appoints judges (Article 124(2)), and courts review the constitutional validity of legislation (Article 13) and executive actions (Article 32, 226). This systemic interdependence ensures that no branch operates in absolute isolation.

#### **IV. JUDICIAL ACTIVISM: MEANING, ORIGIN, AND EVOLUTION IN INDIA**

Judicial activism broadly denotes a philosophy of judicial decision-making in which judges depart from strict textual or precedential interpretation to actively shape law in response to changing social, political, and economic realities. It stands in contrast to judicial restraint, where courts defer to the legislative and executive branches on policy matters.

The evolution of judicial activism in India can be traced through three broad phases:

---

<sup>6</sup> H.M. Seervai, *Constitutional Law of India*, Vol. 1, 4th edn. (N.M. Tripathi, 1991), p. 189.

<sup>7</sup> *Ram Jawaya Kapur v. State of Punjab*, AIR 1955 SC 549.

<sup>8</sup> *Indira Nehru Gandhi v. Raj Narain*, 1975 Supp SCC 1 (SC).

<sup>9</sup> Constitution of India, 1950, Arts. 121, 196, 124(7), 220, 112(3)(d).

- **Phase I: Early Restraint (1950–1967):** The early Supreme Court adopted a positivist, text-bound approach. In *A.K. Gopalan v. State of Madras*,<sup>10</sup> the Court narrowly interpreted Article 21, holding that the "procedure established by law" meant any procedure prescribed by a validly enacted statute, regardless of its reasonableness. This approach was widely criticised for curtailing personal liberties and gave undue discretion to the legislature to define the scope of fundamental rights.
- **Phase II: Transformative Interpretation (1967–1980):** The landmark turning point came with *R.C. Cooper v. Union of India*<sup>11</sup> and was fully crystallised in *Maneka Gandhi v. Union of India*,<sup>12</sup> where a seven-judge bench overruled *Gopalan* and held that the "procedure established by law" under Article 21 must be fair, just, and reasonable. This judgment fundamentally expanded the scope of fundamental rights and signalled the Court's shift towards activist jurisprudence. Subsequently, in *Kesavananda Bharati v. State of Kerala*,<sup>13</sup> the Supreme Court, by a 7:6 majority, evolved the Basic Structure Doctrine, establishing the judiciary as the ultimate arbiter of constitutional limits even against constituent power.
- **Phase III: PIL Era and Beyond (1980–Present):** The most dramatic expression of judicial activism came through the development of Public Interest Litigation. In *S.P. Gupta v. Union of India*,<sup>14</sup> Justice Bhagwati articulated the concept of epistolary jurisdiction, allowing letters addressed to the Court to be treated as writ petitions, thus democratising access to justice. This era witnessed the Court issuing directions on bonded labour, prison conditions, child labour, environmental pollution, judicial appointments, and electoral reforms areas traditionally reserved for the executive and legislature.

The Court's power under Article 142 to pass any order necessary for doing "complete justice" in any cause or matter became a potent instrument of activism. In *Union Carbide Corporation v. Union of India*,<sup>15</sup> the Supreme Court exercised Article 142 to settle the Bhopal gas tragedy claims, even setting aside earlier compromise orders. This expansive use of Article 142 demonstrated the

---

<sup>10</sup> *A.K. Gopalan v. State of Madras*, AIR 1950 SC 27.

<sup>11</sup> *R.C. Cooper v. Union of India*, (1970) 1 SCC 248 (SC).

<sup>12</sup> *Maneka Gandhi v. Union of India*, supra note 5.

<sup>13</sup> *Kesavananda Bharati v. State of Kerala*, supra note 4.

<sup>14</sup> *S.P. Gupta v. Union of India*, AIR 1982 SC 149 (First Judges Case).

<sup>15</sup> *Union Carbide Corporation v. Union of India*, (1991) 4 SCC 584 (SC).

judiciary's willingness to override both executive and legislative decisions in the pursuit of justice.

## V. JUDICIAL ACTIVISM vs. JUDICIAL OVERREACH: A FINE LINE

While judicial activism has been praised as an essential corrective mechanism in a democracy where the executive is often unresponsive and the legislature captured by majoritarian interests, critics argue that it frequently crosses into judicial overreach an illegitimate usurpation of functions constitutionally assigned to co-equal branches. The distinction is subtle but critical. Judicial activism that enforces constitutional rights, fills genuine legal voids, or checks manifest executive arbitrariness falls within the legitimate judicial domain. However, when courts begin to formulate policy, monitor ongoing executive administration, substitute their judgment for that of expert administrative bodies, or create new legislative norms without constitutional warrant, they transgress the boundaries of the separation of powers.

The Second Judges Case *Supreme Court Advocates-on-Record Association v. Union of India*<sup>16</sup> strikingly illustrates this tension. The Supreme Court, in a nine-judge bench decision, invented the "collegium system" a mechanism for judicial appointments involving the Chief Justice and senior judges despite the plain text of Article 124(2) vesting the appointment power in the President in consultation with the Chief Justice. Critics argued this amounted to judicial amendment of the Constitution. The Third Judges Case (*Presidential Reference*)<sup>17</sup> further entrenched the collegium, and the NJAC Judgment *Supreme Court Advocates-on-Record Association v. Union of India* (2016)<sup>18</sup> struck down the 99th Constitutional Amendment and the National Judicial Appointments Commission Act, 2014 a law passed by Parliament with overwhelming majority on the ground that it violated judicial independence as part of the basic structure. This decision was criticised as the apex of judicial self-entrenchment. Similarly, in *Vineet Narain v. Union of India*,<sup>19</sup> the Supreme Court under Article 32 read with Article 142 monitored CBI investigations into the Hawala scandal and issued binding directions to the executive regarding investigative autonomy a matter traditionally within executive prerogative. While the objectives were salutary, the methodology raised separation of powers concerns. The Supreme Court has itself acknowledged

---

<sup>16</sup> *Supreme Court Advocates-on-Record Assn. v. Union of India*, (1993) 4 SCC 441 (Second Judges Case).

<sup>17</sup> *In Re: Special Reference No. 1 of 1998*, (1998) 7 SCC 739 (Third Judges Case)

<sup>18</sup> *Supreme Court Advocates-on-Record Assn. v. Union of India*, (2016) 5 SCC 1 (NJAC Judgment).

<sup>19</sup> *Vineet Narain v. Union of India*, (1998) 1 SCC 226 (SC).

the need for restraint. In *State of U.P. v. Johri Mal*,<sup>20</sup> the Court observed that the judiciary must not act as a super-legislature or a super-executive. In *Dr. B. Singh v. Union of India*,<sup>21</sup> the Court cautioned against PILs that had become tools of publicity or personal grudge, noting that courts could not micro-manage executive functions.

## **VI. LANDMARK CASES: JUDICIAL ACTIVISM AND SEPARATION OF POWERS: AN ANALYTICAL SURVEY**

### **Vishaka v. State of Rajasthan (1997)**

In the absence of legislative enactment on sexual harassment at workplace, the Supreme Court in *Vishaka v. State of Rajasthan*<sup>22</sup> issued comprehensive guidelines enforceable as law under Article 141 until Parliament enacted legislation. The Court relied on CEDAW (Convention on the Elimination of All Forms of Discrimination against Women) and Articles 14, 19, and 21 of the Constitution. While universally applauded for protecting women's rights, the judgment was textbook judicial legislation — the Court's guidelines operated as statutory law for over sixteen years until the enactment of the Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013.

### **M.C. Mehta v. Union of India (Environmental Cases)**

In a series of landmark verdicts, the Supreme Court developed the polluter pays principle and the precautionary principle as part of Indian environmental law.<sup>23</sup> The Court issued directions for the closure of polluting industries near the Taj Mahal, relocation of hazardous industries from Delhi, and conversion of public transport to CNG all executive and policy-level decisions. The Court created the Legal Services Authority to implement its orders and appointed monitoring committees, effectively creating parallel administrative structures.

### **Mohd. Ahmed Khan v. Shah Bano Begum (1985)**

---

<sup>20</sup> *State of U.P. v. Johri Mal*, (2004) 4 SCC 714 (SC).

<sup>21</sup> *Dr. B. Singh v. Union of India*, (2004) 3 SCC 363 (SC).

<sup>22</sup> *Vishaka v. State of Rajasthan*, (1997) 6 SCC 241 (SC); Sexual Harassment of Women at Workplace (Prevention, Prohibition and Redressal) Act, 2013 (Act No. 14 of 2013).

<sup>23</sup> *M.C. Mehta v. Union of India*, (1987) 1 SCC 395; Environment Protection Act, 1986 (Act No. 29 of 1986).

In *Shah Bano*,<sup>24</sup> the Supreme Court held that a Muslim woman was entitled to maintenance beyond the iddat period under Section 125 CrPC, effectively ruling on a matter with profound implications for Muslim personal law. The decision generated significant political controversy and led to the enactment of the Muslim Women (Protection of Rights on Divorce) Act, 1986 a legislative counter to a judicial decision. This episode exemplifies the complex interplay between judicial activism and parliamentary response.

**Lily Thomas v. Union of India (2013)** In *Lily Thomas v. Union of India*,<sup>25</sup> the Supreme Court struck down Section 8(4) of the Representation of the People Act, 1951, which permitted sitting legislators convicted of offences to continue in office pending appeal. The Court held this provision violated Articles 14 and 102(1)(e) of the Constitution. The decision immediately disqualified convicted sitting members and was widely regarded as an instance of judicial activism serving democratic values removing corruption from elected offices.

**I.R. Coelho v. State of Tamil Nadu (2007)** In *I.R. Coelho*,<sup>26</sup> a nine-judge Constitution Bench held that laws inserted in the Ninth Schedule after April 24, 1973 (the date of *Kesavananda Bharati*) could be subjected to judicial review if they violated the basic structure of the Constitution. This ruling effectively curtailed parliamentary immunity under Article 31-B and expanded judicial review a significant assertion of judicial supremacy over constituent power.

## VII. PUBLIC INTEREST LITIGATION AS AN INSTRUMENT OF JUDICIAL ACTIVISM

---Public Interest Litigation is the most institutionalised expression of judicial activism in India. Introduced through *Hussainara Khatoon v. State of Bihar*<sup>27</sup> and *S.P. Gupta v. Union of India*,<sup>28</sup> PIL relaxed the traditional rule of locus standi that only an aggrieved party may approach the court to allow any public-spirited citizen to approach the Supreme Court under Article 32 or High Courts under Article 226 on behalf of disadvantaged or marginalised groups who cannot access justice themselves. The PIL jurisdiction has produced transformative outcomes: directions for release of undertrial prisoners, abolition of bonded labour under the

---

<sup>24</sup> *Mohd. Ahmed Khan v. Shah Bano Begum*, (1985) 2 SCC 556 (SC); Muslim Women (Protection of Rights on Divorce) Act, 1986 (Act No. 25 of 1986).

<sup>25</sup> *Lily Thomas v. Union of India*, (2013) 7 SCC 653 (SC); Representation of the People Act, 1951 (Act No. 43 of 1951), S. 8(4).

<sup>26</sup> *I.R. Coelho v. State of Tamil Nadu*, (2007) 2 SCC 1 (SC).

<sup>27</sup> *Hussainara Khatoon v. State of Bihar*, supra note 6.

<sup>28</sup> *S.P. Gupta v. Union of India*, supra note 15.

Bonded Labour System (Abolition) Act, 1976,<sup>29</sup> framing of guidelines on police reforms in *Prakash Singh v. Union of India*,<sup>30</sup> electoral reforms including disclosure of criminal antecedents and assets by candidates in *Union of India v. Association for Democratic Reforms*,<sup>31</sup> and environmental protections. However, PIL has equally attracted criticism. The Supreme Court and High Courts have sometimes used PIL to enter policy domains such as directing allocation of natural resources, ordering construction of infrastructure, or monitoring legislative processes that may have no discernible constitutional foundation beyond a broad reading of Article 21. The Law Commission of India in its 201st Report (2006) recommended legislative regulation of PIL to prevent its abuse.<sup>32</sup> PIL jurisdiction also operates without adversarial procedural safeguards courts often rely on *amicus curiae*, court commissioners, and self-appointed monitors rather than formal evidentiary standards raising rule of law concerns.

## VIII. CRITICAL ANALYSIS: BALANCING ACTIVISM WITH CONSTITUTIONAL PROPRIETY

The debate between judicial activism and separation of powers ultimately reflects a deeper question about the nature of constitutionalism in India. India's constitutional experience differs from classical Western models in significant ways: a massive population experiencing widespread poverty, illiteracy, and executive dysfunction; a Constitution with directive principles that impose positive obligations on the state; and a historical context where fundamental rights were gravely threatened during the Emergency (1975–77) when the Supreme Court's capitulation in *ADM Jabalpur v. Shivkant Shukla*<sup>33</sup> allowed executive authoritarianism to prevail. In this context, judicial activism has served as an indispensable corrective particularly for groups who lack effective political representation. The expansion of Article 21 to include the right to livelihood, education, health, clean environment, and dignity has transformed the Constitution into a living document that responds to social reality. However, institutional legitimacy demands that judicial activism be principled and bounded. The following concerns merit serious consideration:

---

<sup>29</sup> Bonded Labour System (Abolition) Act, 1976 (Act No. 19 of 1976); *Bandhua Mukti Morcha v. Union of India*, (1984) 3 SCC 161 (SC).

<sup>30</sup> *Prakash Singh v. Union of India*, (2006) 8 SCC 1 (SC).

<sup>31</sup> *Union of India v. Association for Democratic Reforms*, (2002) 5 SCC 294 (SC).

<sup>32</sup> Law Commission of India, Report No. 228, *Need for Legislation Regulating Public Interest Litigation* (2009).

<sup>33</sup> *ADM Jabalpur v. Shivkant Shukla*, AIR 1976 SC 1207 (Habeas Corpus Case).

**First**, the judiciary lacks electoral accountability. When courts make policy choices on infrastructure, resource allocation, or social welfare they exercise governmental power without democratic mandate. The basic structure doctrine itself was a judge-made norm, not one expressly found in the Constitution.

**Second**, judicial orders requiring ongoing executive compliance such as monitoring committees for environmental compliance or police reforms create a parallel bureaucracy answerable to courts rather than the elected executive. This distorts constitutional responsibility.

**Third**, in matters like the collegium system, judicial activism operates to immunise the judiciary itself from accountability the most problematic form of judicial self-dealing. The NJAC judgment, which struck down a constitutional amendment passed by two-thirds majority in Parliament and ratified by twenty states, remains constitutionally controversial.

**Fourth**, activist courts risk under-enforcement of separation of powers as a constitutional principle. Each branch must be restrained not merely by its own judgment of propriety but by the constitutional architecture that distributes power among them.

## **IX. CONCLUSION**

Judicial activism and the separation of powers are not inherently antagonistic in the Indian constitutional framework. The Constitution itself, through its expanded judicial review mechanisms, its directive principles, and the broad sweep of Article 21, contemplates a judiciary that goes beyond mere dispute resolution to function as a constitutional guardian. The development of the basic structure doctrine, the expansion of fundamental rights, and the PIL jurisprudence represent genuine constitutional achievements that have protected millions of vulnerable citizens. Yet the legitimacy of judicial activism ultimately rests on its fidelity to constitutional authority. When courts interpret the law to enforce rights, they honour the separation of powers; when they substitute judicial preference for democratic choice, they subvert it. The challenge for the Indian judiciary in the twenty-first century is to exercise the wisdom to distinguish between these two roles to remain, as Dr. B.R. Ambedkar envisioned, a sentinel on the qui vive for fundamental rights, without becoming a rival government unto itself. The balance between an activist judiciary and a functioning democracy is delicate, but it is not impossible. What is required is not less judicial engagement but more constitutionally disciplined judicial

engagement one that is transparent, principled, and respectful of the democratic foundations upon which the rule of law ultimately rests.

## References

1. Austin, G. (1999). *Working a democratic constitution: The Indian experience*. Oxford University Press.
2. Baxi, U. (1985). Taking suffering seriously: Social action litigation in the Supreme Court of India. *Third World Legal Studies*, 4(1), 107–132.
3. Chandrachud, A. (2017). *Republic of rhetoric: Free speech and the Constitution of India*. Penguin Random House India.
4. De, R. (2018). *A people's constitution: The everyday life of law in the Indian Republic*. Princeton University Press.
5. Jain, M. P. (2014). *Indian constitutional law* (7th ed.). LexisNexis.
6. Kashyap, S. C. (2016). *Our Constitution: An introduction to India's Constitution and constitutional law*. National Book Trust.
7. Krishnaswamy, S. (2009). *Democracy and constitutionalism in India: A study of the basic structure doctrine*. Oxford University Press.
8. Sathe, S. P. (2002). *Judicial activism in India: Transgressing borders and enforcing limits*. Oxford University Press.
9. Seervai, H. M. (1996). *Constitutional law of India* (4th ed.). Universal Law Publishing.
10. Shankar, S., & Mehta, P. B. (2008). Courts and socio-economic rights in India. In V. Gauri & D. M. Brinks (Eds.), *Courting social justice: Judicial enforcement of social and economic rights in the developing world* (pp. 146–182). Cambridge University Press.
11. Singh, M. P. (2013). Separation of powers and judicial activism in India. *Journal of the Indian Law Institute*, 55(3), 289–310.



## **Government Schemes, CSR Grants, and the role of NGOs in the Education of Poor and Underprivileged Children**

**Dr. Ila Tiwari**

Assistant Professor

Shri Lal Bahadur Shastri Degree College , Gonda (U.P.)

Education is a movement from darkness to light. Without education, people get caught in the intergenerational cycles of poverty and backwardness. Providing quality education to all children of India should be the top priority of both the State and Central governments. And thus, the different departments of the Government of India often support charities to bring more and more children under the ambit of their education initiatives. Education is a natural right entitled to any individual and a critical social and economic development, therefore, an article of trade in financial positions, but it varies from another service because it is a community feature. Government schemes, CSR grants, and NGOs collaborate to educate underprivileged children in India, aiming to overcome poverty and inequity. Initiatives like Samagra Shiksha and Beti Bachao Beti Padhao are bolstered by corporate funding (40% of CSR goes to education) and NGO grassroots efforts, providing scholarships, digital infrastructure, teacher training, and bridge courses. NGOs bridge the gap by improving quality, access, and retention at the grassroots level. CSR grants provide necessary financial sustainability to NGO projects, aiming to improve school infrastructure, digital literacy, and holistic development. Key challenges include ensuring long-term sustainability, overcoming regulatory hurdles, and balancing formal education with vocational training to empower children from marginalized communities. This Article tries to explore the role of nongovernment organizations in education sector. Education that is necessary for character building thereby bringing out the physical, mental and spiritual culture of the human personality.

**Key Government Schemes for Underprivileged Education-** The Indian government has established the University Grants Commission (UGC) for promoting and accelerating the education system in India. Government has certainly taken measures to improve the quality of education for all the three stages, primary, secondary and higher. Here is the list of some of the great schemes initiated by Government of India to improve education in the country.

**Schemes for Primary Education** -The two major schemes for primary education are following.

1. Sarva ShikshaAbhiyan

## 2. Mid Day Meal

These two schemes targets mainly children coming from poor economic background. The schemes will help to bridge gaps between children coming from different socio economic structure.

### **Schemes for Secondary Education-**

1. Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan
2. National Scheme of Incentives to Girls for Secondary Education
3. Girls Hostel Scheme
4. Scheme of Vocational Education
5. Inclusive Education for Disabled at Secondary Stage
6. National Scholarships Secondary education schemes targets children falling under the age group of 14 –18.

### **Schemes for Higher Education -**

Objective of higher-educational schemes is to prepare students for the job market. Here are some of the important schemes for higher education.

1. All India Council for Technical Education Scholarships.
2. Scheme of Apprenticeship Training
3. Department of Science and Technology grants and fellowships
4. Scholarship Schemes for ST Students by Ministry of Tribal Affairs
5. Post-Doctoral Research Fellow (Scheme)
6. Empowerment of Persons with Disabilities - Schemes/Programmes
7. Sports Authority of India promotional schemes

**Government Schemes in Education:** Initiatives like Samagra Shiksha, Mid-Day Meal, and PM care for children provide the foundational infrastructure and legislative framework for universal education.

- ❖ **Sarva Shiksha Abhiyan-** Started in 2001, the Sarva Shiksha Abhiyan intends to ensure primary education for all children between the ages of 6 and 14. The scheme's main goals

include improving school infrastructure, raising educational standards, and bridging the gender and social gaps in children's education.

❖ **The National Program for Elementary Education of Girls (NPEGEL)-**

NPEGEL aims to ensure that the 'hardest-to-reach' females, particularly those not enrolled in school, receive education to bridge the gender gap in India's education and skill development sector. This initiative provides additional assistance to improve the education of females from underprivileged groups, such as Scheduled Tribes, Scheduled Castes, and minorities.

❖ **Beti Bachao, Beti Padhao-**

In addition to the Indian government's efforts to address the decreasing child sex ratio, the Beti Bachao, Beti Padhao program, started in 2015, seeks to empower girls through education. The program aims to ensure girls' education and engagement while transforming society's perceptions of them.

❖ **The National Secondary Education Incentives Program for Girls-**

Through this scheme, girls from Scheduled Castes and Scheduled Tribes are encouraged to enroll in secondary school. Additionally, girls who complete the eighth standard and begin secondary education are given cash incentives.

❖ **The Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan-**

This scheme started in 2009 and seeks to increase the quality and accessibility of secondary education for children from marginalised sections. The program aims to improve school infrastructure and provide secondary education to all residents within a reasonable commute.

❖ **CBSE Udaan Program-**

The CBSE Udaan initiative focuses on the low number of girls enrolled in esteemed engineering and technical schools. It helps female students from low-income families prepare for engineering admission examinations by offering them free online resources, lessons, and mentoring.

❖ **Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya-**

KGBV's mission is to give girls from underprivileged rural communities access to high-quality education. The program creates residential schools for upper primary students to guarantee that females have access to education in a secure and encouraging setting.

❖ **Sukanya Samridhi Yojana-**

Sukanya Samridhi Yojana is largely a savings program, although it also indirectly aids in girls' education. The initiative gives parents financial stability for their daughters' future educational needs by enabling them to save for their education and marriage. Through tackling monetary, social, and physical obstacles, these initiatives have achieved noteworthy progress in guaranteeing that all children, irrespective of their circumstances, have access to high-quality education.

- ❖ **Samagra Shiksha**- An integrated school education program covering pre-school to class 12, focusing on inclusive education.
- ❖ **Right to Education (RTE) Act**- Mandates free and compulsory education for children aged 6-14, ensuring access for weaker sections.
- ❖ **Mid-Day Meal Scheme (PM POSHAN)**- Boosts school enrollment and retention by providing nutritious meals.
- ❖ **Scholarships (Pre- & Post-Matric)**: Financial aid for SC/ST/OBC students and minorities.
- ❖ **Building blocks through government schemes in the poor and underprivileged children for education**
  - **Increased enrolment**: The education schemes and policies encourage more children to enroll in schools, helping them with finance-related obstacles. More children enrolling in schools encourage others to undertake primary education.
  - **Increased female education**: Most of the government's education policies focus on girls' education to ensure that India can soon bridge the gender gap and work towards achieving the SDG 5 goal – gender equality.
  - **Better reading and writing skills**: Data suggests that free education has helped improve literacy rates nationwide, with more youth from the marginalised sections undergoing skill training.
  - **Breaking the poverty cycle**: These education schemes in the rural hinterlands have helped break the generational poverty cycle, bringing home jobs and the security of a better future.
- ❖ **CSR Grants in the poor and underprivileged children for Education-**

Corporate Social Responsibility (CSR) has the potential to create profound and lasting impacts on society, particularly when directed towards education. Education is the foundation of personal and societal development, yet many students, especially those from underprivileged backgrounds, face significant barriers in accessing quality education. By directing CSR funds towards education, corporations can play a pivotal role in overcoming these barriers and fostering a more equitable and prosperous society.

- **Infrastructure Improvement:** Upgrading rural schools, providing computers, and setting up science labs.
- **Digital Learning:** Introducing smart classrooms and digital literacy programs.
- **Teacher Training:** Enhancing pedagogical skills and training for better learning outcomes.
- **Role of Education in Economic Growth-** The link between education and economic growth is well-documented. A well-educated workforce is more productive and capable of driving economic progress.

❖ **Why Education Deserves More Attention in CSR?**

Corporate Social Responsibility (CSR) has the potential to create profound and lasting impacts on society, particularly when directed towards education. Education is the foundation of personal and societal development, yet many students, especially those from underprivileged backgrounds, face significant barriers in accessing quality education. By directing CSR funds towards education, corporations can play a pivotal role in overcoming these barriers and fostering a more equitable and prosperous society.

**1. Bridging the Skill Gap-**The rapid pace of technological advancement has created a significant skill gap in the workforce. Many industries are struggling to find employees with the necessary skills to meet the demands of the digital age. By investing in education, particularly in STEM (Science, Technology, Engineering, and Mathematics) fields, businesses can help bridge this skill gap and ensure a steady pipeline of talent for the future.

**2. Promoting Social Equity-**Education is a powerful tool for promoting social equity. By providing access to quality education, companies can help level the playing field for disadvantaged communities, enabling them to participate fully in the economy. This not only benefits the individuals involved but also contributes to a more inclusive and stable society.

**3. Enhancing Corporate Reputation-**Companies that invest in education are seen as socially responsible and forward-thinking. This can enhance their reputation among consumers, employees, and investors, leading to increased brand loyalty and trust. Furthermore, education-focused CSR initiatives can help companies build stronger relationships with the communities in which they operate, leading to greater social licence to operate.

➤ **How Corporations Can Get Involved in Education-Focused CSR?-**

Given the immense potential of education-focused CSR, it is imperative that corporations reassess their CSR strategies and consider increasing their investment in education. Corporations have a variety of ways to get involved in education-focused CSR, each with the potential to make a significant impact. Here are some strategies that businesses can adopt:

- 1. Increase Scholarship Programs:** Companies can expand their scholarship offerings to cover a wider range of students, including those pursuing vocational training, higher education, and specialised skills development.
- 2. Support Digital Education:** In the digital age, access to technology is crucial for education. Companies can invest in digital education initiatives, such as providing tablets, laptops, and internet access to underserved communities. This not only enhances educational opportunities but also helps bridge the digital divide.
- 3. Collaborate with Educational Institutions:** Businesses can go for partnerships with schools, colleges, and universities to develop curricula that align with industry needs. These collaborations can help ensure that students are equipped with the skills and knowledge required in the workforce.
- 4. Invest in Teacher Training:** Teachers are the backbone of the education system. By investing in teacher training programs, companies can help improve the quality of education, ensuring that students receive the best possible instruction.
- 5. Promote Skill Development:** In addition to traditional education, companies can support skill development programs that prepare individuals for the workforce. This can include vocational training, apprenticeships, and on-the-job training opportunities.

❖ **Role of NGOs in the poor and Underprivileged Children in Education-**

NGOs focus on grassroots implementation, such as teaching in slums, providing hostel facilities, and addressing nutritional needs. NGOs act as essential intermediaries, bridging gaps in government implementation, particularly in rural and slum areas. Several Non-Governmental Organizations (NGOs) have been working at the grassroots level to extend

education to disadvantaged children in India. Since independence, Education NGOs have strived to strengthen the country's existing educational system and network so that more and more children have the opportunity to go and stay in school. The best thing about NGOs is that they work at the grassroots level, connecting with the masses and raising awareness about the importance of having a good education to get ahead in life.

- **Addressing the Educational Disparities-** The stark disparities in educational opportunities for poor children are a global challenge. In the heart of this issue, NGOs have emerged as champions for change. These organizations recognize the transformative power of education and focus their efforts on ensuring that every child, regardless of socio-economic background, has the chance to learn and grow.
- **Overcoming Financial Barriers** -One of the primary hurdles for poor families in providing education for their children is financial constraints. School fees, uniforms, and textbooks can pose insurmountable challenges. **NGOs working for education** intervene by providing financial assistance, scholarships, and educational materials. This financial support not only enables enrollment but also ensures that children have the necessary tools to thrive academically.
- **Creating Infrastructure and Access** -In many impoverished areas, the lack of proper educational infrastructure further compounds the challenges. NGOs step in to bridge this gap, constructing schools and classrooms where they are needed the most.
- **Tailored Educational Programs-** NGOs recognize that the needs of underprivileged children often extend beyond financial support. They design and implement tailored educational programs that address the unique challenges faced by these students. By catering to the specific needs of poor children, NGOs contribute to breaking the cycle of generational poverty.
- **Empowering through Knowledge** - Education is not merely about acquiring knowledge; it is a tool for empowerment. NGOs understand that by providing education for poor children. Education equips individuals with the skills needed to break free from the shackles of poverty, opening doors to better opportunities and brighter futures.
- **Breaking Gender Barriers-** Education has the power to break gender barriers and promote equality. NGOs actively work towards ensuring that girls, who are often more vulnerable to exclusion from education, have equal access to learning opportunities. By

challenging societal norms and advocating for girls' education, these organizations contribute to dismantling gender inequalities and fostering inclusive learning environments.

- **Building a Foundation for the Future-** The importance of **education for poor children** goes beyond individual development; it lays the groundwork for community and societal progress. NGOs, through their commitment to education, are not only transforming the lives of individual children but also building a foundation for the future development of entire communities.

**Conclusion-** There is no denying that NGOs play an important role in improving a access to quality education. Still, they must move beyond addressing the symptoms of inequality to focusing on structural issues related to education reform. The importance of the role NGOs can play in the spread of education to different nook and corners of a vast country like India is undeniable. Together with existing Government machinery, NGOs can ensure that no child is left behind when it comes to getting education. A government should act towards empowering school leaders and teachers towards professional responsibility and set standards and support them wholly in a quest to deliver quality learning prospects for the learners. Teachers need to be trained so that they can manage well in the school setting. The government should establish training centers to cater for teachers training. Presence of training centres could motivate teachers to even further their educations to the higher level, and after that be able to give back to the community as qualified personnel.

## Reference List

1. Government of India. (2020). *National Education Policy 2020*. Ministry of Human Resource Development. <https://www.education.gov.in>
2. UNICEF. (2019). *Education for every child: UNICEF education strategy 2019–2030*. UNICEF. <https://www.unicef.org>
3. Pratham. (2022). *Annual Status of Education Report (ASER) 2022*. <https://www.asercentre.org>  
Azim Premji Foundation. (2021). *Annual report 2020–21*. <https://www.azimpremjifoundation.org>
4. GUPTA, Dr. VISHAL, and Dr. Vandana Verma. 2025. “An Interventional Study on the Assessment of the Knowledge and Awareness Related to Health at Upper Primary Level of School Education”. *International Journal of Research in Social Science and Humanities (IJRSS) ISSN:2582-6220, DOI: 10.47505/IJRSS 6 (3): 100-*  
108. <https://doi.org/10.47505/IJRSS.2025.3.10>



## ग्रामीण बनाम शहरी मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों की शिक्षा: एक तुलनात्मक अध्ययन

प्रो. श्री प्रकाश मिश्र  
आचार्य , शिक्षक शिक्षा विभाग  
एम.एल.के.पी.जी.कॉलेज , बलरामपुर  
डॉ. रामानंद तिवारी  
सचिव ,उत्कर्ष फाउंडेशन,गोंडा

### सार

भारत में ग्रामीण और शहरी मलिन बस्तियों में निवास करने वाले वंचित बच्चों की शैक्षिक स्थिति में व्यापक असमानताएँ विद्यमान हैं। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य ग्रामीण एवं शहरी मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों की शैक्षिक पहुँच, नामांकन दर, ड्रॉपआउट दर, शैक्षिक अवसंरचना तथा सीखने के प्रतिफलों का तुलनात्मक विश्लेषण करना है। अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि अपनाई गई है तथा उत्तर प्रदेश के दो जिलों से 200 उत्तरदाताओं (100 ग्रामीण एवं 100 शहरी मलिन बस्ती) से स्तरीकृत यादृच्छिक प्रतिचयन द्वारा आँकड़े संकलित किए गए हैं। परिकल्पना  $H_1$  के अनुसार शहरी मलिन बस्तियों में शैक्षिक पहुँच ग्रामीण से उच्चतर है, तथा  $H_2$  के अनुसार ग्रामीण मलिन बस्तियों में सीखने के प्रतिफल शहरी से निम्नतर हैं। परिणाम दर्शाते हैं कि शहरी मलिन बस्तियों में नामांकन दर (78.5%) ग्रामीण (62.3%) से अधिक है, किन्तु ड्रॉपआउट दर शहरी क्षेत्रों (32.4%) में भी चिंताजनक है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयी अवसंरचना, शिक्षक उपलब्धता एवं डिजिटल साक्षरता में गंभीर कमी पाई गई। काई-वर्ग परीक्षण द्वारा दोनों परिकल्पनाएँ सार्थक स्तर ( $p < 0.05$ ) पर स्वीकृत हुईं। निष्कर्षतः दोनों क्षेत्रों में लक्षित नीतिगत हस्तक्षेप, अवसंरचनात्मक सुधार एवं सामुदायिक सहभागिता आवश्यक है।

**मुख्य शब्द:** वंचित बच्चे, मलिन बस्ती शिक्षा, ग्रामीण-शहरी शैक्षिक असमानता, ड्रॉपआउट दर, शैक्षिक अवसंरचना

### प्रस्तावना (Introduction)

भारत विश्व का सबसे बड़ा युवा जनसंख्या वाला राष्ट्र है, जहाँ लगभग 47.2 करोड़ बच्चे 18 वर्ष से कम आयु के हैं। इतनी विशाल बाल जनसंख्या के बावजूद, शिक्षा के क्षेत्र में गहरी असमानताएँ विद्यमान हैं, विशेषकर ग्रामीण और शहरी मलिन बस्तियों में निवास करने वाले वंचित बच्चों के संदर्भ में। जनगणना 2011 के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या का 5.4% भाग मलिन बस्तियों में निवास करता है, जहाँ साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से काफी कम है (Census of India, 2011)। मिजोरम में मलिन बस्ती साक्षरता दर 85% सर्वाधिक है, जबकि बिहार, उत्तर प्रदेश और राजस्थान में यह 60% से भी कम है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिति और भी विषम है, जहाँ 2011 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण साक्षरता दर 67.77% थी जबकि शहरी साक्षरता दर 84.11% थी। शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE) 2009 के अंतर्गत 6-14 वर्ष के प्रत्येक बच्चे को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है, तथापि मलिन बस्तियों में इसका क्रियान्वयन अत्यंत असंतोषजनक है। यादव (2024) ने लखनऊ की मलिन बस्तियों पर किए गए अपने अध्ययन में पाया कि गरीबी, भीड़भाड़ वाले आवास और खतरनाक वातावरण बच्चों की शैक्षिक प्रगति में प्रमुख बाधाएँ हैं। ASER 2024 की रिपोर्ट के अनुसार

ग्रामीण भारत में 6-14 आयु वर्ग के बच्चों का सरकारी विद्यालयों में नामांकन 2018 के 65.5% से बढ़कर 2024 में 66.8% हुआ है, जो मामूली सुधार दर्शाता है किन्तु शिक्षा की गुणवत्ता और पहुँच पर गंभीर प्रश्न उठता है (ASER Centre, 2025)।

शहरी मलिन बस्तियों में भी स्थिति चिंताजनक है। दिल्ली की मलिन बस्तियों में साक्षरता दर मात्र 56% है, कक्षा I-X में ड्रॉपआउट दर 46% तथा उच्च शिक्षा में नामांकन मात्र 45% है (Bhatia, 2025)। UNICEF एवं राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान के संयुक्त अध्ययन में पाया गया कि शहरी गरीब बच्चे स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण और शिक्षा जैसी बुनियादी सेवाओं से वंचित रहते हैं (UNICEF India, 2018)। PwC की रिपोर्ट के अनुसार शहरी वंचित बच्चों के लिए स्वच्छ जल, शौचालय और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच एक दैनिक संघर्ष है (PwC India, 2015)। UDISE+ 2023-24 रिपोर्ट दर्शाती है कि कुल नामांकन 24.8 करोड़ पर आ गया, जो 2022-23 के 25.18 करोड़ से कम है (Ministry of Education, 2024)। माध्यमिक स्तर पर ड्रॉपआउट दर 10.9% है जो अत्यंत चिंताजनक है। NFHS-5 (2019-21) के अनुसार 6-17 वर्ष आयु वर्ग की जनसंख्या में 87.4% बच्चे विद्यालय जा रहे थे, किन्तु शहरी क्षेत्रों में यह 90.4% एवं ग्रामीण क्षेत्रों में 86.1% था (IIPS & ICF, 2021)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत 2030 तक शत-प्रतिशत सकल नामांकन अनुपात का लक्ष्य रखा गया है, किन्तु वर्तमान आँकड़े इस लक्ष्य की प्राप्ति में गंभीर चुनौतियाँ दर्शाते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र इन्हीं शैक्षिक विषयों का ग्रामीण एवं शहरी मलिन बस्तियों के संदर्भ में तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

### साहित्य समीक्षा

#### 1. ग्रामीण मलिन बस्तियों में शिक्षा की स्थिति

ग्रामीण भारत में शिक्षा की स्थिति लंबे समय से चिंता का विषय रही है। ASER 2024 के व्यापक सर्वेक्षण में 605 ग्रामीण जिलों के 17,997 गाँवों में 6,49,491 बच्चों का आकलन किया गया, जिसमें पाया गया कि कक्षा III के मात्र 23.4% बच्चे कक्षा II स्तर का पाठ पढ़ सकते हैं (ASER Centre, 2025)। यद्यपि यह 2022 के 16.3% से सुधार है, तथापि अभी भी लगभग 77% बच्चे बुनियादी पठन कौशल में पिछड़े हुए हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में छात्र उपस्थिति 2018 के 72.4% से बढ़कर 2024 में 75.9% हुई है, जो मामूली सुधार दर्शाती है। NFHS-5 के आँकड़ों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय शुद्ध उपस्थिति अनुपात 83% है जबकि शहरी क्षेत्रों में 83.87% है, किन्तु माध्यमिक/उच्च माध्यमिक स्तर पर यह अंतर बढ़ जाता है जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 76% बच्चे उपस्थित रहते हैं (IIPS & ICF, 2021)। ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में विद्यालय अवसंरचना की कमी, शिक्षकों की अनुपस्थिति और बहु-कक्षा शिक्षण पद्धति शामिल हैं। ASER 2024 के अनुसार 52.1% सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में 60 से कम छात्र नामांकित हैं तथा दो-तिहाई कक्षा I-II कक्षाओं में बहु-कक्षा शिक्षण होता है (ASER Centre, 2025)। UDISE+ 2023-24 के अनुसार प्राथमिक स्तर पर ड्रॉपआउट दर 1.9% और उच्च प्राथमिक स्तर पर 5.2% है, किन्तु माध्यमिक स्तर पर यह 10.9% तक पहुँच जाती है (Ministry of Education, 2024)। जनगणना 2011 के विश्लेषण में पाया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में 2011 में 229.63 मिलियन निरक्षर व्यक्ति थे, जो कुल निरक्षरों का 81.23% है, जो ग्रामीण शिक्षा की भयावह स्थिति को दर्शाता है (Census of India, 2011)।

## 2. शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की स्थिति एवं तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य

शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों से भिन्न किन्तु समान रूप से चिंताजनक है। यादव (2024) ने लखनऊ की मलिन बस्तियों पर अपने शोध में पाया कि अधिकांश परिवारों में पिता दैनिक मजदूरी करते हैं और माताएँ घरेलू सहायिका के रूप में कार्य करती हैं, जिसके कारण बच्चे बिना निगरानी के रहते हैं तथा बालिकाओं पर घर की सफाई और खाना पकाने की जिम्मेदारी आ जाती है। UNESCO (2012) के दिल्ली केन्द्रित अध्ययन में पाया गया कि मलिन बस्ती के बच्चे कानूनी पहचान के अभाव में विद्यालय से बाहर रह जाते हैं एवं स्वास्थ्य सुविधाओं से भी वंचित रहते हैं। PwC India (2015) की रिपोर्ट के अनुसार शहरी वंचित बच्चों की संख्या बढ़ने का अनुमान है तथा इनके लिए बुनियादी सेवाओं तक पहुँच एक गंभीर चुनौती बनी हुई है। UNICEF एवं राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान (2018) के अध्ययन में मलिन बस्ती बनाम गैर-मलिन बस्ती, निर्धन बनाम गैर-निर्धन तथा लैंगिक श्रेणियों में बच्चों की शैक्षिक उपलब्धियों में स्पष्ट अंतर पाया गया। Bhatia (2025) ने दिल्ली की मलिन बस्तियों पर किए गए अपने शोध में बताया कि COVID-19 महामारी ने डिजिटल विभाजन को और गहरा कर दिया, जिसमें स्मार्टफोन, इंटरनेट या डिजिटल साक्षरता के अभाव में अनेक बच्चे दूरस्थ शिक्षा से पूर्णतः वंचित रहे। इन समस्त अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि ग्रामीण और शहरी दोनों मलिन बस्तियों में शिक्षा की चुनौतियाँ भिन्न-भिन्न प्रकृति की हैं, किन्तु दोनों ही क्षेत्रों में वंचित बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराना एक गंभीर चुनौती बनी हुई है।

## 3. शोध के उद्देश्य

1. ग्रामीण एवं शहरी मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों की शैक्षिक पहुँच, नामांकन दर, ड्रॉपआउट दर एवं शैक्षिक अवसंरचना का तुलनात्मक विश्लेषण करना।
2. दोनों क्षेत्रों में बच्चों के सीखने के प्रतिफलों, अभिभावकों की शैक्षिक जागरूकता एवं शिक्षा को प्रभावित करने वाले सामाजिक-आर्थिक कारकों की पहचान करना।

## 4. परिकल्पना

H<sub>1</sub>: शहरी मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों की शैक्षिक पहुँच एवं नामांकन दर ग्रामीण मलिन बस्तियों की तुलना में सांख्यिकीय रूप से उच्चतर होती है।

H<sub>2</sub>: ग्रामीण मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों के सीखने के प्रतिफल एवं शैक्षिक अवसंरचना शहरी मलिन बस्तियों की तुलना में सांख्यिकीय रूप से निम्नतर होती है।

## 5. शोध प्रविधि

प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण अनुसंधान अभिकल्प अपनाया गया है। अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेश राज्य के दो जिलों लखनऊ (शहरी मलिन बस्ती) एवं सीतापुर (ग्रामीण मलिन बस्ती) तक सीमित है। जनसंख्या में दोनों क्षेत्रों की मलिन बस्तियों में निवासरत 6-14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों के अभिभावक एवं शिक्षक सम्मिलित हैं। स्तरीकृत यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा

कुल 200 उत्तरदाताओं (100 ग्रामीण एवं 100 शहरी) का चयन किया गया, जिसमें प्रत्येक क्षेत्र से 70 अभिभावक एवं 30 शिक्षक सम्मिलित हैं। उपकरण के रूप में स्व-निर्मित संरचित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया जिसमें शैक्षिक पहुँच, नामांकन स्थिति, ड्रॉपआउट कारण, विद्यालय अवसंरचना, अभिभावकीय जागरूकता, सीखने के प्रतिफल एवं सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से संबंधित प्रश्न सम्मिलित थे। प्रश्नावली की विषय-वस्तु वैधता विशेषज्ञों द्वारा सत्यापित की गई तथा विश्वसनीयता क्रॉनबैक अल्फा गुणांक (0.82) द्वारा स्थापित की गई। आँकड़ा संकलन प्रत्यक्ष साक्षात्कार एवं क्षेत्रीय भ्रमण विधि द्वारा किया गया। विश्लेषण हेतु प्रतिशत, माध्य, मानक विचलन एवं काई-वर्ग परीक्षण सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग किया गया। साथ ही ASER 2024, UDISE+ 2023-24, NFHS-5 एवं जनगणना 2011 के द्वितीयक आँकड़ों का भी उपयोग तुलनात्मक सत्यापन हेतु किया गया।

## 6. परिणाम

तालिका 1: नामांकन एवं ड्रॉपआउट दर की तुलना (प्रतिशत में)

शैक्षिक संकेतक	ग्रामीण मलिन बस्ती	शहरी मलिन बस्ती	राष्ट्रीय औसत (UDISE+/ASER 2024)
प्राथमिक स्तर नामांकन दर	62.3%	78.5%	98.1% (ASER 2024 समग्र)
उच्च प्राथमिक नामांकन दर	51.7%	68.2%	92.4% (प्रतिधारण दर)
प्राथमिक ड्रॉपआउट दर	18.6%	12.4%	1.9% (UDISE+ 2023-24)
माध्यमिक ड्रॉपआउट दर	42.8%	32.4%	10.9% (UDISE+ 2023-24)
बालिका ड्रॉपआउट दर (समग्र)	48.3%	35.7%	8.1% (ASER 2024, 15-16 वर्ष)

तालिका 1 के आँकड़े ग्रामीण एवं शहरी मलिन बस्तियों के बीच नामांकन और ड्रॉपआउट दर में स्पष्ट असमानता दर्शाते हैं। ग्रामीण मलिन बस्तियों में प्राथमिक स्तर पर नामांकन दर 62.3% है जो शहरी की 78.5% से 16.2 प्रतिशत अंक कम है। उच्च प्राथमिक स्तर पर भी यह अंतर बना रहता है — ग्रामीण में 51.7% बनाम शहरी में 68.2%। सबसे चिंताजनक आँकड़ा माध्यमिक ड्रॉपआउट दर का है, जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में 42.8% बच्चे विद्यालय छोड़ देते हैं जबकि शहरी में यह 32.4% है। बालिका ड्रॉपआउट दर ग्रामीण में 48.3% अत्यंत गंभीर है। दोनों क्षेत्र UDISE+ 2023-24 के राष्ट्रीय औसत से बहुत पीछे हैं, जो मलिन बस्ती बच्चों की शैक्षिक हाशिएकरण की गंभीरता को प्रमाणित करता है।

तालिका 2: विद्यालय अवसंरचना की तुलना (प्रतिशत विद्यालय)

अवसंरचना संकेतक	ग्रामीण मलिन बस्ती	शहरी मलिन बस्ती	राष्ट्रीय औसत (ASER/UDISE+)
उपयोगी बालिका शौचालय	48.5%	65.3%	72.0% (ASER 2024)
पेयजल सुविधा	52.0%	71.8%	77.7% (ASER 2024)

कम्प्यूटर सुविधा	12.3%	38.7%	57.7% (UDISE+ 2023-24)
इंटरनेट कनेक्टिविटी	8.5%	31.2%	53.9% (UDISE+ 2023-24)
विद्युत सुविधा	61.0%	82.5%	91.8% (UDISE+ 2023-24)

तालिका 2 विद्यालय अवसंरचना में ग्रामीण-शहरी विषमता को उजागर करती है। ग्रामीण मलिन बस्तियों में मात्र 48.5% विद्यालयों में उपयोगी बालिका शौचालय उपलब्ध है जबकि शहरी में 65.3% में है, किन्तु दोनों ही ASER 2024 के राष्ट्रीय औसत 72% से नीचे हैं। डिजिटल अवसंरचना में अंतर और भी विकराल है ग्रामीण में मात्र 12.3% विद्यालयों में कम्प्यूटर एवं 8.5% में इंटरनेट सुविधा है, जबकि शहरी में क्रमशः 38.7% एवं 31.2% है। पेयजल सुविधा ग्रामीण में 52% बनाम शहरी में 71.8% है। विद्युत सुविधा में भी 21.5 प्रतिशत अंक का अंतर है। ये आँकड़े दर्शाते हैं कि अवसंरचनात्मक कमी ग्रामीण मलिन बस्ती विद्यालयों में शिक्षा की गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित कर रही है।

तालिका 3: सीखने के प्रतिफल (कक्षा V स्तर के बच्चे, प्रतिशत में)

सीखने का संकेतक	ग्रामीण मलिन बस्ती	शहरी मलिन बस्ती	राष्ट्रीय ग्रामीण औसत (ASER 2024)
कक्षा II स्तर का पाठ पढ़ सकते हैं	28.4%	41.6%	67.5% (सरकारी विद्यालय)
भाग का सवाल हल कर सकते हैं	18.7%	29.3%	30.7% (ASER 2024)
अंग्रेजी वाक्य पढ़ सकते हैं	11.2%	24.8%	—
संख्या पहचान (1-99)	52.3%	67.1%	—

तालिका 3 कक्षा V स्तर के बच्चों के सीखने के प्रतिफलों में चौंकाने वाला अंतर प्रस्तुत करती है। ग्रामीण मलिन बस्तियों में मात्र 28.4% बच्चे कक्षा II स्तर का पाठ पढ़ सकते हैं, जबकि शहरी मलिन बस्तियों में यह 41.6% है। गणितीय कौशल में भी यही प्रवृत्ति दिखती है भाग के सवाल ग्रामीण में 18.7% एवं शहरी में 29.3% बच्चे हल कर सकते हैं। अंग्रेजी पठन में अंतर सर्वाधिक है ग्रामीण में 11.2% बनाम शहरी में 24.8%। उल्लेखनीय है कि दोनों ही क्षेत्र ASER 2024 के राष्ट्रीय ग्रामीण औसत (67.5% पठन कौशल) से काफी नीचे हैं। ये आँकड़े प्रमाणित करते हैं कि मलिन बस्ती के बच्चे बुनियादी शैक्षिक दक्षताओं में गंभीर रूप से पिछड़े हुए हैं।

तालिका 4: शिक्षा को प्रभावित करने वाले सामाजिक-आर्थिक कारक (अभिभावक प्रतिक्रिया, प्रतिशत)

कारक	ग्रामीण मलिन बस्ती	शहरी मलिन बस्ती
आर्थिक तंगी/गरीबी	82.9%	74.3%

बाल श्रम/घरेलू कार्य	58.6%	41.4%
विद्यालय की दूरी	47.1%	18.6%
अभिभावकीय शैक्षिक अज्ञानता	65.7%	48.6%
लैंगिक भेदभाव (बालिकाओं हेतु)	44.3%	27.1%
विद्यालय में असुरक्षा का भय	31.4%	22.9%

तालिका 4 शिक्षा को प्रभावित करने वाले सामाजिक-आर्थिक कारकों पर अभिभावकों की प्रतिक्रिया प्रस्तुत करती है। दोनों क्षेत्रों में आर्थिक तंगी सर्वाधिक प्रमुख बाधा है ग्रामीण में 82.9% एवं शहरी में 74.3% उत्तरदाताओं ने इसे चिह्नित किया। बाल श्रम ग्रामीण (58.6%) में शहरी (41.4%) से अधिक प्रचलित है। विद्यालय की दूरी ग्रामीण में (47.1%) एक गंभीर बाधा है जबकि शहरी में यह मात्र 18.6% है। अभिभावकीय शैक्षिक अज्ञानता ग्रामीण में (65.7%) शहरी (48.6%) से उल्लेखनीय रूप से अधिक है। लैंगिक भेदभाव ग्रामीण में 44.3% बनाम शहरी में 27.1% है, जो बालिका शिक्षा में ग्रामीण क्षेत्रों की गहरी सामाजिक बाधाओं को दर्शाता है।

तालिका 5: शिक्षक-छात्र अनुपात एवं शिक्षक योग्यता

संकेतक	ग्रामीण मलिन बस्ती	शहरी मलिन बस्ती	RTE मानक
शिक्षक-छात्र अनुपात	1:48	1:36	1:30
प्रशिक्षित शिक्षकों का प्रतिशत	58.3%	72.0%	100% (अपेक्षित)
एकल-शिक्षक विद्यालय	34.0%	12.0%	—
शिक्षक उपस्थिति दर	71.5%	82.3%	87.5% (ASER 2024 राष्ट्रीय)

तालिका 5 शिक्षक संबंधी संकेतकों में ग्रामीण-शहरी असमानता को प्रकट करती है। ग्रामीण मलिन बस्तियों में शिक्षक-छात्र अनुपात 1:48 है जो RTE मानक 1:30 से 60% अधिक है, जबकि शहरी में यह 1:36 है। प्रशिक्षित शिक्षकों का प्रतिशत ग्रामीण में 58.3% एवं शहरी में 72% है, दोनों ही अपेक्षित 100% से बहुत कम हैं। सर्वाधिक चिंताजनक आँकड़ा एकल-शिक्षक विद्यालयों का है ग्रामीण में 34% विद्यालय एकल-शिक्षक हैं जबकि शहरी में मात्र 12%। शिक्षक उपस्थिति दर भी ग्रामीण (71.5%) में शहरी (82.3%) एवं ASER 2024 के राष्ट्रीय औसत (87.5%) से काफी कम है। ये आँकड़े प्रमाणित करते हैं कि शिक्षक गुणवत्ता एवं उपलब्धता ग्रामीण मलिन बस्तियों में शिक्षा की निम्न गुणवत्ता का एक प्रमुख कारण है।

## 7. विवेचना

### 1. शैक्षिक पहुँच एवं नामांकन में असमानता

प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि ग्रामीण और शहरी मलिन बस्तियों में वंचित बच्चों की शैक्षिक पहुँच में महत्वपूर्ण अंतर विद्यमान है। ग्रामीण मलिन बस्तियों में प्राथमिक स्तर पर नामांकन दर 62.3% है जो शहरी मलिन बस्तियों की 78.5% से 16.2 प्रतिशत अंक कम है। यह अंतर ASER 2024 एवं NFHS-5 के राष्ट्रीय आँकड़ों से भी मेल खाता है। ASER 2024 के अनुसार ग्रामीण भारत में 15-16 वर्ष आयु वर्ग में ड्रॉपआउट दर 7.9% है, किन्तु मलिन बस्तियों में यह दर कहीं अधिक है (ASER Centre, 2025)। NFHS-5 ने भी पाया कि शहरी क्षेत्रों में 6-17 वर्ष आयु वर्ग में विद्यालय जाने वाले बच्चों का प्रतिशत 90.4% है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह 86.1% है (IIPS & ICF, 2021)। ग्रामीण मलिन बस्तियों में नामांकन कम होने के प्रमुख कारणों में विद्यालय की अत्यधिक दूरी (47.1% उत्तरदाताओं ने चिह्नित किया), अभिभावकीय शैक्षिक अज्ञानता (65.7%) एवं आर्थिक तंगी (82.9%) प्रमुख हैं। यादव (2024) ने भी लखनऊ की मलिन बस्तियों में गरीबी एवं जागरूकता की कमी को शिक्षा में प्रमुख बाधाओं के रूप में चिह्नित किया है। UDISE+ 2023-24 के अनुसार कुल नामांकन में 38 लाख से अधिक की गिरावट आई है, जिसमें सरकारी विद्यालयों की हिस्सेदारी में भी कमी आई है (Ministry of Education, 2024)। यह प्रवृत्ति ग्रामीण मलिन बस्तियों में और भी स्पष्ट है, जहाँ परिवार आर्थिक विवशता के कारण बच्चों को श्रम में लगा देते हैं।

### 2. शैक्षिक अवसंरचना एवं सीखने के प्रतिफलों में विषमता

तालिका 2 एवं 3 के आँकड़ों से स्पष्ट है कि शैक्षिक अवसंरचना में ग्रामीण मलिन बस्तियाँ शहरी मलिन बस्तियों से काफी पीछे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 12.3% विद्यालयों में कम्प्यूटर सुविधा उपलब्ध है जबकि शहरी मलिन बस्तियों में यह 38.7% है। UDISE+ 2023-24 का राष्ट्रीय औसत 57.7% है, जो दर्शाता है कि दोनों ही क्षेत्र राष्ट्रीय मानक से बहुत पीछे हैं (Ministry of Education, 2024)। इंटरनेट कनेक्टिविटी में तो अंतर और भी विकराल है ग्रामीण में 8.5% बनाम शहरी में 31.2%। ASER 2024 के अनुसार 52.1% सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में 60 से कम बच्चे नामांकित हैं तथा इनमें से अधिकांश में बहु-कक्षा शिक्षण होता है (ASER Centre, 2025)। शिक्षक-छात्र अनुपात ग्रामीण मलिन बस्तियों में 1:48 है जो RTE मानक 1:30 से बहुत अधिक है, तथा 34% विद्यालय एकल-शिक्षक विद्यालय हैं।

सीखने के प्रतिफलों में भी उल्लेखनीय अंतर पाया गया। ग्रामीण मलिन बस्तियों में कक्षा V के मात्र 28.4% बच्चे कक्षा II स्तर का पाठ पढ़ सकते हैं जबकि शहरी मलिन बस्तियों में यह 41.6% है। ASER 2024 का राष्ट्रीय ग्रामीण औसत 67.5% है (ASER Centre, 2025), जो यह दर्शाता है कि मलिन बस्तियों के बच्चे सामान्य ग्रामीण बच्चों से भी काफी पीछे हैं। Bhatia (2025) ने दिल्ली की मलिन बस्तियों पर अपने शोध में पाया कि COVID-19 महामारी के बाद डिजिटल विभाजन ने सीखने के अंतर को और बढ़ा दिया है। UNESCO (2012) ने भी दिल्ली के मलिन बस्ती बच्चों में शैक्षिक वंचना की गंभीरता को रेखांकित किया है।

### 3. सामाजिक-आर्थिक कारकों का प्रभाव एवं लैंगिक विषमता

अध्ययन में पाया गया कि दोनों क्षेत्रों में आर्थिक तंगी सबसे प्रमुख बाधा है, किन्तु इसका प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों में (82.9%) शहरी (74.3%) से अधिक है। बाल श्रम ग्रामीण मलिन बस्तियों में (58.6%) शहरी (41.4%) की तुलना में अधिक प्रचलित है। PwC India (2015) की रिपोर्ट भी इस तथ्य की पुष्टि करती है कि शहरी वंचित बच्चे अनौपचारिक क्षेत्र में दैनिक मजदूरी

करने वाले परिवारों से आते हैं जहाँ आर्थिक अनिश्चितता सदैव बनी रहती है। लैंगिक विषमता भी गंभीर चिंता का विषय है। ग्रामीण मलिन बस्तियों में बालिका ड्रॉपआउट दर 48.3% है जो शहरी की 35.7% से काफी अधिक है। ASER 2024 के अनुसार अनामांकित बालिकाओं का प्रतिशत कई राज्यों में 10% से अधिक है, जिनमें मध्य प्रदेश (16.1%), उत्तर प्रदेश (15%) एवं राजस्थान (12.7%) प्रमुख हैं (ASER Centre, 2025)। अध्ययन में 44.3% ग्रामीण उत्तरदाताओं ने लैंगिक भेदभाव को बालिकाओं की शिक्षा में बाधक बताया। UNICEF एवं राष्ट्रीय शहरी कार्य संस्थान (2018) ने भी बच्चों की शैक्षिक उपलब्धियों में लिंग, आर्थिक श्रेणी एवं निवास स्थान के आधार पर स्पष्ट अंतर पाया। यादव (2024) ने बताया कि मलिन बस्ती परिवारों में मादक द्रव्य सेवन, पारिवारिक हिंसा एवं माता की अनुपस्थिति जैसे कारक बच्चों की शैक्षिक प्रगति पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। समग्र रूप से यह विवेचना दर्शाती है कि ग्रामीण मलिन बस्तियों में शैक्षिक चुनौतियाँ अवसंरचनात्मक एवं भौगोलिक प्रकृति की अधिक हैं, जबकि शहरी मलिन बस्तियों में सामाजिक-आर्थिक एवं डिजिटल विभाजन प्रमुख बाधाएँ हैं। दोनों ही क्षेत्रों में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु विभेदित एवं लक्षित हस्तक्षेप अनिवार्य हैं।

### परिकल्पना परीक्षण सारांश

तालिका 6: परिकल्पना परीक्षण सारांश

परिकल्पना	चर (Variable)	परीक्षण विधि	काई-वर्ग मान ( $X^2$ )	स्वतंत्रता कोटि (df)	p-मान	सार्थकता स्तर ( $\alpha=0.05$ )	परिणाम
H <sub>1</sub> : शहरी मलिन बस्तियों में शैक्षिक पहुँच एवं नामांकन दर ग्रामीण से उच्चतर है	नामांकन दर एवं ड्रॉपआउट दर	काई-वर्ग परीक्षण	12.84	1	0.0003	p < 0.05	परिकल्पना स्वीकृत
H <sub>2</sub> : ग्रामीण मलिन बस्तियों में सीखने के प्रतिफल एवं अवसंरचना शहरी से निम्नतर है	पठन कौशल, गणितीय कौशल, अवसंरचना संकेतक	काई-वर्ग परीक्षण	9.67	1	0.0019	p < 0.05	परिकल्पना स्वीकृत

दोनों परिकल्पनाओं का काई-वर्ग परीक्षण द्वारा सत्यापन किया गया। H<sub>1</sub> में काई-वर्ग मान 12.84 एवं p-मान 0.0003 प्राप्त हुआ जो 0.05 सार्थकता स्तर पर अत्यंत सार्थक है, अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकृत एवं वैकल्पिक परिकल्पना स्वीकृत की जाती है कि शहरी मलिन बस्तियों में शैक्षिक पहुँच एवं नामांकन दर ग्रामीण की तुलना में सांख्यिकीय रूप से सार्थक रूप से उच्चतर है। H<sub>2</sub> में काई-वर्ग मान 9.67 एवं p-मान 0.0019 प्राप्त हुआ जो यह प्रमाणित करता है कि ग्रामीण मलिन बस्तियों में

सीखने के प्रतिफल (पठन कौशल 28.4% बनाम 41.6%) एवं अवसंरचना संकेतक (कम्प्यूटर सुविधा 12.3% बनाम 38.7%) शहरी मलिन बस्तियों की तुलना में सांख्यिकीय रूप से सार्थक रूप से निम्नतर हैं। दोनों परिणाम अध्ययन के उद्देश्यों एवं समग्र निष्कर्षों से पूर्णतः संगत हैं।

### 8. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि ग्रामीण एवं शहरी मलिन बस्तियों दोनों में वंचित बच्चों की शिक्षा गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है, किन्तु चुनौतियों की प्रकृति भिन्न है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय की दूरी, एकल-शिक्षक विद्यालय, अवसंरचनात्मक कमी एवं अभिभावकीय अज्ञानता प्रमुख समस्याएँ हैं, जबकि शहरी मलिन बस्तियों में भीड़भाड़, आवासीय अस्थिरता, डिजिटल विभाजन एवं सामाजिक हाशिएकरण मुख्य बाधाएँ हैं। नामांकन दर, ड्रॉपआउट दर, सीखने के प्रतिफल एवं शैक्षिक अवसंरचना — सभी संकेतकों पर ग्रामीण मलिन बस्तियाँ शहरी से पीछे हैं, किन्तु शहरी मलिन बस्तियाँ भी राष्ट्रीय मानकों से बहुत दूर हैं। काई-वर्ग परीक्षण द्वारा दोनों परिकल्पनाएँ ( $H_1$  एवं  $H_2$ ) सार्थक स्तर पर स्वीकृत हुईं, जो ग्रामीण-शहरी शैक्षिक विषमता की सांख्यिकीय पुष्टि करती हैं। RTE अधिनियम 2009 एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रभावी क्रियान्वयन, सामुदायिक सहभागिता, डिजिटल अवसंरचना के विस्तार, शिक्षक प्रशिक्षण एवं अभिभावकीय जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से ही इन वंचित बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराना संभव है। सरकार, गैर-सरकारी संगठनों एवं समुदाय के समन्वित प्रयासों से ही 2030 तक शत-प्रतिशत नामांकन का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. (2010). *शिक्षा का समाजशास्त्र*. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर।
2. शर्मा, आर.ए. (2012). *शिक्षा का समाजशास्त्र एवं दर्शन*. मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।
3. यादव, के. (2018). *ग्रामीण शिक्षा की समस्याएँ और समाधान*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन।
4. पांडेय, आर. (2016). *वंचित वर्ग और शिक्षा*. लखनऊ: उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
5. जीन ड्रेज़ और अमर्त्य सेन (2013). एक अनिश्चित गौरव: भारत और उसके विरोधाभास। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. जेम्स एस. कोलमैन (1966). शैक्षिक अवसर की समानता। अमेरिकी सरकारी मुद्रण कार्यालय।



## वंचित छात्रों के लिए शिक्षा तक पहुंच: वैश्विकरण के संदर्भ में रणनीतियों और नीतियों का पुनरावलोकन

विकास कुमार जैसवार (शोध छात्र)

डॉ० दिनेश कुमार मौर्य (शोध निर्देशक)

एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, एम0एल0के0 (पी0जी0) कॉलेज, बलरामपुर, (उ0प्र0)

E-mail: dineshkumarmaurya@mlkcollege.ac.in

### शोध सारांश:

वंचित छात्रों के लिए शिक्षा तक पहुंच एक महत्वपूर्ण वैश्विक मुद्दा बना हुआ है, विशेष रूप से तीव्र वैश्विकरण के संदर्भ में। प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढांचे और नीतिगत ढांचों में महत्वपूर्ण प्रगति के बावजूद, शैक्षिक असमानता बनी हुई है, जो सामाजिक-आर्थिक विषमताओं को और बढ़ा रही है। यह शोधपत्र वंचित आबादी, विशेष रूप से विकासशील और अविकसित क्षेत्रों में, को समान शिक्षा प्रदान करने से जुड़ी चुनौतियों और अवसरों का विश्लेषण करता है। यह अध्ययन शैक्षिक प्रणालियों पर वैश्विकरण के प्रभाव का पता लगाता है, जिसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभावों पर प्रकाश डाला गया है। एक ओर, वैश्विकरण ने ज्ञान, डिजिटल उपकरणों और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग तक पहुंच को सुगम बनाया है। दूसरी ओर, संसाधनों के असमान वितरण और प्रणालीगत बाधाओं के कारण इसने समृद्ध और वंचित समूहों के बीच अंतर को और बढ़ा दिया है। गरीबी, बुनियादी ढांचे की कमी, लैंगिक भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार जैसी चुनौतियों का विस्तार से विश्लेषण किया गया है, जिसमें नामांकन, प्रतिधारण और शैक्षणिक प्रदर्शन पर उनके प्रभाव पर विशेष ध्यान दिया गया है। इसके अतिरिक्त, यह शोधपत्र शैक्षिक असमानताओं को दूर करने के लिए स्थानीय, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर लागू की गई मौजूदा रणनीतियों और नीतियों की समीक्षा करता है। सामुदायिक पहलों, डिजिटल लर्निंग प्लेटफॉर्म और सशर्त नकद हस्तांतरण कार्यक्रमों जैसे सफल हस्तक्षेपों के केस स्टडी सर्वोत्तम प्रथाओं को उजागर करने के लिए प्रस्तुत किए गए हैं। शैक्षिक असमानता को पाटने में सार्वजनिक-निजी भागीदारी, गैर-सरकारी संगठनों और अंतर्राष्ट्रीय निकायों की भूमिका का भी विश्लेषण किया गया है। अध्ययन वंचित छात्रों के लिए समावेशी और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने हेतु एक नए ढांचे का प्रस्ताव देकर समाप्त होता है। प्रमुख अनुशासकों में सीखने को लोकतांत्रिक बनाने के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना, सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील शिक्षण पद्धतियों को अपनाना और विभिन्न क्षेत्रों में नीतिगत सामंजस्य को बढ़ावा देना शामिल है। दीर्घकालिक और प्रभावशाली परिवर्तन लाने के लिए सामुदायिक भागीदारी और निरंतर वित्तीय निवेश के महत्व पर बल दिया गया है। वैश्विकरण के संदर्भ में, यह शोधपत्र नीतियों और रणनीतियों को पुनर्गठित करने के लिए एक समग्र, बहु-हितधारक दृष्टिकोण का आह्वान करता है। ऐसी प्रथाएं जो वंचित छात्रों को सशक्त बनाती हैं और शिक्षा के माध्यम से सामाजिक समानता को बढ़ावा देती हैं।

**मुख्य शब्द:** शैक्षिक असमानता, विषमताएं, अवसररचना, वैश्विकरण, सामाजिक बहिष्कार, प्रौद्योगिकी

**प्रस्तावना:** स्वतंत्रता के बाद से, केंद्र और राज्य दोनों सरकारों ने भारतीय अर्थव्यवस्था के सर्वांगीण विकास में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार किया है, क्योंकि अशिक्षित और निरक्षर भारतीय आबादी समाज और अर्थव्यवस्था दोनों पर बोझ साबित होगी। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तन में शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण साधन है जिसके द्वारा हम अविकसित भारतीय अर्थव्यवस्था को विकासशील और विश्व की विकसित महाशक्ति अर्थव्यवस्था में बदल सकते हैं। भारत के समावेशी और समतावादी विकास के लिए प्रासंगिक ज्ञान, दृष्टिकोण और कौशल से लैस सुशिक्षित आबादी आवश्यक है। 21वीं सदी में तीव्र आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए यह आवश्यक है। शिक्षा एक ऐसा शक्तिशाली साधन है जिसके द्वारा हम एक समान और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण कर सकते हैं, जिसमें गतिशील सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता की विशेषता हो। शिक्षा पूरे समाज और इस प्रकार पूरे राष्ट्र के आर्थिक कल्याण के लिए कौशल और योग्यता प्रदान करती है। शिक्षा समाज में एक एकीकृत शक्ति के रूप में भी कार्य करती है, जो सामाजिक सामंजस्य और राष्ट्रीय पहचान को बढ़ावा देने वाले मूल्यों को प्रदान करती है। इसके अलावा, शिक्षा को सामाजिक और क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करने, महिलाओं को सशक्त बनाने और वंचितों और अल्पसंख्यकों को उनका उचित स्थान दिलाने में सकारात्मक और हस्तक्षेपकारी भूमिका निभानी चाहिए। राष्ट्रीय विकास में शिक्षा के महत्व को समझते हुए, पहली पंचवर्षीय योजना से लेकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना तक, केंद्र सरकार द्वारा शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय का प्रतिशत तेजी से बढ़ा है, जो 2004-05 में सकल घरेलू उत्पाद का 3.3 प्रतिशत से बढ़कर 2011-12 में 4 प्रतिशत से अधिक और 2016-17 में 6 प्रतिशत हो गया। शिक्षा पर सार्वजनिक व्यय का अधिकांश हिस्सा राज्य सरकारों द्वारा वहन किया जाता है।

11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान शिक्षा व्यय में 19.6 प्रतिशत प्रति वर्ष की मजबूत दर से वृद्धि हुई और चालू वर्ष में यह वृद्धि 30 प्रतिशत तक पहुंच गई। राज्य क्षेत्र में, शिक्षा व्यय का लगभग 75 प्रतिशत स्कूली शिक्षा पर खर्च होता है, जिसमें से 44 प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा और 30 प्रतिशत माध्यमिक शिक्षा पर खर्च होता है।

भारतीय संदर्भ में, सार्थक शिक्षा प्राप्ति के लिए उच्च उपस्थिति दर, कक्षाओं में निरंतर प्रगति (बिना दोहराव के) और ऐसे अधिगम परिणाम आवश्यक हैं जो बुनियादी कौशलों में निपुणता सुनिश्चित करते हों। जाति, लिंग या स्थान की परवाह किए बिना सभी लड़कों और लड़कियों को सार्वभौमिक शिक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी केंद्र और राज्य सरकारों दोनों की संयुक्त है। केंद्र या राज्य सरकारों द्वारा प्रबंधित, नियंत्रित, वित्तपोषित और संचालित सरकारी विद्यालय निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने के लिए स्वतंत्र हैं। वर्तमान में राष्ट्रीय स्तर पर अपनाई गई शिक्षा की सामान्य पद्धति, जिसे आमतौर पर 10+2+3 पद्धति के रूप में जाना जाता है, स्कूली शिक्षा के पहले दस वर्षों के दौरान सभी विद्यार्थियों को व्यापक आधार वाली सामान्य शिक्षा प्रदान करने की परिकल्पना करती है। प्राथमिक शिक्षा, जिसे अब 6-14 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य कर दिया गया है, में प्राथमिक (कक्षा-1से5) और उच्च प्राथमिक/माध्यमिक (कक्षा- 6से7) स्तर शामिल हैं। सार्वभौमिकरण के लिए, प्राथमिक स्तर पर स्वतः पदोन्नति की नीति शुरू की गई है ताकि बच्चों को कम से कम कक्षा 8 तक अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके और पुनरावृत्ति और ड्रॉपआउट को कम किया जा सके। शिक्षा तक

पहुंच में सुधार के लिए, राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने कुछ महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश सुझाए हैं, जैसे कि जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (1994)। समाज के वंचित समूहों तक सार्वभौमिक पहुंच के कार्यान्वयन की देखरेख के लिए द्विपक्षीय और बहुपक्षीय दाताओं, ग्राम शिक्षा समिति, अभिभावक-शिक्षक संघ और मातृ-शिक्षक संघ की भागीदारी आवश्यक है।

स्थिर आर्थिक स्थिति में आय के स्रोत शिक्षा के स्तर पर अत्यधिक निर्भर करते हैं। कम शिक्षा स्तर का सीधा संबंध अकुशल नौकरियों में संलग्नता से है, और ये नौकरियां मुख्य रूप से प्राथमिक क्षेत्र में होती हैं। जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ता है, लोग अर्थव्यवस्था के द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्रों में भाग लेने में सक्षम होते हैं। जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, 1951 में भारत की साक्षरता दर लगभग 18 प्रतिशत थी, जो 2011 में बढ़कर 74.04 प्रतिशत हो गई (जनगणना, 2011)। साक्षरता दर में इस सुधार का प्रभाव रोजगार के अवसरों की संरचनात्मक संरचना में आए परिवर्तन से स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

श्रम शक्ति का प्राथमिक क्षेत्र से द्वितीयक और द्वितीयक क्षेत्र से तृतीयक क्षेत्र में निरंतर स्थानांतरण होता रहा है। श्रम शक्ति का एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में यह स्थानांतरण हमेशा सकारात्मक दिशा में होता है, जिससे श्रम शक्ति कम सक्रिय कार्यों से अधिक उत्पादक कार्यों में संलग्न होती है और लोगों के आय स्तर में सुधार होता है। यदि श्रम शक्ति का यह स्थानांतरण विशिष्ट क्षेत्रों, अर्थात् ग्रामीण क्षेत्रों में हो, तो ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर में सुधार हो सकता है।

### स्वतंत्रता के बाद के काल में अनुसूचित जातियाँ:

स्वतंत्रता के बाद, भारत के संविधान में अनुसूचित जाति (एससी) और अनुसूचित जनजाति (एसटी) को शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के विशेष प्रावधानों के माध्यम से विशेष ध्यान दिया गया। उदाहरण के लिए, अनुच्छेद 46 में कहा गया है- राज्य समाज के कमजोर वर्गों, विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष ध्यान से बढ़ावा देगा और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाएगा। अनुच्छेद 17 के तहत अस्पृश्यता को समाप्त घोषित किया गया। परिणामस्वरूप, इन लोगों के लिए आधुनिक और धर्मनिरपेक्ष विकास क्षेत्रों में प्रवेश करने के रास्ते खुल गए, जो परंपरा और धर्म के विपरीत तर्क पर आधारित हैं। फलस्वरूप, इस दौरान समानता और समान अवसर के दर्शन को बढ़ावा दिया गया। हालांकि, कई अध्ययनों से पता चलता है कि शिक्षा तक सीमित पहुंच एक गंभीर सामाजिक चिंता का विषय रही है, जब से शैक्षिक अवसर की समानता को एक बुनियादी मानवाधिकार के रूप में मान्यता मिली है। अध्ययनों से यह स्थापित हुआ है कि शिक्षा तक पहुंच और उसमें प्रदर्शन आज भी सामाजिक पृष्ठभूमि से बहुत अधिक प्रभावित होता है - जाति, वर्ग, नस्ल और लिंग प्रमुख कारक हैं जो इसमें भूमिका निभाते हैं। यूनिसेफ और यूनेस्को (2014) की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में दलित लड़कियों की प्राथमिक विद्यालय से अनुपस्थिति दर सबसे अधिक है। रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि पूर्व-विद्यालय आयु वर्ग के आधे दलित बच्चे स्कूल नहीं जा रहे हैं और अनुपस्थिति की उच्च दर के प्रमुख कारण दलितों (अनुसूचित जाति) में गहरी जड़ें जमा चुकी सामाजिक असमानताएं और गरीबी हैं। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि उच्च जाति के शिक्षकों द्वारा अनुसूचित जाति के बच्चों का अपमान, उत्पीड़न और दुर्व्यवहार उन्हें स्कूल जाने के लिए हतोत्साहित

करता है। बाल श्रम को भी बच्चों के स्कूल जाने में एक प्रमुख बाधा के रूप में पहचाना गया है। अंतर्राष्ट्रीय संगठन (आईएलओ) के अनुसार, भारत में विश्व में सबसे अधिक कामकाजी बच्चे हैं। इनमें से अधिकांश बच्चे सबसे गरीब और सबसे हाशिए पर रहने वाले समुदायों से आते हैं, जिनमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति शामिल हैं।

### चुनौतियाँ:

अनुसूचित जाति या दलितों के लिए शिक्षा के क्षेत्र में कई चुनौतियाँ हैं, जिनमें से एक प्रमुख चुनौती किशोरों में स्कूल छोड़ने की दर है।

अनुसूचित जाति के किशोरों में स्कूल छोड़ने की दर:

अनुसूचित जाति समूह के छात्रों में स्कूल छोड़ने की दर बहुत अधिक है। स्कूल में दाखिले के पहले वर्ष में यह दर बहुत अधिक रहती है, लेकिन अगले वर्षों में धीरे-धीरे कम हो जाती है। हमने पाया है कि उच्च प्राथमिक शिक्षा स्तर पर कुल सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) 98.3 प्रतिशत है, लेकिन माध्यमिक शिक्षा में यह 78.7 प्रतिशत के साथ कम है, और उच्च माध्यमिक शिक्षा में तो यह और भी खराब 50.5 प्रतिशत है।

### शिक्षा में भेदभाव:

शिक्षा गरीबी के दुष्चक्र से बाहर निकलने का एक तरीका है और दलितों के लिए यह संकट न केवल आर्थिक स्थिति का एक परिणाम है, बल्कि यह उनकी परेशानी का भी कारण है। यहां तक कि जब दलितों को स्कूल जाने की अनुमति मिल जाती है, तब भी उन्हें निम्न स्तर की परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। दलित छात्रों में से 99 प्रतिशत छात्र ऐसे समुदायों से आते हैं जहां से वे आते हैं। इसके विपरीत, गैर-दलित बच्चों के लिए निजी ट्यूशन लेना या बेहतर गुणवत्ता वाली निजी शिक्षा प्राप्त करना आम बात है। ऐसा करने की प्रेरणा इस तथ्य से मिलती है कि अधिकांश सरकारी प्राथमिक विद्यालयों को निम्न गुणवत्ता का माना जाता है। कुछ ही दलित अपनी शिक्षा में इस तरह की सहायता प्राप्त कर पाते हैं, जिससे शिक्षा में अंतर और बढ़ जाता है। एक बार दाखिला हो जाने के बाद भी, भेदभाव दलित बच्चों के स्कूल जाने में बाधा डालता रहता है और उनकी शिक्षा की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है।

दूसरी ओर, 90 के दशक में भारतीय सरकार द्वारा वैश्विकरण विचारधारा और प्रथाओं को अपनाने से उच्च शिक्षा से सार्वजनिक धन की निरंतर निकासी हुई। वैश्विकरण, निजीकरण और उदारिकरण के प्रभाव में, केंद्र और राज्य सरकारों ने उच्च शिक्षा के विस्तार को हरी झंडी दे दी। इसके परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा में निवेश में गिरावट आई और केंद्र सरकार का शिक्षा पर कुल व्यय 1989-1990 और 1994-1995 के बीच 32 प्रतिशत से घटकर 24 प्रतिशत हो गया, जबकि राज्य बजटों से संबंधित आंकड़े 12.7 प्रतिशत से घटकर 10.8 प्रतिशत हो गए। पंचवर्षीय योजनाओं में संसाधनों के आवंटन में उच्च शिक्षा को दी गई प्राथमिकता में भी काफी कमी आई है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षा पर कुल व्यय का 14 प्रतिशत उच्च शिक्षा के लिए आवंटित किया गया था, जो बाद की दो वार्षिक योजनाओं में घटकर 11 प्रतिशत और आठवीं पंचवर्षीय योजना में और घटकर आठ प्रतिशत रह गया। भारत सरकार ने पांच वर्षों के

भीतर उच्च शिक्षा पर दी जाने वाली सब्सिडी को 90 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत करने का निर्णय लिया (भारत सरकार, चर्चा पत्र, 1997)।

वैश्विक परिदृश्य और भारत की कठोर वास्तविकताओं से यह स्पष्ट है कि उच्च शिक्षा के लिए एक सतत एजेंडा में समानता और उत्कृष्टता का समावेश निर्विवाद रूप से होना चाहिए। यूनेस्को के जिनेवा सम्मेलन (2004) ने इस बात पर जोर दिया और विश्व समुदाय से सभी युवाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने का आह्वान किया। यह केवल उच्च शिक्षा क्षेत्र को बाजार के खिलाड़ियों के लिए खोलकर नहीं किया जा सकता। जिस देश में 26 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा से नीचे रहती है और अधिकांश लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं, वहाँ बाजार पर्याप्त संख्या में युवाओं को उच्च शिक्षा की ओर आकर्षित नहीं कर पाएंगे। यहाँ तक कि, यदि वे आकर्षित भी कर लें, तो कमजोर आर्थिक पृष्ठभूमि वाले ग्रामीण युवाओं के लिए उच्च शिक्षा तक पहुँच पाना असंभव होगा क्योंकि इसकी कीमतें बहुत अधिक हैं। इसके अलावा, बाजार उन्मुखीकरण से विकास में असंतुलन पैदा होगा, क्योंकि केवल उन्हीं पाठ्यक्रमों और कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाएगा जिनका बाजार में तत्काल मूल्य है और जिनसे पैसा कमाया जा सकता है, जबकि सैद्धांतिक, पारंपरिक अध्ययन और मौलिक अनुसंधान की उपेक्षा की जाएगी, जो दीर्घकालिक सतत विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। वास्तव में, शिक्षा का व्यवसायीकरण और सामाजिक विज्ञान और कला जैसे पाठ्यक्रमों का हाशिए पर जाना सामाजिक अशांति को बढ़ावा दे रहा है। संस्कृति, परंपरा, मानवीय स्पर्श, देखभाल, आत्मविश्वास और सम्मान से वंचित रहने के कारण ये युवा पश्चिमीकरण की ओर आकर्षित हो रहे हैं और मूल्यों एवं रीति-रिवाजों के पतन में योगदान दे रहे हैं। हाल ही में हुई आत्महत्याओं, हत्याओं और एसिड हमलों से यह बात स्पष्ट रूप से सामने आई है। ऐसे में सरकार और समाज की ओर से एक बड़ी जिम्मेदारी बनती है

शिक्षाविदों द्वारा पारंपरिक और रूढ़िवादी पाठ्यक्रमों की रक्षा के दो कारण हैं; पहला, ग्रामीण युवाओं को उच्च शिक्षा तक पहुँच प्रदान करना और दूसरा, उन्हें भारतीय परंपराओं, रीति-रिवाजों और मूल्यों के बारे में सूचित करना और उनसे संपर्क बनाए रखना। यह कदम निश्चित रूप से किशोरों के अनुचित और पथभ्रष्ट स्वभाव को नियंत्रित करता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रमों को उच्च शिक्षा के दायरे से बाहर रखा जाना चाहिए। इसका सही अर्थ यह है कि विश्वविद्यालयों का उद्देश्य सभी प्रकार की शिक्षा प्रदान करना है, न कि उन्हें नौकरी दिलाने वाले केंद्रों के रूप में कार्य करना चाहिए।

भारत में शिक्षा, विशेषकर उच्च शिक्षा, कभी भी राज्य की एकमात्र जिम्मेदारी नहीं रही है। जनता और सरकार ने हमेशा निजी पहल का स्वागत किया है। लेकिन पूर्व के दशकों में निजी भागीदारी और निजी निवेश की नई लहर में बहुत अंतर है। जहां पहले का हस्तक्षेप परोपकारी प्रकृति का था, वहीं नया स्वरूप बाजार और व्यावसायिक उन्मुख है। इसके कारण उच्च शिक्षा संस्थानों, विशेष रूप से व्यावसायिक क्षेत्र में, की संख्या में बेतहाशा वृद्धि हुई है, जहां पाठ्यक्रमों का तत्काल बाजार मूल्य है और इसने पारंपरिक और रूढ़िवादी पाठ्यक्रमों को पूरी तरह से नकार दिया है, जिससे समाज का मूल ताना-बाना हिल गया है। इस अनुचित कार्य से भारतीय समाज खतरे में है। उदाहरण के लिए, स्नातक स्तर पर इंजीनियरिंग में संस्थानों और प्रवेश दोनों के संदर्भ में, कुल में निजी क्षेत्र के संस्थानों और नामांकन का

प्रतिशत 1999-2000 में 76 प्रतिशत से बढ़कर 2003-04 में 85 प्रतिशत हो गया है। अब देश में सरकारी क्षेत्र में 977 इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी संस्थान और निजी क्षेत्र में 764 संस्थान हैं। चिकित्सा क्षेत्र में संबंधित आंकड़े क्रमशः 1349 और 1028 हैं। प्रबंधन में स्नातकोत्तर स्तर के पाठ्यक्रमों में 505 और 324 तथा शिक्षक शिक्षा में 1541 और 1038 हैं (एनआईईपीए, 2008-2011)। भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली अधिकांश विकसित देशों की तुलना में अधिक निजीकरण वाली है। जहां संयुक्त राज्य अमेरिका में लगभग 80 प्रतिशत छात्र सार्वजनिक उच्च शिक्षा संस्थानों में पढ़ते हैं और केवल 20 प्रतिशत निजी संस्थानों पर निर्भर हैं, वहीं एशियाई देशों में स्थिति इसके विपरीत है।

सरकारी और सहायता प्राप्त क्षेत्रों की तुलना में स्व-वित्तपोषित क्षेत्रों की अभूतपूर्व वृद्धि सामाजिक रूप से विभाजनकारी और शैक्षणिक रूप से हानिकारक है। शैक्षणिक योग्यता के बजाय वित्तीय योग्यता पर आधारित प्रवेश प्रणाली, उच्च शिक्षा के लिए आवश्यक संसाधन जुटाने में असमर्थ आबादी के वर्गों के आक्रोश को आमंत्रित करके मौजूदा सामाजिक तनाव को बढ़ा सकती है, जबकि ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में सफलता की सीढ़ी उच्च शिक्षा ही है। वित्तीय आधार पर प्रवेश प्रणाली मेधावी उम्मीदवारों के एक बड़े बहुमत को बाहर कर सकती है और औसत दर्जे के उम्मीदवारों को उनकी वित्तीय स्थिति के आधार पर शामिल कर सकती है, जिसके परिणामस्वरूप गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं।

उच्च शिक्षा की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सामाजिक और शैक्षणिक दोनों ही दृष्टिकोणों से उच्च शिक्षा के विकास के लिए वर्तमान रणनीतियों के पुनर्गठन की आवश्यकता है। आर्थिक रूप से सीमित राज्य सरकारें, स्थानीय निकाय आदि जब शिक्षा में निजी भागीदारी चाहते हैं, तो वे इस बात से भलीभांति अवगत होते हैं कि निजी खिलाड़ी केवल निजी लाभ में ही रुचि रखते हैं। चुनौती यह है कि एक व्यापक शिक्षा प्रणाली के लाभों का उपयोग करते हुए निजी खिलाड़ियों के मुनाफाखोरी पर अंकुश लगाया जाए। शिक्षार्थी को वेतनभोगी रोजगार या स्वरोजगार के माध्यम से सम्मानजनक जीवन यापन करने में सक्षम बनाने में उच्च शिक्षा की भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए। हमें विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों की आवश्यकता है जो एक जटिल दुनिया की विविध आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। रोजगार बाजार में भी विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए प्रशिक्षित कर्मियों की मांग है। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि उच्च शिक्षा को ऐसे तैयार ज्ञान-कर्मियों का उत्पादन करना होगा जिन्हें बिना किसी कार्य-प्रशिक्षण के तुरंत नौकरी में शामिल किया जा सके। हालांकि इस तरह का विशिष्ट नौकरी प्रशिक्षण कार्यक्रम तात्कालिक नियोक्ताओं के हितों के अनुकूल होगा, लेकिन यह शिक्षार्थियों के दीर्घकालिक हितों की पूर्ति नहीं करेगा। चूंकि भविष्य की मांग के स्वरूप को न तो नियंत्रित किया जा सकता है और न ही पूर्वानुमानित किया जा सकता है, इसलिए एकमात्र उपाय यही है कि... एक वैकल्पिक विकल्प नवाचार करने की क्षमता का निर्माण करना है, जिसके लिए बुनियादी और व्यावहारिक कौशल का संतुलित विकास आवश्यक होगा।

### निष्कर्ष:

यह सुनिश्चित करना हमारा दायित्व है कि वैश्विकरण मानव हितों की पूर्ति करे और सभी के लिए लाभकारी हो। भारत और तेलंगाना के संदर्भ में, वैश्विकरण का स्वागत तभी किया जा सकता है जब यह समाज के

प्रत्येक व्यक्ति के हित में हो। अब तक, वैश्विकरण का प्रभाव असमान रहा है और समृद्ध समाज को ही लाभ पहुँचाता रहा है। विश्व समुदाय के कुछ वर्गों के लिए, यह आर्थिक विकास और सामाजिक गतिशीलता का एक माध्यम रहा है, जिससे भागीदारी और संचार के नए अवसर खुले हैं। हालाँकि, विश्व की अधिकांश आबादी के लिए, वैश्विकरण ने और अधिक हाशिए पर धकेलने और गरीबी को बढ़ावा दिया है, जिससे देशों के भीतर और देशों के बीच असमानताएँ और बढ़ गई हैं। मेरे विचार से, उच्च शिक्षा को सभी के लिए सुलभ बनाने के लिए भारी निवेश किया जाना चाहिए। और अब समय आ गया है कि हम विकसित देशों से सीखें जहाँ अधिकांश छात्र सरकारी संस्थानों में दाखिला लेते हैं। एक बात अत्यंत सराहनीय है कि वर्तमान राज्य सरकार ने राज्य के कोने-कोने तक उच्च शिक्षा का प्रसार करने की अपनी गंभीर प्रतिबद्धता के तहत राज्य में सरकारी क्षेत्र के अंतर्गत कई विश्वविद्यालयों की स्थापना की है।

## संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. (2014). *शैक्षिक समाजशास्त्र*. नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग हाउस।
2. शर्मा, आर.ए. (2012). *शिक्षा एवं समाज*. मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।
3. सिंह, बी.एन. (2018). *भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ*. वाराणसी: चौखम्बा प्रकाशन।
4. कुमार, कृष्ण (2017). *शिक्षा का सांस्कृतिक संदर्भ*. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
5. NCERT (2020). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*. नई दिल्ली।
6. UNESCO (2015). *Education for All Global Monitoring Report* (हिन्दी अनुवाद)।
7. UNICEF (2019). *बच्चों की शिक्षा और समानता पर रिपोर्ट*।
8. भारत सरकार (2009). *शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE Act)*।



## बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या: कारण, रोकथाम के प्रयास एवं नीतिगत सुझाव

डॉ. विशाल गुप्ता

शिक्षाशास्त्र विभाग, एम0एल0के0 (पी0जी0) कॉलेज, बलरामपुर, (उ0प्र0)

E-mail : vishalgupta@mlkcollege.ac.in

### प्रस्तावना

बालक किसी भी राष्ट्र की अमूल्य धरोहर होते हैं। उनका शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास राष्ट्र के भविष्य को निर्धारित करता है। शिक्षा बच्चों का मौलिक अधिकार है, परन्तु आज भी अनेक बच्चे आर्थिक, सामाजिक एवं संरचनात्मक कारणों से विद्यालय छोड़ने को मजबूर हो जाते हैं और बाल श्रम की ओर धकेल दिए जाते हैं। बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने (ड्रॉपआउट) की समस्या एक-दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई सामाजिक चुनौती है, जो विकास, समानता और सामाजिक न्याय के मार्ग में बाधा उत्पन्न करती है। बाल श्रम (Child Labour) एक गंभीर सामाजिक-आर्थिक समस्या है, जो बच्चों के शिक्षा, स्वास्थ्य, मानसिक विकास और मानवाधिकारों को प्रभावित करती है। भारत जैसे विकासशील देश में गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी और सामाजिक असमानता के कारण लाखों बच्चे आज भी श्रम में संलग्न हैं। बाल श्रम न केवल बच्चों के भविष्य को बाधित करता है बल्कि राष्ट्र के समग्र विकास में भी बाधा उत्पन्न करता है। इसलिए इसे रोकने हेतु प्रभावी सरकारी नीतियाँ और योजनाएँ अत्यंत आवश्यक हैं।

**मुख्य शब्द :** बौद्धिक विकास, बाल श्रम, मौलिक अधिकार, आर्थिक असुरक्षा, मानवाधिकार

### 1. बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या का स्वरूप

बाल श्रम वह स्थिति है जिसमें बच्चे अपनी आयु के अनुरूप शिक्षा प्राप्त करने के बजाय आर्थिक गतिविधियों में लगे होते हैं। विद्यालय छोड़ना (Dropout) उस स्थिति को दर्शाता है जब विद्यार्थी प्राथमिक या माध्यमिक शिक्षा पूर्ण किए बिना पढ़ाई छोड़ देते हैं। दोनों समस्याएँ परस्पर जुड़ी हुई हैं — अधिकांश बाल श्रमिक बच्चे शिक्षा से बाहर होते हैं।

### 2. बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने के प्रमुख कारण

#### (क) आर्थिक कारण

- गरीबी एवं बेरोजगारी
- परिवार की आय बढ़ाने का दबाव
- ऋणग्रस्तता एवं आर्थिक असुरक्षा

#### (ख) सामाजिक कारण

- शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव
- लैंगिक भेदभाव (विशेषकर बालिकाओं में)
- बाल विवाह एवं पारिवारिक जिम्मेदारियाँ

#### (ग) शैक्षिक कारण

- विद्यालयों में आधारभूत सुविधाओं की कमी
- शिक्षण की गुणवत्ता निम्न होना
- शिक्षक अनुपस्थिति
- भाषा एवं पाठ्यक्रम की जटिलता

#### (घ) प्रशासनिक एवं संरचनात्मक कारण

- कानूनों का कमजोर क्रियान्वयन
  - ग्रामीण एवं दूरस्थ क्षेत्रों में विद्यालयों की कमी
  - प्रवासी मजदूर परिवारों के बच्चों की शिक्षा में बाधा
- 3. बाल श्रम एवं ड्रॉपआउट के दुष्परिणाम**
- बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास बाधित होना
  - अशिक्षा एवं गरीबी का दुष्चक्र जारी रहना
  - बाल शोषण एवं अपराध की संभावना बढ़ना
  - राष्ट्रीय मानव संसाधन विकास में बाधा
- 4. रोकथाम के लिए वर्तमान प्रयास**
- (क) सरकारी पहल**
- निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (RTE Act, 2009)
  - मध्याह्न भोजन योजना (Mid-Day Meal Scheme)
  - समग्र शिक्षा अभियान
  - बाल श्रम (निषेध एवं विनियमन) संशोधित अधिनियम
- (ख) सामाजिक एवं गैर-सरकारी प्रयास**
- गैर-सरकारी संगठनों द्वारा पुनर्वास कार्यक्रम
  - सामुदायिक जागरूकता अभियान
  - ब्रिज कोर्स एवं वैकल्पिक शिक्षा केंद्र
- (ग) आर्थिक सहायता योजनाएँ**
- छात्रवृत्ति योजनाएँ
  - बालिकाओं हेतु प्रोत्साहन योजनाएँ
  - प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT)
- 5. नीतिगत सुझाव (Policy Recommendations)**
- 1. आर्थिक सशक्तिकरण**
- गरीब परिवारों के लिए रोजगार एवं सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का विस्तार
  - शिक्षा से जुड़े परिवारों को आर्थिक प्रोत्साहन
- 2. गुणवत्तापूर्ण एवं समावेशी शिक्षा**
- विद्यालयों में डिजिटल एवं आधारभूत सुविधाओं का विकास
  - स्थानीय भाषा आधारित शिक्षण
  - कौशल आधारित शिक्षा को बढ़ावा
- 3. कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन**
- बाल श्रम कानूनों की सख्ती से निगरानी
  - बाल श्रमिकों के पुनर्वास हेतु विशेष तंत्र
- 4. समुदाय आधारित हस्तक्षेप**
- पंचायत एवं स्थानीय समुदाय की भागीदारी
  - अभिभावकों के लिए जागरूकता कार्यक्रम
- 5. प्रवासी एवं वंचित बच्चों के लिए विशेष नीति**
- पोर्टेबल शिक्षा व्यवस्था (Anywhere Schooling)

- मोबाइल स्कूल एवं आवासीय विद्यालय

#### 6. बालिका शिक्षा पर विशेष ध्यान

- सुरक्षित विद्यालय वातावरण
- अलग शौचालय एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ

#### बाल श्रम के प्रमुख कारण

1. गरीबी और आर्थिक मजबूरी – परिवार की आय बढ़ाने हेतु बच्चों को काम पर भेजा जाता है।
2. अशिक्षा और जागरूकता की कमी – माता-पिता शिक्षा के महत्व से अनभिज्ञ रहते हैं।
3. बेरोजगारी – वयस्कों को रोजगार न मिलने से बच्चे श्रम करने लगते हैं।
4. सामाजिक असमानता – ग्रामीण एवं वंचित वर्गों में समस्या अधिक दिखाई देती है।
5. सस्ती श्रम शक्ति की मांग – उद्योगों एवं असंगठित क्षेत्र में बच्चों का शोषण।

#### भारत में बाल श्रम की वर्तमान स्थिति

भारत में होटल, ढाबा, कारखानों, कृषि, घरेलू कार्य और निर्माण क्षेत्र में बाल श्रम अधिक पाया जाता है। सरकार द्वारा कई कानून बनाए जाने के बावजूद छिपे हुए (hidden) बाल श्रम की समस्या अभी भी मौजूद है।

#### बाल श्रम रोकने हेतु प्रमुख सरकारी नीतियाँ एवं कानून

##### 1. बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986 (संशोधित 2016)

- 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी व्यवसाय में काम कराने पर प्रतिबंध।
- 14-18 वर्ष के किशोरों को खतरनाक उद्योगों में काम करने पर रोक।
- उल्लंघन करने वालों के लिए कठोर दंड का प्रावधान।

##### 2. शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

- 6-14 वर्ष के बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा।
- बाल श्रम को अप्रत्यक्ष रूप से कम करने का महत्वपूर्ण साधन।

##### 3. राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना (NCLP)

- बाल श्रमिकों की पहचान, पुनर्वास और विशेष विद्यालयों में शिक्षा।
- पोषण, स्वास्थ्य जांच एवं कौशल प्रशिक्षण की व्यवस्था।

##### 4. मध्याह्न भोजन योजना

- विद्यालयों में बच्चों की उपस्थिति बढ़ाने और ड्रॉपआउट कम करने में सहायक।

##### 5. समग्र शिक्षा अभियान

- शिक्षा की गुणवत्ता सुधार कर बच्चों को विद्यालय से जोड़ना।

##### 6. किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम

- शोषित एवं जोखिमग्रस्त बच्चों की सुरक्षा और पुनर्वास।

#### बाल श्रम उन्मूलन हेतु सरकारी नीतिगत सुझाव

##### 1. आर्थिक सशक्तिकरण

- गरीब परिवारों को प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता (DBT)।
- रोजगार गारंटी योजनाओं का विस्तार।

##### 2. गुणवत्तापूर्ण एवं आकर्षक शिक्षा

- व्यावसायिक एवं कौशल आधारित शिक्षा।
- डिजिटल शिक्षा सुविधाओं का ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तार।

##### 3. कठोर कानून प्रवर्तन

- उद्योगों और संस्थानों का नियमित निरीक्षण।
  - बाल श्रम कराने वालों पर त्वरित न्याय एवं सख्त दंड।
- 4. सामाजिक जागरूकता अभियान**
- पंचायत स्तर पर जागरूकता कार्यक्रम।
  - मीडिया एवं NGO की भागीदारी।
- 5. पुनर्वास एवं परामर्श**
- rescued बच्चों के लिए मनोवैज्ञानिक सहायता।
  - परिवार पुनर्वास एवं कौशल प्रशिक्षण।
- 6. शिक्षा-रोजगार समन्वय नीति**
- स्कूल छोड़ चुके बच्चों के लिए ब्रिज कोर्से।
  - किशोरों के लिए सुरक्षित प्रशिक्षण एवं अप्रेंटिसशिप कार्यक्रम।
- 7. डेटा एवं निगरानी प्रणाली**
- बाल श्रम का राष्ट्रीय डिजिटल डेटाबेस।
  - राज्य एवं जिला स्तर पर निगरानी तंत्र।

बाल श्रम केवल कानूनी नहीं बल्कि सामाजिक एवं नैतिक समस्या भी है। इसके समाधान के लिए सरकार, समाज, परिवार और शिक्षा प्रणाली सभी की संयुक्त भूमिका आवश्यक है। प्रभावी नीतियों, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, आर्थिक सहयोग और सामाजिक जागरूकता के माध्यम से ही बाल श्रम मुक्त भारत का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

### शिक्षा में अपव्यय एवं अवरोधन (Wastage and Stagnation in Education)

शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास का आधार होती है। परंतु शिक्षा प्रणाली में कई ऐसी समस्याएँ मौजूद हैं जो शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधा उत्पन्न करती हैं। इनमें **अपव्यय (Wastage)** और **अवरोधन (Stagnation)** प्रमुख समस्याएँ हैं, विशेषकर प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा स्तर पर।

#### 1. शिक्षा में अपव्यय (Educational Wastage)

अर्थ

जब कोई विद्यार्थी अपनी शिक्षा पूर्ण किए बिना विद्यालय छोड़ देता है (Dropout), तब उस पर लगाए गए समय, धन और संसाधनों का पूर्ण उपयोग नहीं हो पाता। इसे **शिक्षा में अपव्यय** कहा जाता है।

उदाहरण

- प्राथमिक शिक्षा पूरी किए बिना विद्यालय छोड़ देना
- आर्थिक या सामाजिक कारणों से पढ़ाई बीच में रोक देना

अपव्यय के कारण

(क) आर्थिक कारण

- गरीबी एवं बाल श्रम
- परिवार की आय में सहयोग की आवश्यकता
- शिक्षा पर होने वाला खर्च

(ख) सामाजिक कारण

- बाल विवाह

- लैंगिक भेदभाव
- अभिभावकों की अशिक्षा

**(ग) शैक्षिक कारण**

- नीरस शिक्षण पद्धति
- विद्यालयों में संसाधनों की कमी
- शिक्षक-विद्यार्थी संबंधों की कमजोरी

**(घ) मनोवैज्ञानिक कारण**

- पढ़ाई में रुचि का अभाव
- आत्मविश्वास की कमी
- बार-बार असफलता

**अपव्यय के दुष्परिणाम**

- राष्ट्रीय संसाधनों की हानि
- अशिक्षा एवं बेरोजगारी में वृद्धि
- सामाजिक असमानता का विस्तार

**2. शिक्षा में अवरोधन (Educational Stagnation)**

**अर्थ-** जब कोई विद्यार्थी एक ही कक्षा में एक वर्ष से अधिक समय तक रुक जाता है या बार-बार असफल होकर उसी कक्षा को दोहराता है, तो इसे **अवरोधन** कहा जाता है।

**उदाहरण**

- कक्षा में फेल होकर पुनः उसी कक्षा में पढ़ना
- सीखने की गति का धीमा होना

**अवरोधन के कारण**

**(क) व्यक्तिगत कारण**

- सीखने की धीमी गति
- स्वास्थ्य समस्याएँ
- अध्ययन आदतों का अभाव

**(ख) पारिवारिक कारण**

- शिक्षा के प्रति उदासीनता
- घर में अध्ययन का अनुकूल वातावरण न होना

**(ग) विद्यालयीय कारण**

- अनुचित मूल्यांकन प्रणाली
- व्यक्तिगत भिन्नताओं की उपेक्षा
- भीड़भाड़ वाली कक्षाएँ

**(घ) पाठ्यक्रम संबंधी कारण**

- कठिन एवं अप्रासंगिक पाठ्यक्रम
- स्थानीय आवश्यकताओं से असंबंधित शिक्षा

**अवरोधन के दुष्परिणाम**

- विद्यार्थियों में हीनभावना
- विद्यालय छोड़ने की संभावना बढ़ना

- शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट

### 3. अपव्यय एवं अवरोधन में अंतर

आधार	अपव्यय	अवरोधन
अर्थ	शिक्षा अधूरी छोड़ना	एक ही कक्षा में रुक जाना
परिणाम	ड्रॉपआउट	कक्षा दोहराव
प्रभाव	संसाधनों की पूर्ण हानि	समय एवं ऊर्जा की हानि

### 4. अपव्यय एवं अवरोधन रोकने के उपाय

- बाल-केंद्रित एवं रुचिकर शिक्षण पद्धति अपनाना
- निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रभावी क्रियान्वयन
- छात्रवृत्ति एवं मध्याह्न भोजन योजनाएँ
- सतत एवं समग्र मूल्यांकन (CCE)
- अभिभावक-शिक्षक सहयोग बढ़ाना
- व्यावसायिक एवं कौशल आधारित शिक्षा
- परामर्श एवं मार्गदर्शन सेवाएँ

शिक्षा में अपव्यय एवं अवरोधन शिक्षा प्रणाली की गंभीर चुनौतियाँ हैं, जो न केवल विद्यार्थियों के भविष्य को प्रभावित करती हैं बल्कि राष्ट्रीय विकास को भी बाधित करती हैं। यदि शिक्षा को समावेशी, रुचिकर और जीवनोपयोगी बनाया जाए तथा सामाजिक-आर्थिक बाधाओं को दूर किया जाए, तो इन समस्याओं को काफी हद तक कम किया जा सकता है। बाल श्रम और विद्यालय छोड़ने की समस्या केवल शैक्षिक नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक और नैतिक चुनौती है। जब तक गरीबी उन्मूलन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और सामाजिक जागरूकता को एक साथ नहीं जोड़ा जाएगा, तब तक इस समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं है। सरकार, समाज, विद्यालय और परिवार — सभी के संयुक्त प्रयास से ही प्रत्येक बच्चे को शिक्षा का अधिकार और सुरक्षित बचपन सुनिश्चित किया जा सकता है।

### बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की अवधारणा

बाल श्रम से आशय ऐसे कार्य से है जिसमें बच्चे शिक्षा प्राप्त करने की आयु में मजदूरी या श्रम कार्य करने लगते हैं, जिससे उनका विकास और शिक्षा प्रभावित होती है। **विद्यालय छोड़ना** (School Dropout) वह स्थिति है जब छात्र निर्धारित शिक्षा स्तर पूर्ण किए बिना पढ़ाई बीच में ही छोड़ देता है।

### बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने के प्रमुख कारण

#### 1. आर्थिक कारण

- गरीबी बाल श्रम का सबसे बड़ा कारण है।
- परिवार की आय बढ़ाने हेतु बच्चों को काम पर भेजा जाता है।
- शिक्षा पर होने वाला खर्च गरीब परिवारों के लिए बोझ बन जाता है।

#### 2. सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारण

- अशिक्षा एवं जागरूकता की कमी
- बाल विवाह और लैंगिक भेदभाव
- शिक्षा के प्रति नकारात्मक सामाजिक दृष्टिकोण

### 3. शैक्षिक कारण

- विद्यालयों में आधारभूत सुविधाओं का अभाव
- शिक्षण की गुणवत्ता कम होना
- शिक्षक-छात्र अनुपात असंतुलित होना
- विद्यालय की दूरी एवं परिवहन समस्या

### 4. पारिवारिक एवं मनोवैज्ञानिक कारण

- अभिभावकों का शिक्षा के प्रति उदासीन रवैया
- घरेलू कार्यों में बच्चों की भागीदारी
- पढ़ाई में रुचि की कमी या सीखने में कठिनाई

### 5. प्रवासन एवं असंगठित श्रम क्षेत्र

- प्रवासी मजदूर परिवारों के बच्चों की शिक्षा बाधित होती है।
- अस्थायी रोजगार के कारण नियमित स्कूल जाना संभव नहीं हो पाता।

### बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने के दुष्परिणाम

- बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास बाधित होता है।
- अशिक्षा और गरीबी का दुष्चक्र जारी रहता है।
- बाल अपराध और शोषण की संभावना बढ़ती है।
- देश की मानव संसाधन क्षमता कमजोर होती है।

### रोकथाम के लिए किए गए प्रयास

#### 1. सरकारी प्रयास

- निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था
- मध्याह्न भोजन योजना (Mid-Day Meal)
- छात्रवृत्ति एवं निःशुल्क पुस्तक-वर्दी वितरण
- बाल श्रम निषेध कानूनों का निर्माण

#### 2. शैक्षिक पहल

- समावेशी शिक्षा कार्यक्रम
- ब्रिज कोर्स एवं वैकल्पिक शिक्षा केंद्र
- ड्रॉपआउट बच्चों के पुनः नामांकन अभियान

#### 3. सामाजिक एवं गैर-सरकारी प्रयास

- स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा जागरूकता अभियान
- समुदाय आधारित शिक्षा कार्यक्रम

### नीतिगत सुझाव

#### 1. आर्थिक सशक्तिकरण

- गरीब परिवारों को प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता
- कौशल विकास एवं रोजगार योजनाएँ

#### 2. शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार

- प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति द्वारा स्थानीय भाषा में शिक्षण व्यवस्था
  - डिजिटल एवं गतिविधि आधारित शिक्षण
- 3. कठोर कानून क्रियान्वयन**
- बाल श्रम कानूनों का सख्ती से पालन
  - बाल श्रम कराने वाले नियोक्ताओं पर कठोर दंड
- 4. सामुदायिक भागीदारी**
- ग्राम पंचायत एवं अभिभावक समितियों की सक्रिय भूमिका
  - स्कूल-समुदाय सहयोग मॉडल
- 5. विशेष सहायता कार्यक्रम**
- प्रवासी एवं वंचित बच्चों के लिए लचीली शिक्षा व्यवस्था
  - परामर्श एवं मनोवैज्ञानिक सहयोग

### उपसंहार

बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या केवल शैक्षिक नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक चुनौती है। जब तक गरीबी, असमानता और जागरूकता की कमी दूर नहीं होगी, तब तक इस समस्या का पूर्ण समाधान संभव नहीं है। सरकार, समाज, विद्यालय एवं अभिभावकों के संयुक्त प्रयास से ही प्रत्येक बच्चे को शिक्षा का अधिकार सुनिश्चित किया जा सकता है। शिक्षित बालक ही सशक्त राष्ट्र का निर्माण करते हैं, इसलिए बाल श्रम का उन्मूलन और विद्यालय में बच्चों की निरंतर उपस्थिति राष्ट्र निर्माण की अनिवार्य शर्त है। बालक किसी भी राष्ट्र की अमूल्य संपत्ति होते हैं। उनका समुचित विकास शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षित वातावरण पर निर्भर करता है। किन्तु भारत सहित अनेक विकासशील देशों में **बाल श्रम** और **विद्यालय छोड़ने (ड्रॉपआउट)** की समस्या आज भी गंभीर सामाजिक-आर्थिक चुनौती बनी हुई है। गरीबी-, सामाजिक असमानता और शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी के कारण लाखों बच्चे शिक्षा से वंचित होकर श्रम में संलग्न हो जाते हैं, जिससे उनका भविष्य और राष्ट्रीय विकास दोनों प्रभावित होते हैं।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. – *भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ*
2. शर्मा, आर.ए. – *शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार*
3. सिंह, एस.पी. – *शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन*
4. पाण्डेय, रामशंकर – *शैक्षिक अनुसंधान के सिद्धांत एवं विधियाँ*
5. मिश्रा, एस.पी. – *भारतीय शिक्षा प्रणाली और नीतियाँ*



## बालिका शिक्षा की वर्तमान स्थिति एवं जीवन में समायोजन के संदर्भ में सुधारात्मक प्रयास

प्रो० विजय कुमार राय

आचार्य, बी०एड० विभाग, (शोध निर्देशक) एवं अधिष्ठाता,  
शिक्षा संकाय, सिद्धार्थ विश्वविद्यालय- सिद्धार्थनगर, (उत्तर प्रदेश)

यशवन्त कुमार, शोधार्थी, ( बी०एड०, एम०एड०)

एच०आर०पी०जी०कॉलेज खलीलाबाद-संतकबीरनगर (उत्तर प्रदेश)

### भूमिका

शिक्षा किसी भी समाज के विकास और प्रगति का आधार होती है। बालिका शिक्षा न केवल व्यक्तिगत उन्नति का माध्यम है बल्कि सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास की भी कुंजी है। फिर भी आज भारत सहित विश्व के अनेक देशों में बालिकाएँ शिक्षा के क्षेत्र में असमानता का सामना कर रही हैं। यह असमानता लैंगिक भेदभाव, सामाजिक रूढ़ियों, आर्थिक कठिनाइयों तथा संरचनात्मक बाधाओं के कारण उत्पन्न होती है। बालिका शिक्षा का प्रभाव केवल एक व्यक्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह पूरे समाज को प्रभावित करता है। शिक्षित बालिका एक जागरूक नागरिक, सक्षम माँ और आत्मनिर्भर महिला बनती है। वह स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण तथा परिवार नियोजन के प्रति अधिक सजग रहती है। इससे आने वाली पीढ़ियाँ भी शिक्षित और स्वस्थ बनती हैं।

शिक्षित महिलाओं की भागीदारी से आर्थिक विकास भी तेज होता है। वे रोजगार प्राप्त कर परिवार की आय बढ़ाती हैं तथा गरीबी उन्मूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार बालिका शिक्षा राष्ट्र की मानव संसाधन क्षमता को मजबूत करती है।

**संकेत शब्द**— बालिका शिक्षा , लैंगिक भेदभाव , , सांस्कृतिक विकास समग्र विकास , सामाजिक सशक्तिकरण |

### परिचय

शिक्षा मानव जीवन के सर्वांगीण विकास का आधार है। यह व्यक्ति को ज्ञान, कौशल, आत्मविश्वास और सामाजिक चेतना प्रदान करती है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके नागरिकों की शिक्षा पर निर्भर करती है, जिसमें बालिकाओं की शिक्षा विशेष महत्व रखती है। कहा जाता है कि “यदि एक पुरुष शिक्षित होता है तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है, लेकिन यदि एक महिला शिक्षित होती है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है।” इसके बावजूद समाज में बालिका शिक्षा के क्षेत्र में अभी भी असमानता विद्यमान है, जो सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से उत्पन्न होती है।

### बालिका शिक्षा में असमानता का अर्थ

बालिका शिक्षा में असमानता का आशय लड़कों और लड़कियों के बीच शिक्षा के अवसरों, संसाधनों, गुणवत्ता, नामांकन तथा शिक्षा की निरंतरता में पाए जाने वाले अंतर से है। यह असमानता केवल विद्यालय में प्रवेश तक सीमित नहीं होती, बल्कि उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा और रोजगार के अवसरों तक भी दिखाई देती है।

### बालिका शिक्षा की वर्तमान स्थिति

भारत में पिछले वर्षों में बालिका शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं के नामांकन में वृद्धि हुई है, परंतु माध्यमिक और उच्च शिक्षा स्तर पर उनकी संख्या अपेक्षाकृत कम हो जाती है।

1. **नामांकन और ड्रॉपआउट समस्या** – प्रारंभिक शिक्षा में प्रवेश बढ़ा है, लेकिन किशोरावस्था में बाल विवाह, घरेलू जिम्मेदारियाँ और आर्थिक समस्याओं के कारण कई बालिकाएँ पढ़ाई छोड़ देती हैं।
2. **ग्रामीण एवं शहरी अंतर** – ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की दूरी, परिवहन की कमी और सुरक्षा संबंधी चिंताएँ शिक्षा में बाधा बनती हैं।
3. **डिजिटल विभाजन** – ऑनलाइन शिक्षा के दौर में कई बालिकाएँ मोबाइल, इंटरनेट और डिजिटल संसाधनों से वंचित रह जाती हैं।
4. **सामाजिक मानसिकता** – कई परिवारों में आज भी लड़कों की शिक्षा को अधिक प्राथमिकता दी जाती है।

बालिका शिक्षा की राष्ट्रीय विकास में भूमिका

बालिका शिक्षा निम्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय विकास को गति देती है—

1. **आर्थिक विकास** – शिक्षित महिलाएँ कार्यबल में शामिल होकर उत्पादन बढ़ाती हैं।
2. **सामाजिक समानता** – शिक्षा लैंगिक भेदभाव को कम करती है।
3. **स्वास्थ्य सुधार** – शिक्षित माताएँ बच्चों के स्वास्थ्य और पोषण पर ध्यान देती हैं।
4. **जनसंख्या नियंत्रण** – शिक्षा के कारण विवाह और मातृत्व की आयु बढ़ती है।
5. **लोकतांत्रिक सशक्तिकरण** – शिक्षित महिलाएँ अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होती हैं और लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेती हैं।

### वर्तमान चुनौतियाँ

शिक्षा किसी भी समाज के विकास का मूल आधार है। जब तक समाज की आधी आबादी अर्थात् बालिकाएँ शिक्षित नहीं होंगी, तब तक समग्र विकास संभव नहीं है। वर्तमान समय में भारत में बालिका शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, परंतु अभी भी अनेक चुनौतियाँ मौजूद हैं, जो इसके व्यापक विस्तार में बाधा बन रही हैं। भारत में बालिका शिक्षा के क्षेत्र में पिछले

कुछ वर्षों में सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिला है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के लागू होने के बाद शिक्षा को अधिक समावेशी और समान बनाने पर जोर दिया गया है।

प्राथमिक स्तर पर आज लड़कियों का नामांकन लगभग लड़कों के बराबर हो गया है। कई राज्यों में तो बालिकाओं का नामांकन अनुपात लड़कों से अधिक भी देखा गया है। माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा में भी बालिकाओं की भागीदारी में निरंतर वृद्धि हो रही है।

सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनाएँ जैसे बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना तथा समग्र शिक्षा अभियान ने बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन योजनाओं के माध्यम से न केवल शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ी है, बल्कि बालिकाओं को विद्यालय तक पहुँचाने में भी सहायता मिली है।

इसके अतिरिक्त, डिजिटल शिक्षा और तकनीकी साधनों के उपयोग से भी बालिकाओं को नए अवसर प्राप्त हुए हैं। शहरी क्षेत्रों में ऑनलाइन शिक्षा और स्मार्ट कक्षाओं का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

हालाँकि भारत में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए अनेक प्रयास हुए हैं, फिर भी कई बाधाएँ मौजूद हैं—

- गरीबी और आर्थिक असमानता
- बाल विवाह की प्रथा
- सामाजिक रूढ़ियाँ और लैंगिक भेदभाव
- विद्यालयों की दूरी एवं सुरक्षा की समस्या
- डिजिटल विभाजन और संसाधनों की कमी

ग्रामीण एवं वंचित क्षेत्रों में ये समस्याएँ अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।

सरकारी एवं सामाजिक प्रयास

सरकार ने बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए अनेक योजनाएँ शुरू की हैं, जैसे—

- बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ अभियान
- समग्र शिक्षा अभियान
- मध्याह्न भोजन योजना
- छात्रवृत्ति एवं निःशुल्क शिक्षा योजनाएँ

इन प्रयासों से नामांकन दर में वृद्धि हुई है, परंतु गुणवत्ता और निरंतरता सुनिश्चित करना अभी भी आवश्यक है।

सशक्तिकरण के सुझाव

- समाज में शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित किया जाए।

- ग्रामीण क्षेत्रों में सुरक्षित एवं सुविधायुक्त विद्यालय स्थापित हों।
- डिजिटल शिक्षा संसाधनों की उपलब्धता बढ़ाई जाए।
- अभिभावकों को जागरूक करने हेतु अभियान चलाए जाएँ।
- कौशल आधारित और रोजगारपरक शिक्षा पर बल दिया जाए।

बालिका शिक्षा में असमानता के प्रमुख कारण

- लैंगिक भेदभाव एवं रूढ़िवादी सोच
- गरीबी और आर्थिक असमानता
- बाल विवाह और सामाजिक परंपराएँ
- सुरक्षा एवं आधारभूत सुविधाओं का अभाव
- शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी
- स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी समस्याएँ

ये सभी कारक मिलकर बालिकाओं की शिक्षा को बाधित करते हैं और उन्हें समान अवसरों से वंचित कर देते हैं।

सुधारात्मक प्रयास

बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए सरकार और समाज द्वारा अनेक प्रयास किए जा रहे हैं।

(1) सरकारी योजनाएँ

- **बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ** योजना के माध्यम से बालिकाओं के संरक्षण एवं शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है।
- **समग्र शिक्षा अभियान** के अंतर्गत गुणवत्तापूर्ण एवं समावेशी शिक्षा को प्रोत्साहित किया जा रहा है।
- **कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना** द्वारा वंचित वर्ग की बालिकाओं को आवासीय शिक्षा सुविधा प्रदान की जा रही है।

(2) सामाजिक एवं गैरसरकारी पहल-

- जागरूकता अभियान
- छात्रवृत्ति एवं शिक्षण सामग्री सहायता
- सामुदायिक शिक्षा कार्यक्रम

(3) डिजिटल शिक्षा पहल

स्मार्ट क्लास, ऑनलाइन शिक्षा प्लेटफॉर्म और डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों के माध्यम से शिक्षा की पहुँच बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है।

बालिका सशक्तिकरण के लिए सुझाव

बालिका शिक्षा केवल व्यक्तिगत अधिकार नहीं बल्कि राष्ट्रीय आवश्यकता है। एक शिक्षित बालिका राष्ट्र की शक्ति, प्रगति और समृद्धि का आधार बनती है। यदि भारत को विकसित और सशक्त राष्ट्र बनाना है तो बालिका शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। “एक पुरुष शिक्षित होता है तो केवल एक व्यक्ति शिक्षित होता है, परंतु एक महिला शिक्षित होती है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है।”

### 1. सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन

लैंगिक समानता के प्रति समाज में सकारात्मक सोच विकसित करना आवश्यक है।

### 2. आर्थिक सहायता

- निःशुल्क शिक्षा एवं छात्रवृत्ति
- परिवहन सुविधा और साइकिल योजनाएँ

### 3. सुरक्षित विद्यालय वातावरण

- अलग शौचालय की व्यवस्था
- महिला शिक्षकों की नियुक्ति
- विद्यालय तक सुरक्षित आवागमन

### 4. डिजिटल समावेशन

बालिकाओं को डिजिटल उपकरण और इंटरनेट सुविधा उपलब्ध कराना।

### 5. कौशल एवं व्यावसायिक शिक्षा

तकनीकी एवं कौशल आधारित शिक्षा से आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना।

### 6. स्वास्थ्य एवं पोषण सुधार

किशोरियों के स्वास्थ्य, स्वच्छता और पोषण पर विशेष ध्यान देना।

### निष्कर्ष

बालिका शिक्षा में असमानता सामाजिक विकास के मार्ग में एक गंभीर चुनौती है। यद्यपि वर्तमान समय में स्थिति में सुधार हुआ है, फिर भी पूर्ण समानता प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयास आवश्यक हैं। सरकार, समाज, परिवार और शैक्षणिक संस्थानों के सामूहिक सहयोग से ही बालिकाओं को समान शैक्षिक अवसर प्रदान किए जा सकते हैं। शिक्षित बालिका एक सशक्त समाज और समृद्ध राष्ट्र की आधारशिला होती है। इसलिए बालिका शिक्षा को बढ़ावा देना केवल सामाजिक दायित्व नहीं बल्कि राष्ट्रीय आवश्यकता है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके नागरिकों की शिक्षा पर निर्भर करती है, और नागरिकों में आधी आबादी महिलाओं की होती है। इसलिए बालिका शिक्षा केवल सामाजिक मुद्दा नहीं बल्कि राष्ट्रीय विकास की आधारशिला है। यदि लड़कियाँ शिक्षित होंगी तो परिवार, समाज और राष्ट्र तीनों का समग्र विकास संभव होगा। आज के आधुनिक और प्रतिस्पर्धी युग में बालिका शिक्षा को राष्ट्रीय आवश्यकता के रूप में स्वीकार करना अनिवार्य हो गया है। निष्कर्षतः, बालिका शिक्षा के क्षेत्र में भारत ने उल्लेखनीय प्रगति की है, परंतु अभी भी अनेक चुनौतियाँ शेष हैं। इन चुनौतियों का समाधान केवल सरकारी प्रयासों से ही नहीं, बल्कि समाज की सोच में परिवर्तन, अभिभावकों की जागरूकता और सामूहिक प्रयासों से संभव है। जब प्रत्येक बालिका को समान, सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त होगी, तभी एक सशक्त और विकसित राष्ट्र का निर्माण संभव हो सकेगा।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. (2015). *शिक्षा का समाजशास्त्र*. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर।
2. शर्मा, आर.ए. (2012). *शैक्षिक मनोविज्ञान*. मेरठ: लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।
3. सिंह, आर.पी. (2018). *भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ*. दिल्ली: राधा पब्लिकेशन।
4. गुप्ता, एस.पी. (2016). *शिक्षा का दर्शन एवं समाजशास्त्र*. इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन।
5. मिश्रा, आर.एन. (2014). *शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन*. नई दिल्ली: अटलांटिक पब्लिशर्स।
6. वर्मा, के.एल. (2017). *महिला शिक्षा: समस्याएँ और समाधान*. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।
7. भारत सरकार (2020). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*. शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली।
8. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2019). *बालिका शिक्षा एवं सशक्तिकरण रिपोर्ट*. नई दिल्ली।
9. यूनिसेफ (UNICEF) (2018). *भारत में बालिका शिक्षा की स्थिति रिपोर्ट*।



## थारू बस्तियों में शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं का विश्लेषण : बलरामपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में

पुनीत कुमार शुक्ल (शोध छात्र)

एल.बी.एस. स्मारक महाविद्यालय, आनन्द नगर, महाराजगंज (उ०प्र०) भारत

प्रो. किरन सिंह (शोध निर्देशिका)

एल.बी.एस. स्मारक महाविद्यालय, आनन्द नगर, महाराजगंज (उ०प्र०) भारत

सार

प्रस्तुत शोध पत्र थारू बस्तियों में शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन है, जो उत्तर प्रदेश के बलरामपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में किया गया है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य थारू जनजातीय बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना की स्थिति, विद्यालय छोड़ने की दर तथा शिक्षा को प्रभावित करने वाले सामाजिक-आर्थिक कारकों का अन्वेषण करना है। शोध में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है तथा बलरामपुर जनपद की 12 थारू बस्तियों से 300 उत्तरदाताओं का उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन द्वारा चयन किया गया। परिकल्पना यह थी कि थारू बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना की कमी तथा सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन विद्यालय त्याग दर को बढ़ाते हैं। परिणाम दर्शाते हैं कि थारू बस्तियों में साक्षरता दर मात्र 41 प्रतिशत है, माध्यमिक स्तर पर विद्यालय छोड़ने की दर 62.4 प्रतिशत है तथा 73 प्रतिशत बस्तियों में पर्याप्त शैक्षिक अवसंरचना का अभाव है। निष्कर्षतः थारू बस्तियों में शिक्षा की दयनीय स्थिति बहुआयामी कारकों का परिणाम है, जिसमें आर्थिक विपन्नता, भौगोलिक दुर्गमता, सांस्कृतिक बाधाएँ तथा सरकारी योजनाओं का अपर्याप्त क्रियान्वयन प्रमुख हैं।

**मुख्य शब्द:** थारू जनजाति, शिक्षा समस्या, बलरामपुर, विद्यालय त्याग दर, जनजातीय साक्षरता

### 1. प्रस्तावना

भारत में जनजातीय समुदायों की शिक्षा सदैव एक चुनौतीपूर्ण विषय रहा है। जनगणना 2011 के अनुसार अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर 59 प्रतिशत थी, जबकि राष्ट्रीय औसत 73 प्रतिशत था (भारत सरकार, 2011)। उत्तर प्रदेश जैसे राज्य में जहाँ कुल 12 अनुसूचित जनजातियाँ निवास करती हैं, वहाँ थारू जनजाति सर्वाधिक जनसंख्या वाला जनजातीय समूह है (वर्मा, 2020)। थारू जनजाति हिमालय की तराई क्षेत्र में निवास करती है तथा भारत एवं नेपाल दोनों देशों में पायी जाती है। उत्तर प्रदेश में ये मुख्यतः बलरामपुर, बहराइच, लखीमपुर खीरी तथा पीलीभीत जनपदों में निवास करते हैं (भट्ट एवं सिंह, 2008)। बलरामपुर जनपद उत्तर प्रदेश के अति-पिछड़े जनपदों में गिना जाता है। जनगणना 2011 के आँकड़ों के अनुसार बलरामपुर की कुल जनसंख्या 21,48,665 है, जिसमें अनुसूचित जनजाति जनसंख्या का 1.16 प्रतिशत है। जनपद की समग्र साक्षरता दर 49.51 प्रतिशत है, जो उत्तर प्रदेश की औसत साक्षरता दर 67.68 प्रतिशत से काफी कम है। विशेष रूप से जनजातीय साक्षरता दर मात्र 41 प्रतिशत दर्ज की गयी, जो अत्यन्त चिन्ताजनक है (एनएचएसआरसी, 2021)। महिला साक्षरता की स्थिति और भी गम्भीर है, जहाँ बलरामपुर की महिला साक्षरता दर 38.43 प्रतिशत है, जो राज्य में सबसे निम्न में से एक है (प्रसाद एवं मिश्रा, 2023)।

थारू बस्तियाँ प्रायः वनों एवं नेपाल सीमा से सटे दुर्गम क्षेत्रों में स्थित हैं, जहाँ शैक्षिक संस्थाओं की अत्यन्त कमी है। लाहरी (2025) के शोध के अनुसार थारू जनजाति के 90 प्रतिशत से अधिक उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की दूरी के कारण विद्यालय त्याग दर अत्यधिक है। बानो एवं आरा (2023) ने लखीमपुर खीरी के थारू समुदाय पर अपने शोध में पाया कि आर्थिक विपन्नता, सांस्कृतिक पूर्वाग्रह तथा शैक्षिक अवसंरचना की कमी प्रमुख बाधाएँ हैं। कुमार (2020) ने भाषायी संक्रमण के प्रभाव को रेखांकित करते हुए बताया कि हिन्दी एवं अंग्रेजी की प्रभुत्वता से थारू बच्चों की

शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित होती है। यूडीआईएसई+ 2023-24 के आँकड़े दर्शाते हैं कि उत्तर प्रदेश में माध्यमिक स्तर पर विद्यालय छोड़ने की दर लगभग 14 प्रतिशत है, किन्तु जनजातीय क्षेत्रों में यह दर काफी अधिक है (शिक्षा मंत्रालय, 2024)। शर्मा (2015) ने थारू जनजाति के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों का अध्ययन करते हुए पाया कि शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ रही है, परन्तु व्यावहारिक बाधाएँ यथावत् हैं। प्रस्तुत शोध पत्र इन्हीं बहुआयामी समस्याओं का बलरामपुर जनपद के विशेष सन्दर्भ में गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है, ताकि नीति-निर्माताओं को साक्ष्य-आधारित सुझाव दिये जा सकें।

## 2. साहित्य समीक्षा

### 2.1 जनजातीय शिक्षा की समस्याएँ एवं राष्ट्रीय परिदृश्य

भारत में जनजातीय शिक्षा पर व्यापक शोध कार्य हुए हैं। जनगणना 2011 के अनुसार भारत में अनुसूचित जनजातियों की कुल जनसंख्या 10.43 करोड़ है, जो कुल जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत है, परन्तु उनकी साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से 14 प्रतिशत कम है (भारत सरकार, 2011)। आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) 2018-19 के अनुसार जनजातीय साक्षरता दर बढ़कर 69.4 प्रतिशत हुई, किन्तु सम्पूर्ण जनसंख्या की 78.1 प्रतिशत दर की तुलना में यह अभी भी न्यून है (जनजातीय कार्य मंत्रालय, 2020)। श्रीवास्तव, गुप्ता एवं कुमारी (2024) ने बिहार के बगहा क्षेत्र में थारू एवं गैर-थारू विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया, जिसमें पाया गया कि थारू विद्यार्थियों का शैक्षिक प्रदर्शन गैर-थारू विद्यार्थियों की तुलना में सांख्यिकीय रूप से निम्न था। प्राथमिक स्तर पर अनुसूचित जनजाति बच्चों की विद्यालय त्याग दर 35.6 प्रतिशत है, जबकि गैर-जनजातीय बच्चों की 27 प्रतिशत (शिक्षा सांख्यिकी, 2010-11)। सिंह (2018) ने थारू समुदाय के सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभावों का अध्ययन करते हुए पाया कि पारम्परिक व्यवसायों में संलग्नता तथा शिक्षा के प्रति सीमित जागरूकता प्रमुख बाधाएँ हैं। यूडीआईएसई+ 2024-25 के आँकड़ों के अनुसार प्राथमिक स्तर पर जनजातीय नामांकन लगभग सार्वभौमिक हो गया है, किन्तु माध्यमिक स्तर पर सकल नामांकन अनुपात 81.3 प्रतिशत तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर मात्र 51.9 प्रतिशत है, जो गम्भीर शैक्षिक क्षरण को दर्शाता है (मेहता, 2025)।

### 2.2 थारू जनजाति एवं बलरामपुर में शिक्षा की विशिष्ट चुनौतियाँ

थारू जनजाति पर विशिष्ट शोध साहित्य भी उपलब्ध है। वर्मा (2010) ने अपनी पुस्तक में थारू जनजाति की पर्यावरण-अनुकूल जीवनशैली एवं सामाजिक-सांस्कृतिक गतिशीलता का विस्तृत वर्णन किया। लाहरी (2025) ने उत्तर प्रदेश के थारू जनजाति की समकालीन समस्याओं पर शोध करते हुए पाया कि आधुनिक शिक्षा एवं कौशल विकास की कमी के कारण यह समुदाय आर्थिक रूप से पिछड़ा है। बानो एवं आरा (2023) ने लखीमपुर खीरी जनपद में थारू जनजाति की समस्याओं एवं चुनौतियों का अध्ययन किया, जिसमें 250 उत्तरदाताओं से आँकड़े एकत्र किये गये। उनके निष्कर्षों के अनुसार शैक्षिक संस्थाओं की दूरी, आर्थिक अभाव तथा सांस्कृतिक बाधाएँ प्रमुख चुनौतियाँ हैं। कुमार (2020) ने लखीमपुर खीरी में थारू भाषा के हास का अध्ययन करते हुए पाया कि शैक्षिक माध्यम में मातृभाषा के अभाव से बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित होती है। शर्मा (2015) ने 21वीं सदी में थारू जनजाति के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों का अध्ययन किया तथा पाया कि प्रवास एवं शहरीकरण ने शैक्षिक परिदृश्य को प्रभावित किया है। सिंह एवं वर्मा (2017) ने थारू जनजाति में निरन्तरता एवं परिवर्तन का अध्ययन करते हुए बताया कि 1967 में अनुसूचित जनजाति घोषित होने के पश्चात् ही शिक्षा की दिशा में प्रयास आरम्भ हुए, किन्तु शिक्षित व्यक्तियों का प्रतिशत अत्यन्त न्यून है। बलरामपुर जनपद में नेपाल सीमा क्षेत्र के वनों में बसी थारू बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना का गम्भीर अभाव है तथा सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में व्यापक भ्रष्टाचार की शिकायतें प्राप्त होती हैं (मिश्रा, 2022)।

### 3. उद्देश्य

1. बलरामपुर जनपद की थारू बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना की वर्तमान स्थिति तथा विद्यालय त्याग दर के स्वरूप एवं कारणों का विश्लेषण करना।
2. थारू बस्तियों में शिक्षा को प्रभावित करने वाले सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक कारकों की पहचान करना तथा सरकारी शैक्षिक योजनाओं के क्रियान्वयन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।

### 4. परिकल्पना

1. **H<sub>1</sub>**: थारू बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना (विद्यालय भवन, शिक्षक उपलब्धता, शैक्षिक सामग्री) की कमी का विद्यालय त्याग दर पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।
2. **H<sub>2</sub>**: थारू परिवारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति (आय स्तर, अभिभावकों की शिक्षा, व्यवसाय) तथा सांस्कृतिक कारक बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि एवं विद्यालय उपस्थिति को प्रभावित करते हैं।

### 5. शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध में वर्णनात्मक सर्वेक्षण अनुसन्धान अभिकल्प का प्रयोग किया गया है। शोध क्षेत्र बलरामपुर जनपद के तुलसीपुर एवं बलरामपुर विकासखण्डों की नेपाल सीमावर्ती थारू बस्तियाँ हैं। जनपद के कुल थारू आबादी वाले गाँवों में से 12 बस्तियों का उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि द्वारा चयन किया गया, जिनमें नेवलगढ़, मुतेहरा, भगवानपुर, सोनपुर, फोंगही, कन्हईडीह, विशुनपुर विश्राम, इमिलिया कोडर आदि सम्मिलित हैं। प्रत्येक बस्ती से 25 परिवारों का चयन किया गया, जिससे कुल प्रतिदर्श 300 उत्तरदाता हैं, जिनमें अभिभावक, विद्यार्थी तथा शिक्षक सम्मिलित हैं। आँकड़ा संकलन हेतु अर्द्ध-संरचित साक्षात्कार अनुसूची, प्रश्नावली तथा अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया। प्रश्नावली में शैक्षिक अवसंरचना, परिवार की सामाजिक-आर्थिक स्थिति, विद्यालय त्याग के कारण, सरकारी योजनाओं की जानकारी तथा शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति से सम्बन्धित प्रश्न सम्मिलित थे। द्वितीयक आँकड़े जनगणना 2011, एनएचएसआरसी, यूडीआईएसई+ 2023-24 तथा जनपद शिक्षा विभाग के अभिलेखों से प्राप्त किये गये। आँकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रतिशत, माध्य, मानक विचलन तथा कार्ई-वर्ग परीक्षण का प्रयोग किया गया। शोध की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने हेतु प्रश्नावली का पूर्व-परीक्षण 30 उत्तरदाताओं पर किया गया तथा क्रॉनबैक अल्फा गुणांक 0.82 प्राप्त हुआ।

### 6. परिणाम

तालिका 1: थारू बस्तियों में साक्षरता दर का तुलनात्मक विश्लेषण (जनगणना 2011 एवं सर्वेक्षण 2024)

श्रेणी	भारत (2011)	उ.प्र. (2011)	बलरामपुर (2011)	बलरामपुर अनु.ज.जा. (2011)	थारू बस्तियाँ (सर्वेक्षण 2024)
कुल साक्षरता (%)	73.0	67.68	49.51	41.0	44.6
पुरुष साक्षरता (%)	80.9	77.28	59.73	52.3	56.1
महिला साक्षरता (%)	64.6	57.18	38.43	29.8	33.2
लिंग अन्तर (%)	16.3	20.10	21.30	22.5	22.9

तालिका 1 में प्रस्तुत आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि थारू बस्तियों में साक्षरता दर राष्ट्रीय, राज्य एवं जनपद स्तर से काफी न्यून है। जनगणना 2011 में बलरामपुर जनपद की अनुसूचित जनजाति साक्षरता दर 41 प्रतिशत थी, जो 2024 के सर्वेक्षण में मामूली सुधार के साथ 44.6 प्रतिशत पायी गयी। महिला साक्षरता दर 29.8 प्रतिशत से बढ़कर 33.2 प्रतिशत हुई, किन्तु लिंग अन्तर

22.9 प्रतिशत बना हुआ है। राष्ट्रीय साक्षरता दर (73%) से तुलना करने पर थारू बस्तियों में लगभग 28 प्रतिशत का अन्तर दिखता है, जो शैक्षिक वंचना की गम्भीरता को दर्शाता है। पुरुष साक्षरता दर में अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति है, किन्तु महिला शिक्षा में विशेष हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

**तालिका 2: थारू बस्तियों में शैक्षिक स्तरानुसार विद्यालय त्याग दर (प्रतिशत में)**

शैक्षिक स्तर	थारू बालक (%)	थारू बालिका (%)	थारू कुल (%)	बलरामपुर कुल (%)	उ.प्र. कुल (%)
प्राथमिक (1-5)	28.3	34.7	31.2	14.0	3.7
उच्च प्राथमिक (6-8)	38.6	47.2	42.5	22.0	5.2
माध्यमिक (9-10)	54.8	71.6	62.4	31.0	10.9
उच्च माध्यमिक (11-12)	68.2	82.4	74.8	45.0	15.8

तालिका 2 के आँकड़े अत्यन्त चिन्ताजनक तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। थारू बस्तियों में प्राथमिक स्तर पर ही 31.2 प्रतिशत बच्चे विद्यालय छोड़ देते हैं, जो बलरामपुर के कुल 14 प्रतिशत तथा उत्तर प्रदेश के 3.7 प्रतिशत से बहुत अधिक है। माध्यमिक स्तर पर यह दर 62.4 प्रतिशत तक पहुँच जाती है। बालिकाओं की विद्यालय त्याग दर प्रत्येक स्तर पर बालकों से अधिक है, विशेषकर माध्यमिक स्तर पर बालिकाओं की 71.6 प्रतिशत त्याग दर लैंगिक असमानता की गम्भीरता को रेखांकित करती है। उच्च माध्यमिक स्तर तक पहुँचने वाले थारू बच्चों का प्रतिशत अत्यन्त न्यून है, जो उच्च शिक्षा तक पहुँच की विकट चुनौती को प्रदर्शित करता है।

**तालिका 3: थारू बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना की स्थिति (N=12 बस्तियाँ)**

अवसंरचना सूचक	उपलब्ध बस्तियाँ (संख्या)	उपलब्धता (%)	राज्य औसत (%)
1 कि.मी. के भीतर प्राथमिक विद्यालय	8	66.7	92.0
3 कि.मी. के भीतर उच्च प्राथमिक विद्यालय	5	41.7	78.0
5 कि.मी. के भीतर माध्यमिक विद्यालय	3	25.0	65.0
शौचालय सुविधा युक्त विद्यालय	4	33.3	93.4
पेयजल सुविधा युक्त विद्यालय	6	50.0	97.2

विद्युत सुविधा युक्त विद्यालय	3	25.0	82.0
कम्प्यूटर/इंटरनेट सुविधा	1	8.3	57.2
पर्याप्त शिक्षक-छात्र अनुपात (1:30)	2	16.7	48.0

तालिका 3 में प्रस्तुत आँकड़े शैक्षिक अवसंरचना की भयावह स्थिति को उजागर करते हैं। सर्वेक्षित 12 बस्तियों में से मात्र 8 (66.7%) में 1 किलोमीटर के भीतर प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध है, जबकि माध्यमिक विद्यालय केवल 25 प्रतिशत बस्तियों के 5 किलोमीटर के भीतर उपलब्ध है। शौचालय सुविधा मात्र 33.3 प्रतिशत विद्यालयों में उपलब्ध है, जो राज्य औसत 93.4 प्रतिशत से अत्यन्त कम है। कम्प्यूटर एवं इंटरनेट सुविधा मात्र एक बस्ती के विद्यालय में उपलब्ध है। शिक्षक-छात्र अनुपात केवल 16.7 प्रतिशत विद्यालयों में मानक अनुपात को पूरा करता है, जो शिक्षकों की गम्भीर कमी को दर्शाता है।

तालिका 4: विद्यालय त्याग के प्रमुख कारण (N=300 उत्तरदाता, बहुविकल्पीय उत्तर)

विद्यालय त्याग का कारण	उत्तरदाता संख्या	प्रतिशत (%)
आर्थिक कठिनाई/गरीबी	234	78.0
विद्यालय की दूरी	198	66.0
घरेलू/कृषि कार्य में संलग्नता	186	62.0
बालिका शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण	162	54.0
शिक्षकों की अनुपस्थिति/कमी	153	51.0
विद्यालय में अवसंरचना की कमी	141	47.0
बाल विवाह	117	39.0
भाषायी बाधा	105	35.0
पढ़ाई में रुचि न होना	96	32.0
सरकारी योजनाओं की जानकारी का अभाव	87	29.0

तालिका 4 के परिणाम दर्शाते हैं कि विद्यालय छोड़ने का सबसे प्रमुख कारण आर्थिक कठिनाई है, जिसे 78 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया। विद्यालय की दूरी (66%) तथा घरेलू एवं कृषि कार्यों में बच्चों की संलग्नता (62%) अन्य प्रमुख कारण हैं। बालिका शिक्षा के प्रति नकारात्मक सामाजिक दृष्टिकोण 54 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने रिपोर्ट किया, जो लैंगिक असमानता की जड़ को दर्शाता है। शिक्षकों की अनुपस्थिति (51%) एवं अवसंरचना की कमी (47%) आपूर्ति पक्ष की गम्भीर

चुनौतियाँ हैं। बाल विवाह (39%) विशेषकर बालिकाओं की शिक्षा को बाधित करने वाला सांस्कृतिक कारक है। भाषायी बाधा को 35 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने रेखांकित किया।

तालिका 5: परिकल्पना परीक्षण सारांश (काई-वर्ग परीक्षण)

परिकल्पना	चर	काई-वर्ग ( $X^2$ ) मान	स्वतन्त्रता की कोटि (df)	p- मान	सार्थकता स्तर	परिणाम
H <sub>1</sub> : शैक्षिक अवसंरचना की कमी → विद्यालय त्याग दर	अवसंरचना सूचक × विद्यालय त्याग	34.72	4	0.001	p < 0.01	परिकल्पना स्वीकृत
H <sub>2</sub> : सामाजिक-आर्थिक स्थिति → शैक्षिक उपलब्धि	आय/अभिभावक शिक्षा × शैक्षिक स्तर	28.56	6	0.003	p < 0.01	परिकल्पना स्वीकृत

परिकल्पना परीक्षण के परिणाम दोनों परिकल्पनाओं को सार्थक रूप से पुष्ट करते हैं। प्रथम परिकल्पना (H<sub>1</sub>) का काई-वर्ग मान 34.72 (df=4, p=0.001) प्राप्त हुआ, जो 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। इसका तात्पर्य है कि शैक्षिक अवसंरचना की कमी तथा विद्यालय त्याग दर के मध्य सार्थक सम्बन्ध है। जिन बस्तियों में विद्यालय दूर, अवसंरचना कमजोर तथा शिक्षकों की कमी थी, वहाँ विद्यालय त्याग दर सार्थक रूप से अधिक पायी गयी। द्वितीय परिकल्पना (H<sub>2</sub>) का काई-वर्ग मान 28.56 (df=6, p=0.003) प्राप्त हुआ, जो सामाजिक-आर्थिक स्थिति एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सम्बन्ध को प्रमाणित करता है। निम्न आय वर्ग तथा अशिक्षित अभिभावकों के बच्चों में विद्यालय त्याग दर सार्थक रूप से अधिक पायी गयी।

## 7. विवेचना

### 7.1 शैक्षिक अवसंरचना की कमी एवं विद्यालय त्याग दर

प्रस्तुत शोध के परिणाम स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि बलरामपुर जनपद की थारू बस्तियों में शैक्षिक अवसंरचना की गम्भीर कमी विद्यालय त्याग की ऊँची दर का एक प्रमुख कारण है। तालिका 3 के अनुसार मात्र 25 प्रतिशत बस्तियों में 5 किलोमीटर के भीतर माध्यमिक विद्यालय उपलब्ध है, जो यूडीआईएसई+ 2023-24 में दर्शाये गये राज्य औसत 65 प्रतिशत से काफी कम है (शिक्षा मंत्रालय, 2024)। लाहरी (2025) के शोध निष्कर्ष भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की दूरी थारू बच्चों, विशेषकर बालिकाओं के लिए सबसे बड़ी बाधा है। बानो एवं आरा (2023) ने भी अपने शोध में पाया कि शैक्षिक संस्थाओं तक भौतिक पहुँच की कमी थारू समुदाय की एक प्रमुख चुनौती है। शिक्षक-छात्र अनुपात की दयनीय स्थिति (मात्र 16.7% विद्यालयों में मानक अनुपात) शिक्षा की गुणवत्ता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। सिंह एवं

वर्मा (2017) ने भी अपने शोध में रेखांकित किया कि थारू क्षेत्रों में विद्यालयों में आधुनिक एवं तकनीकी सुविधाओं से युक्त सरकारी शैक्षिक संस्थानों का अभाव है। कम्प्यूटर एवं इण्टरनेट सुविधा का लगभग पूर्ण अभाव (मात्र 8.3%) डिजिटल विभाजन को और गहरा करता है, जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की डिजिटल शिक्षा की परिकल्पना के विपरीत है।

### 7.2 सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक बाधाएँ

शोध का दूसरा उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक कारकों की पहचान से सम्बन्धित था। तालिका 4 के परिणाम दर्शाते हैं कि आर्थिक कठिनाई (78%) विद्यालय छोड़ने का सर्वाधिक प्रमुख कारण है। वर्मा (2020) ने अपनी पुस्तक में थारू जनजाति की आर्थिक पिछड़ेपन का विस्तृत विश्लेषण करते हुए बताया कि निजी भूमि की कमी तथा आधुनिक कौशल विकास के अभाव में यह समुदाय गरीबी के चक्र में फँसा हुआ है। श्रीवास्तव, गुप्ता एवं कुमारी (2024) ने अपने तुलनात्मक अध्ययन में पाया कि सामाजिक-आर्थिक कारकों एवं सांस्कृतिक पहचान का शैक्षिक उपलब्धि पर गहरा प्रभाव पड़ता है। बालिका शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण (54%) तथा बाल विवाह (39%) विशिष्ट सांस्कृतिक बाधाएँ हैं, जो लैंगिक असमानता को स्थायी बनाती हैं। प्रसाद एवं मिश्रा (2023) ने उत्तर प्रदेश में लैंगिक साक्षरता विषमता के अपने अध्ययन में पाया कि बलरामपुर, बहराइच तथा श्रावस्ती जैसे नेपाल सीमावर्ती जनपदों में महिला साक्षरता दर सबसे न्यून है। भाषायी बाधा (35%) भी एक महत्वपूर्ण कारक है, जैसा कि कुमार (2020) ने अपने शोध में दर्शाया कि शिक्षा के माध्यम में मातृभाषा के अभाव से थारू बच्चों को विषय-वस्तु समझने में कठिनाई होती है, जो खराब शैक्षिक प्रदर्शन तथा विद्यालय छोड़ने में परिणत होती है। घरेलू एवं कृषि कार्यों में बच्चों की संलग्नता (62%) बाल श्रम की समस्या को भी इंगित करता है।

### 7.3 सरकारी योजनाओं की प्रभावशीलता

शोध के दूसरे उद्देश्य का एक महत्वपूर्ण आयाम सरकारी शैक्षिक योजनाओं के क्रियान्वयन की प्रभावशीलता का मूल्यांकन है। सर्वेक्षण में 29 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सरकारी योजनाओं की जानकारी के अभाव को विद्यालय छोड़ने का कारण बताया। जनजातीय कार्य मंत्रालय (2020) द्वारा संचालित एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस) योजना के अन्तर्गत देश भर में 285 विद्यालय कार्यरत हैं, किन्तु बलरामपुर जनपद में इसकी उपलब्धता अपर्याप्त है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 तथा समग्र शिक्षा अभियान जैसी पहलों ने प्राथमिक नामांकन में सुधार किया है, परन्तु शोध दर्शाता है कि प्रतिधारण एक गम्भीर चुनौती बनी हुई है (मेहता, 2025)। मिश्रा (2022) ने बलरामपुर में थारू विकास परियोजना के क्रियान्वयन में व्यापक भ्रष्टाचार की ओर ध्यान आकर्षित किया, जहाँ 6.90 करोड़ रुपये के बजट का समुचित उपयोग नहीं हो पाया। मध्याह्न भोजन योजना, छात्रवृत्ति तथा निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण जैसी योजनाएँ अस्तित्व में हैं, किन्तु थारू बस्तियों तक उनकी पहुँच सीमित है। शर्मा (2015) ने भी अपने शोध में पाया कि सरकारी योजनाओं का लाभ थारू समुदाय तक प्रभावी रूप से नहीं पहुँच पाता। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में जनजातीय शिक्षा के लिए विशेष प्रावधानों की परिकल्पना है, किन्तु इसका जमीनी स्तर पर क्रियान्वयन अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। बानो एवं आरा (2023) ने सुझाव दिया कि सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों को नवीन तरीके से नीतियाँ बनानी होंगी। कुल मिलाकर, शोध के दोनों उद्देश्य पूर्ण होते हैं तथा परिणाम दर्शाते हैं कि थारू बस्तियों में शिक्षा की दयनीय स्थिति बहुआयामी कारकों का सम्मिलित परिणाम है, जिसमें अवसंरचना, आर्थिक विपन्नता, सांस्कृतिक पूर्वाग्रह तथा प्रशासनिक शिथिलता प्रमुख हैं।

## 8. निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध से स्पष्ट होता है कि बलरामपुर जनपद की थारू बस्तियों में शिक्षा सम्बन्धी समस्याएँ अत्यन्त गम्भीर एवं बहुआयामी हैं। थारू बस्तियों की साक्षरता दर 44.6 प्रतिशत राष्ट्रीय औसत से 28 प्रतिशत न्यून है। माध्यमिक स्तर पर 62.4 प्रतिशत विद्यालय त्याग दर भविष्य के लिए चिन्ताजनक है। शैक्षिक अवसंरचना की गम्भीर कमी, आर्थिक विपन्नता, लैंगिक भेदभाव, भाषायी बाधाएँ तथा सरकारी योजनाओं के अपर्याप्त क्रियान्वयन प्रमुख कारण हैं। दोनों परिकल्पनाएँ सांख्यिकीय रूप से सार्थक पायी गयीं। अतः सुझाव दिया जाता है कि प्रत्येक थारू बस्ती में 3 किलोमीटर के भीतर माध्यमिक विद्यालय स्थापित किये जाएँ, आवासीय विद्यालयों का विस्तार हो, मातृभाषा आधारित बहुभाषी शिक्षा लागू हो, बालिका शिक्षा हेतु विशेष प्रोत्साहन योजनाएँ चलायी जाएँ, शिक्षकों की नियमित नियुक्ति हो तथा सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में पारदर्शिता सुनिश्चित की जाए।

## संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह, रामगोपाल (2018). *भारतीय जनजातियाँ और उनकी समस्याएँ*. नई दिल्ली: रावत पब्लिकेशन।
2. शर्मा, आर.एन. (2016). *शिक्षा समाजशास्त्र*. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर।
3. दुबे, एस.सी. (2014). *भारतीय समाज*. नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
4. अग्रवाल, जे.सी. (2017). *शिक्षा का समाजशास्त्र*. दिल्ली: विकास पब्लिशिंग हाउस।
5. मिश्रा, लक्ष्मीकांत (2015). *जनजातीय शिक्षा का विकास*. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।



## बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या कारण रोकथाम के प्रयास एवं नीतिगत सुझाव

डा०. नूतन कुमारी, सहायक प्राध्यापिका

शिक्षाशास्त्र विभाग, एस.एस.एल.एन.टी. महिला महाविद्यालय, धनबाद, झारखंड।

बाल श्रम का तात्पर्य ऐसे कार्यों से है जो बच्चों से उनका बचपन छीन उनको उनके भविष्य उनकी गरिमा, शारीरिक विकास, मानसिक विकास तथा शिक्षा से वंचित करके उनको आर्थिक लाभ के लिए मजदूरी करने पर मजबूर कर देता है। यह समाज की एक ऐसी भयावह व चिंताजनक समस्या है जो किसी भी राष्ट्र की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक कमजोरी, मानवाधिकारों तथा मानवीय विकास की धज्जियां उड़ा देता है और समाज को एक ऐसे पथ पर ले जाता है जिसका भविष्य अंधकारमय तथा दिशाहीन होता है। बाल श्रम एक वैश्विक समस्या है जो विकासशील देशों में बेहद आम है। यह अभिभावकों या मालिकों द्वारा बच्चों से आर्थिक लाभ पाने के लिए किया गया एक दबाव पूर्ण व्यवहार है जहां वे उसे ऐसे ऐसे उद्योगों या व्यवसाय में झोंक देते हैं जो बेहद खतरनाक होते हैं और उनके शारीरिक विकास या मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। जैसे -पटाखा उद्योग, चूड़ी के कारखाने, ईट भट्टी, रसायन उद्योग, विभिन्न प्रकार के खतरनाक फैक्ट्री इत्यादि।

अगर हम संवैधानिक रूप से बाल श्रम को परिभाषित करें तो भारत के संविधान 1950 के 24 वे अनुच्छेद के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी कारखाने, खदान या अन्य खतरनाक रोजगार में काम करने से रोकता है तथा यह कानूनी अपराध है। यह शोषण के विरुद्ध मौलिक अधिकार का हिस्सा है।

बाल श्रम एक ऐसा अभिशाप है जो हमारे समाज को ऐसे अंधकार में धकेल देता है जहां से हम एक विकसित समाज तथा विकसित राष्ट्र के कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। बाल श्रम सिर्फ बच्चों के लिए ही नहीं अपितु समाज को हानि पहुंचाने वाले प्रमुख कारकों में से एक है -जिनमें प्रमुख है विद्यालय छोड़ने की समस्या।

विद्यालय छोड़ने या ड्रॉप आउट की स्थिति वह है जब बच्चा प्राथमिक या माध्यमिक शिक्षा पूरी किए बिना अपनी पढ़ाई को बीच में ही छोड़ देता है। जब बच्चे विद्यालय छोड़ देते हैं तो इसका असर में केवल उनके व्यक्तिगत जीवन एवं विकास पर पड़ता है बल्कि देश के समग्र विकास पर भी इसका दूरगामी प्रभाव पड़ता है। शिक्षा की कमी से समाज में एक ऐसे वर्ग का जन्म होता है जिसमें कौशल की कमी होती है जिससे अंततः हमारे देश के उत्पादकता, प्रतिस्पर्धात्मकता और विकास प्रभावित होता है। यह न केवल सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को बढ़ाता है बल्कि समाज में व्याप्त विषमताओं को और भी गंभीर बना देता है। अंततः जन्म होता है समाज में अनुशासनहीनता, अपराध, अराजकता भ्रष्टाचार, हिंसा, गंदी मानसिकता का जो किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए एक नकारात्मक भूमिका निभाती है। अगर हम बाल श्रम एवं उनके विद्यालय छोड़ने के प्रमुख कारणों पर ध्यान दे तो हम विभिन्न परिस्थितियों में अनेक कारण देखते हैं जिनमें प्रमुख हैं:-

**आर्थिक कारण :-**

इनमें निम्नलिखित प्रमुख है :-

**गरीबी** - गरीबी किसी भी राष्ट्र की युवा शक्ति के लिए एक अभिशाप माना जाता है क्योंकि गरीबी समाज में बहुत सी बुराइयों को जन्म देती है -जिनमें विद्यालय छोड़ने की समस्या, नशा सेवन ,अपराध युक्त युवा पीढ़ी आदि प्रमुख है। शिक्षा ही समाज में व्याप्त तमाम बुराइयों की जड़ होती है।

### परिवार की आय बढ़ाने का दबाव

पारिवारिक जिम्मेदारी एक ऐसी समस्या है जो बच्चों को समय से पहले ही परिपक्व बना देती है तथा उन्हें विद्यालयी शिक्षा पूरी नहीं करने देती है। यह समय से पहले उन्हें पारिवारिक जिम्मेदारी के बोझ तले अपना भविष्य अंधकारमय दिशा में ले जाने को मजबूर कर देती है। यही कारण है कि वह परिवार की आय बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार के खतरनाक कामों में अपने आप को झोंक देता है जो ना तो उनके स्वास्थ्य के लिए सही होता है और नहीं उनके भविष्य के लिए।

### ऋणग्रस्तता

पारिवारिक ऋण की भरपाई करने के लिए भी माता-पिता मजबूरी वश अपने बच्चों को रोजगार से जोड़ देते हैं और परिणाम तब अपने स्कूली शिक्षा पूरी नहीं कर पाते हैं। ऐसी स्थिति में बच्चे अपने पारिवारिक जिम्मेदारियां का निर्वहन करते हुए अपना भविष्य शिक्षाहीन और दिशाहीन कर लेते हैं।

### सामाजिक कारण

#### अशिक्षा एवं जागरूकता की कमी

समाज में व्याप्त अशिक्षा बाल श्रम एवं बालकों के विद्यालय छोड़ने का प्रमुख कारण है। अशिक्षित परिवार शिक्षा के महत्व को समझ ही नहीं पता और वह अपने बच्चों को भी शिक्षित होने से पहले रोजगार के अवसर ढूंढने पर जोर देता है और उन्हें बाल श्रम में झोंक देता है।

यूनिसेफ के आंकड़ों के अनुसार दक्षिण एशिया (जिनमें भारत प्रमुख राष्ट्र है) में लगभग 12% बच्चे जिनकी आयु 5 से 14 वर्ष है वह बाल श्रम में शामिल है। **लैंगिक भेदभाव**

हमारा समाज क्योंकि आज भी पुरुष प्रधान है। हम चाहे कितनी भी तरक्की क्यों न कर ले या विकास के पथ पर कितने भी अग्रसर क्यों ना हो जाए लेकिन बात जब स्त्री एवं पुरुष के अधिकारों की आती है तो हमारा समाज आज भी पुरुष मानसिकता से ग्रस्त है और आज भी बालकों को प्राथमिकता दी जाती है। ऐसे में स्त्री शिक्षा पीछे छूट जाती है। बात अगर बालक एवं बालिका के शिक्षा को प्राथमिकता देने की आती है तो आज भी समाज बालकों की शिक्षा को अधिक महत्व देता है तथा बालिकाओं को घर के कामों के लिए या घर परिवार संभालने के लिए उपयुक्त मानता है और उसे वही प्राथमिकता दी जाती है।

भारतीय शिक्षा मंत्रालय द्वारा जारी (UDIS) 2024- 25 (यूनिफाइड डिस्ट्रिक्ट इनफॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन प्लस) रिपोर्ट के अनुसार अनुमानतः

6 से 14 वर्ष की 14.6% लड़कियां इस आयु समूह में विद्यालय में नहीं है।

11 से 13 वर्ष की लड़कियों में 35.3 प्रतिशत लड़कियां स्कूल में नहीं है।

वही 14 से 15 वर्ष की 21.4 प्रतिशत लड़कियां विद्यालय से बाहर है।

16 से 17 वर्ष की 22.5% लड़कियां विद्यालय में नहीं है।

यह आंकड़ा स्पष्ट संकेत देता है की उम्र बढ़ने के साथ-साथ लड़कियों के स्कूल Dropoutकी संख्या बढ़ती जाती है जो लैंगिक भेदभाव, लड़कियों की सामाजिक जिम्मेदारी में संलिप्तता एवं घरेलू कार्यों और कम उम्र में लड़कियों के विवाह आदि सामाजिक मुद्दों को दर्शाता है। **प्रवासी परिवारों की अस्थिर जीवन शैली**

प्रवासी परिवारों की सबसे बड़ी समस्या है कि वह अपने परिवार की बुनियादी जरूरत को पूरा करने के लिए अपने पारंपरिक व्यवसाय पर निर्भर करते हैं जिनमें उनके बच्चे भी शामिल होते हैं। प्रवासी परिवारों के व्यवसाय वह होते हैं जिनमें परिवार अपने आजीविका के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर मौसमी या अस्थायी रूप से जाते हैं। जिसका सबसे बड़ा उदाहरण है मौसमी कृषि जैसे पंजाब या हरियाणा के प्रवासी मजदूर गुजरात में गान्ना, कपास या धान की कटाई के लिए जाते हैं वहीं कश्मीर में सब के मौसम में सेब के बागान में काम करने के लिए जाते हैं असम में चाय के बागान में मौसम के अनुसार मजदूरी करने के लिए जाते हैं।

इसी प्रकार निर्माण क्षेत्र में बड़े शहरों में भवन, पुल, सड़क या व्यावसायिक भवनों में काम की मजदूरी के लिए जाते हैं।

वहीं ठेले या रेडी या छोटे व्यवसाय में भी एक बहुत बड़ा जन समूह एक जगह से दूसरे जगह प्रवासी होकर परिवार के साथ अपने स्थान बदलते रहते हैं। ऐसे व्यवसाय स्थान परिवर्तन पर निर्भर होते हैं और इसका सबसे बड़ा खामियाजा बच्चों को होता है जब उनकी शिक्षा प्रवास के दौरान बाधित होती है और उनको बाल श्रम में सम्मिलित होना पड़ता है।

### **शैक्षिक तथा प्रशासनिक कारण**

बालकों के विद्यालय छोड़ने के प्रमुख समस्याओं में स्कूल में शिक्षा की गुणवत्ता की कमी के साथ-साथ शिक्षकों की कमी एवं पर्याप्त सुविधाओं की कमी भी एक प्रमुख कारण है जिसकी वजह से बालक विद्यालय बीच में ही छोड़ देते हैं।

दूसरा प्रमुख कारण माध्यमिक विद्यालयों की बस्ती से दूरी एवं विद्यालय तक परिवहन की कमी भी है साथ ही निगरानी तंत्र की विफलता एवं पुनर्वास कार्यक्रमों के अपर्याप्तता और कानून का सही ढंग से पालन न होना, सरकारी सुविधाओं का धरातल पर सही दशा में नहीं पहुंचाना भी बालकों को बड़ी संख्या में विद्यालय छोड़ने पर मजबूर कर देता है और यह स्कूल ड्रॉप आउट का प्रमुख कारण माना जाता है।

### **बाल श्रम को रोकने के प्रयास**

#### **कानूनी प्रावधान**

भारत के संविधान में अनुच्छेद 24 के तहत एक मौलिक अधिकार के रूप में खतरनाक उद्योगों में बाल श्रम को प्रतिबंधित किया जाता है। 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को कारखाने, खदान या अन्य किसी खतरनाक व्यवसाय में काम करने की अनुमति नहीं देता है।

### सरकारी योजनाएं

सरकार ने मध्यान भोजन योजना प्रारंभ किया जिससे गरीब घर के बच्चों की बहुत बड़ी समस्या जो भूख की थी उसका समाधान हुआ और इस योजना की वजह से बाल श्रम में कमी तो आई ही साथ ही साथ बालकों में विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति भी कम पाई गई।

सरकार ने बच्चों के लिए मुफ्त किताबें, गणवेश तथा अन्य शिक्षण सामग्री को मुफ्त उपलब्ध करवाया साथ ही साथ गरीब बालिकाओं को निःशुल्क साइकिल जैसी सुविधा उपलब्ध करवा कर उनको विद्यालय जाने में होने वाली असुविधा से भी मुक्ति दिलवाई। इस सुविधा ने बाल श्रम को रोका और विद्यालय बीच में छोड़ने से छात्रों को मुक्ति करवा समग्र शिक्षा अभियान जो सरकार द्वारा चलाया गया अभियान था उससे जोड़ा।

सरकार द्वारा चलाया गया यह अभियान विद्यालय में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने में सहायक हुआ जिसकी वजह से विद्यालय ड्रॉप आउट की समस्या में कमी आई। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ जैसी योजनाएं भी इसमें कारगर साबित हुईं।

### गैर सरकारी संगठनों का प्रयास

“बचपन बचाओ” जैसे आंदोलन लोगों को बाल शिक्षा के

लिए प्रेरित करते रहे और बाल श्रम को रोकने के साथ-साथ स्कूल dropout की समस्या भी कम करने में सहायक सिद्ध हुई।

### बाल श्रम एवं विद्यालय ड्रॉप आउट समस्या पर नीतिगत सुझाव

बाल श्रम एवं विद्यालय ड्रॉप आउट को रोकने के लिए कुछ नीतिगत सुझाव निम्नलिखित हैं :-

हमें गरीबी को हटाने के लिए ऐसे कार्यक्रम चलाने होंगे जिससे लोगों का जीवन स्तर सुधरे तथा जीवन यापन से जुड़े संसाधन का क्षेत्र बढ़े, इससे लोगों में गरीबी हटेगी और शिक्षण को बढ़ावा मिलेगा।

### कौशल विकास के साथ-साथ रोजगार सृजन

लोगों को कुशल कारीगर बनाना उन्हें विभिन्न प्रकार के कौशल सिखाना ताकि वह स्वयं का रोजगार सृजित कर सकें और अपने आप को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बना सकें, इससे वह अपने परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे और उनके बच्चों को बाल श्रम जैसे अभिशाप से मुक्ति मिल पाएगी और वह शिक्षित होकर उच्च शिक्षा भी प्राप्त कर सकेंगे।

### शिक्षा के गुणवत्ता में सुधार

सरकार ऐसे शिक्षकों की नियुक्ति करें जो प्रशिक्षित एवं कुशल हो तथा अच्छी योग्यता रखते हों। उन्हें अपने विषय में महारत हासिल हो, ऐसे में वह उच्च शिक्षण तकनीक अपना कर बच्चों को विद्यालय आने के लिए प्रेरित कर सकेंगे। सरकार को साथ साथ सभी विद्यालयों को डिजिटल संसाधनों से युक्त करना होगा ताकि वह पर वहां पढ़ने वाले छात्र समय के साथ आवश्यकता को समझ सकें और पूरी दुनिया के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकें।

**छात्रवृत्ति एवं प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT)**--सरकार को चाहिए कि योग्य एवं कुशल छात्रों को प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति की सुविधा उपलब्ध करवाए जिससे मेधावी छात्र उच्च शिक्षा के लिए भी प्रेरित हो सके। छात्रावास की सुविधा छात्र एवं छात्राओं को उपलब्ध करवाया जाए। बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाए।

### कानून तंत्र का सख्त क्रियान्वयन

सरकार द्वारा पारित कानून का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए ताकि विधि व्यवस्था सुचारू रूप से चल सके। साथ ही इन कानूनों का निरीक्षण तंत्र भी मजबूत किया जाना चाहिए जिससे कानून व्यवस्था का सही उपयोग किया जा सके।

### समुदाय आधारित निगरानी

विभिन्न विद्यालय गतिविधियों में ग्राम पंचायत तथा स्थानीय समूह की भागीदारी सुनिश्चित होनी चाहिए ताकि विद्यालय व्यवस्था सुचारू रूप से चल सके और किसी प्रकार की मनमानी न हो पाए।

### निष्कर्ष

बाल श्रम एवं विद्यालय छोड़ने की समस्या केवल कानूनी या सरकारी जिम्मेदारी नहीं है बल्कि हमारे देश की सामाजिक एवं आर्थिक समस्या है। हमारे समाज का यह दायित्व है कि वह ऐसी हर व्यवस्था पर आवाज उठाए, उसके लिए हमारे समाज के हर अंग चाहे वह सरकार हो समाज हो परिवार हो या विद्यालय हो सभी को मिलकर प्रयास करना होगा। शिक्षा को बच्चों के अधिकार के साथ-साथ अवसर और उसके सशक्तिकरण का माध्यम भी बनाना होगा तब जाकर हम कोई अस्थायी समाधान प्राप्त कर पाएंगे।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (2006), *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (NCF-2005)*। नई दिल्ली: एनसीईआरटी।
2. शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार (2020), *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*। नई दिल्ली।
3. यूनिसेफ (2019), *भारत में बाल श्रम एवं शिक्षा की स्थिति* (हिन्दी संस्करण)। नई दिल्ली।
4. अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (2017), *बाल श्रम: वैश्विक अनुमान एवं प्रवृत्तियाँ* (हिन्दी अनुवाद)।
5. अग्रवाल, जे.सी. (2010), *शैक्षिक समाजशास्त्र*। नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग हाउस।
6. शर्मा, आर.ए. (2012), *शिक्षा का समाजशास्त्र*। मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।
7. राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (2018), *बाल अधिकार एवं संरक्षण पर रिपोर्ट*। नई दिल्ली।



## ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा बाधाएँ : नवाचारी प्रयास एवं भावी रणनीति

डॉ० अजय कुमार सिंह

प्राचार्य, शिक्षक शिक्षा विभाग, शक्ति स्मारक संस्थान दुल्हनपुर,,बलरामपुर (उत्तर प्रदेश) 271201

### भूमिका (Abstract)

भारत जैसे बहु-सांस्कृतिक और सामाजिक-आर्थिक विविधता वाले देश में शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख साधन है। ग्रामीण क्षेत्रों, आदिवासी समुदायों तथा शहरी मलिन बस्तियों (Slums) में रहने वाले बच्चों के लिए शिक्षा तक समान पहुँच आज भी एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। गरीबी, सामाजिक असमानता, संसाधनों की कमी, डिजिटल विभाजन, भाषा संबंधी समस्याएँ तथा पारिवारिक परिस्थितियाँ शिक्षा में बाधक हैं। वर्तमान शोध लेख का उद्देश्य इन क्षेत्रों में शिक्षा की प्रमुख बाधाओं का विश्लेषण करना, नवाचारी प्रयासों का अध्ययन करना तथा भविष्य की प्रभावी रणनीतियाँ प्रस्तुत करना है। भारत में शिक्षा का सार्वभौमिकरण एक संवैधानिक लक्ष्य है, जिसे शिक्षा का अधिकार अधिनियम के माध्यम से संस्थागत आधार प्राप्त हुआ। तथापि ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की पहुँच, गुणवत्ता और निरंतरता अब भी गंभीर चुनौती बनी हुई है। यह शोध लेख इन वंचित क्षेत्रों में शिक्षा संबंधी बाधाओं का विश्लेषण करते हुए नवाचारी प्रयासों तथा भावी रणनीतियों का समग्र विवेचन प्रस्तुत करता है।

**मुख्य शब्द:** समावेशी शिक्षा, ग्रामीण शिक्षा, आदिवासी शिक्षा, शहरी मलिन बस्तियाँ, शैक्षिक असमानता, नवाचार

### प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा मानव विकास और सामाजिक समानता की आधारशिला है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21-A शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता देता है, परंतु वास्तविकता में ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों के बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने में अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। भारत जैसे बहुलतावादी समाज में शिक्षा सामाजिक न्याय और सशक्तिकरण का प्रमुख साधन है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने समावेशी, समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर बल दिया है। इसके बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधनहीनता, आदिवासी अंचलों में सांस्कृतिक दूरी तथा शहरी मलिन बस्तियों में अस्थिर जीवनपरिस्थितियाँ शिक्षा की निरंतरता में बाधक हैं।

इन समुदायों में शिक्षा केवल विद्यालय तक पहुँच का प्रश्न नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, आर्थिक अवसर और सांस्कृतिक समावेशन का भी विषय है।

### अध्ययन के उद्देश्य (Objectives of the Study)

1. ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना।
2. शिक्षा में आने वाली प्रमुख बाधाओं की पहचान करना।
3. नवाचारी शैक्षिक प्रयासों का विश्लेषण करना।
4. भविष्य के लिए प्रभावी रणनीतियाँ सुझाना।

### शोध पद्धति (Research Methodology)

- **शोध प्रकार:** वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन
- **डेटा स्रोत:** द्वितीयक स्रोत (पुस्तकें, शोध पत्र, सरकारी रिपोर्ट, UNESCO एवं UNICEF रिपोर्ट)

• विश्लेषण विधि: तुलनात्मक एवं व्याख्यात्मक विश्लेषण  
ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की स्थिति

**(क) ग्रामीण क्षेत्र**

- विद्यालयों की दूरी एवं परिवहन की कमी
- शिक्षकों की अनुपस्थिति
- डिजिटल संसाधनों का अभाव
- बाल श्रम एवं आर्थिक दबाव

**(ख) आदिवासी क्षेत्र**

- मातृभाषा एवं शिक्षण भाषा में अंतर
- सांस्कृतिक असंगति
- भौगोलिक अलगाव
- शिक्षा के प्रति ऐतिहासिक उपेक्षा

**(ग) शहरी मलिन बस्तियाँ**

- अस्थायी आवास और पलायन
- परिवार की आर्थिक अस्थिरता
- बाल श्रम एवं घरेलू कार्य
- भीड़भाड़ एवं अध्ययन वातावरण का अभाव

**शिक्षा में प्रमुख बाधाएँ (Major Barriers)**

1. **आर्थिक बाधाएँ:** गरीबी, आय का अभाव
2. **सामाजिक बाधाएँ:** जाति, लिंग एवं सांस्कृतिक भेदभाव
3. **संरचनात्मक बाधाएँ:** विद्यालयों एवं संसाधनों की कमी
4. **डिजिटल विभाजन:** इंटरनेट एवं उपकरणों की अनुपलब्धता
5. **शैक्षणिक गुणवत्ता:** प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव

**नवाचारी प्रयास (Innovative Initiatives)**

**वैकल्पिक शिक्षण मॉडल**

- मोबाइल स्कूल एवं सामुदायिक शिक्षा केंद्र
- मल्टीग्रेड शिक्षण प्रणाली

**डिजिटल पहल**

- स्मार्ट क्लास एवं ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म
- रेडियो एवं टीवी आधारित शिक्षा

**सरकारी योजनाएँ**

- समग्र शिक्षा अभियान
- मध्याह्न भोजन योजना
- एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय

**समुदाय आधारित पहल**

- स्वयंसेवी संस्थाओं की सहभागिता
- अभिभावक जागरूकता कार्यक्रम

**भावी रणनीतियाँ (Future Strategies)**

1. स्थानीय संदर्भ आधारित पाठ्यक्रम विकसित करना।
2. मातृभाषा आधारित प्रारंभिक शिक्षा को बढ़ावा देना।
3. डिजिटल समावेशन हेतु कम लागत तकनीक उपलब्ध कराना।
4. शिक्षक प्रशिक्षण एवं स्थानीय भर्ती बढ़ाना।
5. समुदाय सहभागिता मॉडल अपनाना।
6. बालिका शिक्षा पर विशेष ध्यान देना।
7. स्कूल-से-रोजगार (School to Skill) मॉडल विकसित करना।

### चर्चा (Discussion)

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि शिक्षा की समस्या केवल संसाधनों की कमी नहीं बल्कि सामाजिक-आर्थिक संरचना से भी जुड़ी है। नवाचारी प्रयास तभी सफल होंगे जब स्थानीय संस्कृति, भाषा और समुदाय की भागीदारी को प्राथमिकता दी जाएगी।

ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा का सशक्तिकरण भारत के समावेशी विकास के लिए अनिवार्य है। शिक्षा को केवल नीतिगत स्तर पर नहीं बल्कि सामाजिक आंदोलन के रूप में लागू करना आवश्यक है। सरकार, समुदाय और शैक्षिक संस्थानों के संयुक्त प्रयास से ही शिक्षा की समानता सुनिश्चित की जा सकती है।

### समस्या का परिप्रेक्ष्य

#### (क) ग्रामीण क्षेत्र

- विद्यालयों की दूरी एवं परिवहन की समस्या
- प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव
- डिजिटल संसाधनों की कमी
- बाल श्रम एवं आर्थिक दबाव

#### (ख) आदिवासी क्षेत्र

- मातृभाषा और शिक्षण भाषा में अंतर
- सांस्कृतिक असंवेदनशील पाठ्यक्रम
- मौसमी प्रवासन
- सामाजिक बहिष्करण

#### (ग) शहरी मलिन बस्तियाँ

- अस्थायी आवास और प्रवासी परिवार
- विद्यालय त्याग (ड्रॉपआउट) की उच्च दर
- बाल श्रम और अनौपचारिक रोजगार
- डिजिटल विभाजन

### नवाचारी प्रयास

#### सामुदायिक आधारित शिक्षा मॉडल

ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में सामुदायिक सहभागिता से विद्यालय संचालन एवं स्थानीय युवाओं को 'शिक्षा मित्र' के रूप में प्रशिक्षित करने की पहल प्रभावी सिद्ध हुई है।

#### बहुभाषिक एवं मातृभाषा आधारित शिक्षण

आदिवासी क्षेत्रों में मातृभाषा आधारित प्रारंभिक शिक्षा से अधिगम स्तर में वृद्धि देखी गई है।

#### डिजिटल नवाचार

- मोबाइल लर्निंग वैन
- सौर ऊर्जा संचालित स्मार्ट कक्षाएँ
- ऑफलाइन डिजिटल कंटेंट
- रेडियो एवं सामुदायिक मीडिया आधारित शिक्षा

#### लचीली शिक्षा व्यवस्था

- ब्रिज कोर्स
- ओपन स्कूलिंग
- कार्य-अनुभव आधारित शिक्षण

#### सार्वजनिक-निजी सहभागिता (PPP)

गैर-सरकारी संगठनों द्वारा पूरक शिक्षा, पोषण एवं जीवन-कौशल कार्यक्रमों का संचालन।

#### प्रमुख सरकारी पहलें

- समग्र शिक्षा अभियान
- एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय योजना
- प्रधानमंत्री पोषण शक्ति निर्माण योजना

इन योजनाओं ने नामांकन बढ़ाने, पोषण सुधारने और बुनियादी ढाँचे को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

#### भावी रणनीति

##### तकनीकी समावेशन

- कम लागत वाले टैबलेट/डिवाइस
- ऑफलाइन ई-लाइब्रेरी
- स्थानीय भाषा में डिजिटल सामग्री

##### शिक्षक सशक्तिकरण

- निरंतर व्यावसायिक विकास
- स्थानीय समुदाय से शिक्षक भर्ती
- डिजिटल दक्षता प्रशिक्षण

##### सामाजिक-आर्थिक समर्थन

- प्रत्यक्ष लाभ अंतरण (DBT)
- छात्रवृत्ति एवं परिवहन सुविधा
- बाल श्रम उन्मूलन की सख्त निगरानी

##### नीति-स्तरीय सुधार

- विकेन्द्रीकृत योजना निर्माण
- क्षेत्र-विशिष्ट पाठ्यक्रम

- डेटा आधारित शैक्षिक नियोजन

### समावेशी दृष्टिकोण

- लैंगिक समानता
- दिव्यांग-अनुकूल अधोसंरचना
- जीवन-कौशल एवं व्यावसायिक शिक्षा

ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की चुनौतियाँ बहुआयामी हैं। समाधान भी बहुस्तरीय और समन्वित होने चाहिए। नवाचार, तकनीकी समावेशन, सामुदायिक सहभागिता और नीति-स्तरीय प्रतिबद्धता के माध्यम से शिक्षा को वास्तव में समावेशी बनाया जा सकता है। यदि भावी रणनीतियाँ स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार की जाएँ, तो शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का सशक्त साधन सिद्ध हो सकती है।

शिक्षा मानव विकास का आधार है तथा सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक उन्नति का प्रमुख साधन मानी जाती है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति उसके नागरिकों की शिक्षा के स्तर पर निर्भर करती है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में ग्रामीण क्षेत्रों, आदिवासी समुदायों तथा शहरी मलिन बस्तियों (स्लम) में रहने वाले लोगों तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पहुँचाना एक बड़ी चुनौती है। इन क्षेत्रों में शिक्षा केवल विद्यालय तक पहुँच का प्रश्न नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समान अवसर और समावेशी विकास का मुद्दा भी है।

### ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति

ग्रामीण भारत में शिक्षा का विस्तार हुआ है, परंतु गुणवत्ता और निरंतरता अभी भी चिंता का विषय है।

### प्रमुख विशेषताएँ

- विद्यालयों की संख्या बढ़ी है, पर संसाधनों की कमी बनी हुई है।
- प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव।
- आर्थिक कारणों से बाल श्रम और विद्यालय छोड़ने की समस्या।
- डिजिटल संसाधनों की सीमित उपलब्धता।

ग्रामीण परिवारों में शिक्षा की अपेक्षा आजीविका को प्राथमिकता दी जाती है, जिससे बच्चों की नियमित उपस्थिति प्रभावित होती है।

### आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा की स्थिति

आदिवासी समाज भौगोलिक, भाषाई और सांस्कृतिक दृष्टि से विशिष्ट होता है। शिक्षा व्यवस्था अक्सर उनकी स्थानीय आवश्यकताओं से मेल नहीं खाती।

### प्रमुख समस्याएँ

- दूरस्थ एवं दुर्गम क्षेत्रों में विद्यालयों की कमी।
- मातृभाषा में शिक्षा का अभाव।

- सांस्कृतिक असंगति के कारण शिक्षा से दूरी।
- गरीबी और विस्थापन की समस्या।

कई बार विद्यालयी पाठ्यक्रम आदिवासी जीवन शैली से असंबंधित होने के कारण बच्चों की रुचि कम हो जाती है।

### शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा की स्थिति

शहरी क्षेत्रों में विद्यालय उपलब्ध होने के बावजूद मलिन बस्तियों के बच्चों को शिक्षा से जुड़ने में कठिनाइयाँ आती हैं।

### प्रमुख बाधाएँ

- अस्थायी निवास और बार-बार स्थान परिवर्तन।
- माता-पिता का असंगठित श्रम क्षेत्र में कार्यरत होना।
- बाल श्रम एवं घरेलू कार्यों में संलग्नता।
- भीड़भाड़, असुरक्षित वातावरण और अध्ययन हेतु स्थान का अभाव।

इन परिस्थितियों में बच्चों की शिक्षा निरंतरता बनाए रखना कठिन हो जाता है।

### शिक्षा में प्रमुख बाधाएँ

ग्रामीण, आदिवासी और मलिन बस्तियों में शिक्षा से जुड़ी सामान्य बाधाएँ निम्न हैं—

1. **आर्थिक बाधाएँ** – गरीबी, संसाधनों की कमी।
2. **सामाजिक बाधाएँ** – लैंगिक असमानता, सामाजिक रूढ़ियाँ।
3. **भौगोलिक बाधाएँ** – दूरस्थ क्षेत्र और परिवहन की समस्या।
4. **भाषाई बाधाएँ** – मातृभाषा और शिक्षण भाषा में अंतर।
5. **डिजिटल विभाजन** – तकनीकी संसाधनों की असमान उपलब्धता।
6. **शैक्षिक गुणवत्ता की कमी** – शिक्षक प्रशिक्षण एवं अधोसंरचना का अभाव।

### नवाचारी प्रयास (Innovative Initiatives)

सरकार, गैर-सरकारी संगठनों तथा समुदायों द्वारा अनेक नवाचारी प्रयास किए जा रहे हैं—

#### (क) वैकल्पिक शिक्षण मॉडल

- मोबाइल स्कूल एवं सामुदायिक शिक्षा केंद्र।
- बहुभाषीय शिक्षा पद्धति।
- गतिविधि आधारित शिक्षण (Activity-Based Learning)।

#### (ख) तकनीकी हस्तक्षेप

- डिजिटल कक्षाएँ और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म।
- रेडियो एवं टीवी आधारित शिक्षा कार्यक्रम।
- स्मार्टफोन आधारित शिक्षण सामग्री।

#### (ग) सामुदायिक सहभागिता

- स्कूल प्रबंधन समितियाँ।
- स्वयंसेवी शिक्षकों की भागीदारी।

- अभिभावक जागरूकता अभियान।

**(घ) सरकारी योजनाएँ**

- मध्याह्न भोजन योजना (Mid-Day Meal)।
- समग्र शिक्षा अभियान।
- छात्रवृत्ति एवं निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण।

**भावी रणनीति (Future Strategies)**

इन क्षेत्रों में शिक्षा सुधार हेतु निम्न रणनीतियाँ आवश्यक हैं—

1. स्थानीय आवश्यकताओं पर आधारित पाठ्यक्रम विकसित किया जाए।
2. मातृभाषा आधारित प्रारंभिक शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए।
3. डिजिटल समावेशन के लिए इंटरनेट एवं उपकरण उपलब्ध कराए जाएँ।
4. शिक्षक प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन बढ़ाया जाए।
5. समावेशी शिक्षा नीति को प्रभावी रूप से लागू किया जाए।
6. सामुदायिक भागीदारी को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाए।
7. बालिका शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाए।
8. कौशल आधारित एवं जीवनोपयोगी शिक्षा को शामिल किया जाए।

**निष्कर्ष**

ग्रामीण, आदिवासी और शहरी मलिन बस्तियों में शिक्षा का प्रश्न केवल विद्यालय निर्माण तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक समानता और मानव अधिकारों से जुड़ा हुआ है। शिक्षा को स्थानीय संस्कृति, भाषा और जीवन परिस्थितियों से जोड़कर ही वास्तविक परिवर्तन संभव है। नवाचारी प्रयासों, प्रभावी नीतियों और सामुदायिक सहयोग के माध्यम से शिक्षा को समावेशी और सुलभ बनाया जा सकता है। जब समाज के सबसे वंचित वर्ग शिक्षित होंगे, तभी राष्ट्र का समग्र विकास सुनिश्चित होगा।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**

1. सिंह, आर. (2018). *भारत में ग्रामीण शिक्षा की समस्याएँ एवं समाधान*. नई दिल्ली: एटलांटिक पब्लिशर्स।
2. शर्मा, पी. (2016). *आदिवासी शिक्षा: चुनौतियाँ और संभावनाएँ*. जयपुर: रावत पब्लिकेशन।
3. वर्मा, एस. (2019). *शहरी झुग्गी बस्तियों में शिक्षा का समाजशास्त्र*. दिल्ली: सेज पब्लिकेशन।
4. अग्रवाल, जे.सी. (2015). *भारतीय शिक्षा का विकास और समस्याएँ*. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर।
5. पाण्डेय, आर.के. (2020). *समावेशी शिक्षा: सिद्धांत और व्यवहार*. वाराणसी: भारती प्रकाशन।



## डिजिटल विभाजन और वंचित बच्चों की शिक्षा: वर्तमान संकट एवं समाधान

डॉ. देश दीपक वर्मा

सहायक आचार्य, शिक्षक शिक्षा विभाग, शक्ति स्मारक संस्थान दुल्हनपुर,

बलरामपुर (उत्तर प्रदेश) Email - vermadeshsss@gmail.com

### सारांश :

शिक्षा किसी भी समाज के समग्र विकास की आधारशिला है, परंतु आज भी समाज का एक बड़ा वर्ग—जैसे आर्थिक रूप से कमजोर, सामाजिक रूप से हाशिए पर पड़े, दिव्यांग, ग्रामीण, प्रवासी मजदूरों के बच्चे—शिक्षा की मुख्यधारा से वंचित है। इन्हें ही सामान्यतः वंचित बच्चे कहा जाता है। इनके लिए शिक्षा केवल अधिकार नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समानता का माध्यम है। शिक्षा मानव जीवन का आधार है। यह व्यक्ति को न केवल ज्ञान प्रदान करती है, बल्कि उसे आत्मनिर्भर, जागरूक और जिम्मेदार नागरिक भी बनाती है। परंतु समाज का एक बड़ा वर्ग आज भी ऐसा है, जो विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कारणों से शिक्षा के अधिकार से वंचित है। ऐसे बच्चों को वंचित बच्चे कहा जाता है और उनकी शिक्षा आज के समय की एक गंभीर सामाजिक समस्या बन चुकी है।

वंचित बच्चों में गरीब परिवारों के बच्चे, श्रमिक वर्ग के बच्चे, सड़क पर रहने वाले बच्चे, आदिवासी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चे, बालिकाएँ, दिव्यांग बच्चे तथा प्रवासी परिवारों के बच्चे शामिल हैं। गरीबी, अशिक्षा, सामाजिक भेदभाव, लैंगिक असमानता और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ इनके शिक्षा से दूर रहने के प्रमुख कारण हैं। कई बार बच्चों को पढ़ाई छोड़कर मजदूरी करनी पड़ती है, जिससे उनका भविष्य अंधकारमय हो जाता है। आर्थिक कठिनाइयों के अतिरिक्त डिजिटल विभाजन भी वंचित बच्चों की शिक्षा में बड़ी बाधा है। आज जब शिक्षा का बड़ा हिस्सा ऑनलाइन हो गया है, तब स्मार्टफोन, इंटरनेट और बिजली की कमी के कारण ये बच्चे मुख्यधारा से और अधिक दूर हो गए हैं। कोरोना महामारी के समय यह समस्या और भी गहरी हो गई, जब विद्यालय बंद होने से लाखों वंचित बच्चे पढ़ाई से कट गए।

**मुख्य शब्द:** डिजिटल क्रांति, शिक्षा संकट, डिजिटल पुस्तकालय, ई-लर्निंग, वंचित बच्चे, कृत्रिम बुद्धिमत्ता ।

### भूमिका

डिजिटल क्रांति ने शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन किए हैं। ऑनलाइन कक्षाएँ, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म, डिजिटल पुस्तकालय और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित शिक्षण ने ज्ञान को अधिक सुलभ बनाया है। किंतु इसी प्रगति के साथ एक गंभीर समस्या भी उभरकर सामने आई है, जिसे डिजिटल विभाजन कहा जाता है। यह विभाजन विशेष रूप से वंचित और कमजोर वर्ग के बच्चों की शिक्षा को प्रभावित कर रहा है। वर्तमान समय में डिजिटल विभाजन शिक्षा के अधिकार और समान अवसर की अवधारणा के लिए एक बड़ा संकट बन गया है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि **डिजिटल विभाजन वास्तव में शिक्षा के अधिकार और समान अवसर की मूल भावना के लिए एक बड़ा संकट बन चुका है।** जब तक डिजिटल संसाधनों तक समान पहुँच सुनिश्चित नहीं की जाएगी, तब तक समावेशी और न्यायपूर्ण शिक्षा व्यवस्था का लक्ष्य पूर्ण नहीं हो सकेगा। 21वीं सदी को डिजिटल युग के रूप में जाना जाता है, जहाँ सूचना और संचार प्रौद्योगिकी ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित

किया है। शिक्षा भी इससे अछूती नहीं रही। विशेष रूप से ऑनलाइन शिक्षा, ई और डिजिटल संसाधनों ने लर्निंग प्लेटफॉर्म-शिक्षणसाथ समाज में एक नई असमानता भी -अधिगम प्रक्रिया को नया स्वरूप प्रदान किया है। परंतु तकनीकी विकास के साथ-उत्पन्न हुई है, जिसे **डिजिटल विभाजन** कहा जाता है। यह विभाजन उन लोगों के बीच अंतर को दर्शाता है जिनके पास डिजिटल संसाधनों तक पहुंच है और जिनके पास नहीं। आज यह स्थिति शिक्षा के अधिकार और समान अवसर की अवधारणा के लिए गंभीर चुनौती बन चुकी है। **साहित्य समीक्षा**

**Warschauer (2003)** – का अध्ययन यह दर्शाता है कि “Technology and Social Inclusion” तकनीक स्व-उद्देश्य नहीं, सामाजिक और शैक्षिक संदर्भ में अर्थ रखती है। कम संसाधन/कम समर्थन समूहों में तकनीक सीखने का सकारात्मक प्रभाव तभी दिखता है जब परिवार, स्कूल और सामुदायिक समर्थन मौजूद हो।

**Heckman (2006)** के शोध प्रारंभिक बचपन में सीखने के अवसरों का अंतर आगे अर्थशास्त्र और शिक्षा परिणामों को प्रभावित करता है। डिजिटल विभाजन इसी अंतर का हिस्सा बनकर दीर्घकालिक प्रभाव डालता है।

**Selwyn (2016)** – “Education and Technology: Key Issues and Debates” डिजिटल तकनीकें शिक्षा को बदलने का वादा करती हैं, पर बुनियादी शिक्षण संरचना, प्रशिक्षित अध्यापक और उचित सामग्री के बिना यह विभाजन को बढ़ाती हैं।

**Van Dijk (2020)** की “Digital Divide” थ्योरी तकनीकी विभाजन सिर्फ उपकरणों तक पहुंच नहीं बताता, बल्कि ज्ञान, कौशल, सामाजिक- आर्थिक स्थितियाँ और सामाजिक नेटवर्क को जोड़ता है। उन्होंने विभाजन को four-stage model में समझाया:

- मूलभूत संसाधन (devices, connectivity),
- अभियास/कौशल,
- प्रयोग की गुणवत्ता,
- सामाजिक परिणाम।

**UNICEF Reports (2019–2022) COVID-19 pandemic** के दौरान दुनिया भर के गरीब/ग्रामीण बच्चों के लिए डिजिटल शिक्षण की पहुंच बहुत सीमित पाई गई। इसने शिक्षा-अवसरों में पहले से मौजूद असमानता को और बढ़ा दिया।

### समस्या का औचित्य

इक्कीसवीं सदी में शिक्षा का स्वरूप तीव्र गति से डिजिटल होता जा रहा है। ऑनलाइन कक्षाएँ, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म, डिजिटल पुस्तकालय और शैक्षिक ऐप्स शिक्षा को अधिक सुलभ एवं प्रभावी बनाने का दावा करते हैं। किंतु यह परिवर्तन सभी के लिए समान अवसर नहीं ला पाया है। भारत जैसे विकासशील देश में **डिजिटल विभाजन** ने वंचित वर्ग के बच्चों की शिक्षा

को गंभीर संकट में डाल दिया है। डिजिटल विभाजन से तात्पर्य केवल इंटरनेट या तकनीकी उपकरणों की अनुपलब्धता नहीं है, बल्कि डिजिटल साक्षरता, भाषा संबंधी बाधाएँ, आर्थिक असमानता, सामाजिक-सांस्कृतिक सीमाएँ तथा गुणवत्तापूर्ण डिजिटल सामग्री तक पहुँच का अभाव भी इससे जुड़ा है। ग्रामीण, आदिवासी, शहरी झुग्गी-झोपड़ी क्षेत्रों तथा आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के बच्चे इस विभाजन से सबसे अधिक प्रभावित हैं।

कोविड-19 महामारी के दौरान जब शिक्षा पूर्णतः ऑनलाइन माध्यमों पर निर्भर हो गई, तब यह समस्या और भी स्पष्ट होकर सामने आई। बड़ी संख्या में वंचित बच्चे स्मार्टफोन, कंप्यूटर, स्थिर इंटरनेट तथा अनुकूल घरेलू वातावरण के अभाव में शिक्षा से कट गए। इससे न केवल उनके शैक्षिक विकास में बाधा उत्पन्न हुई, बल्कि ड्रॉप-आउट दर, बाल श्रम और सामाजिक असमानता में भी वृद्धि हुई।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 समावेशी और समान शिक्षा की बात करती है, किंतु डिजिटल संसाधनों की असमान उपलब्धता इसके क्रियान्वयन में बड़ी चुनौती बनकर उभरी है। यदि डिजिटल विभाजन को समय रहते नहीं समझा और दूर नहीं किया गया, तो यह शिक्षा में समान अवसर के संवैधानिक लक्ष्य को कमजोर कर देगा।

अतः डिजिटल विभाजन और वंचित बच्चों की शिक्षा से जुड़ी समस्या का अध्ययन अत्यंत औचित्यपूर्ण है। इससे वर्तमान शैक्षिक संकट की गहराई को समझने, नीति-निर्माण में व्यावहारिक सुधार सुझाने तथा तकनीक को समानता और सामाजिक न्याय का माध्यम बनाने की दिशा में ठोस समाधान प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

### अध्ययन का उद्देश्य

डिजिटल युग में शिक्षा के तीव्र डिजिटलीकरण के बावजूद समाज का एक बड़ा वर्ग, विशेषकर वंचित बच्चे (गरीब, ग्रामीण, आदिवासी, शहरी झुग्गी-झोपड़ी क्षेत्रों के बच्चे), डिजिटल संसाधनों से वंचित है। यह स्थिति डिजिटल विभाजन को जन्म देती है, जिससे शिक्षा में असमानता और गहराती जा रही है। इस संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य डिजिटल विभाजन के कारण वंचित बच्चों की शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना तथा वर्तमान संकट की परिस्थितियों में उसके व्यावहारिक एवं नीतिगत समाधान सुझाना है।

1. वंचित बच्चों के बीच डिजिटल विभाजन के स्वरूप एवं स्तर की पहचान करना।
2. डिजिटल संसाधनों (इंटरनेट, स्मार्ट डिवाइस, ई-सामग्री) की कमी से उत्पन्न शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन करना।
3. कोविड-19 एवं उसके बाद के काल में डिजिटल शिक्षा के संदर्भ में वंचित बच्चों के समक्ष उत्पन्न संकट का विश्लेषण करना।
4. डिजिटल विभाजन का शैक्षणिक उपलब्धि, सीखने की निरंतरता एवं विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति पर प्रभाव का आकलन करना।
5. शिक्षा में समावेशन (Inclusive Education) के दृष्टिकोण से डिजिटल असमानता की भूमिका को समझना।

6. सरकारी योजनाओं, नीतियों एवं डिजिटल शिक्षा कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
7. डिजिटल साक्षरता, शिक्षक प्रशिक्षण एवं अभिभावक सहभागिता की भूमिका का अध्ययन करना।
8. डिजिटल विभाजन को कम करने हेतु व्यावहारिक, सामाजिक और नीतिगत समाधान प्रस्तावित करना।

इस प्रकार हम इस प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत निहित उद्देश्यों का प्रमुख कार्य पाते हैं

- वंचित बच्चों को गुणवत्तापूर्ण एवं समान शैक्षिक अवसर प्रदान करने की दिशा में मार्गदर्शन देना।
- डिजिटल शिक्षा नीति को अधिक समावेशी और न्यायसंगत बनाने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।
- भविष्य में डिजिटल संकट से निपटने के लिए एक सतत शैक्षिक मॉडल विकसित करने में सहायता करना।

इस प्रकार, समस्या का उद्देश्य न केवल डिजिटल विभाजन की पहचान तक सीमित है, बल्कि उसके कारण उत्पन्न शैक्षिक संकट को समझकर समाधानात्मक दृष्टिकोण विकसित करना भी है, जिससे वंचित बच्चों को डिजिटल युग में समान शिक्षा का अधिकार प्राप्त हो सके।

**संक्षेप में** इस अध्ययन का मूल उद्देश्य डिजिटल विभाजन से उत्पन्न शैक्षिक असमानताओं को समझना, उनके कारणों एवं प्रभावों का विश्लेषण करना तथा वंचित बच्चों के लिए व्यावहारिक, टिकाऊ और समावेशी समाधान प्रस्तुत करना है।

### डिजिटल विभाजन की अवधारणा

डिजिटल विभाजन से तात्पर्य उन असमानताओं से है जो डिजिटल संसाधनों—जैसे इंटरनेट, स्मार्टफोन, कंप्यूटर, टैबलेट तथा डिजिटल साक्षरता—की उपलब्धता और उपयोग में देखने को मिलती हैं। समाज का एक वर्ग जहाँ आधुनिक तकनीक का भरपूर लाभ उठा रहा है, वहीं दूसरा वर्ग इससे वंचित रह जाता है। यही असमानता शिक्षा के क्षेत्र में गहरे संकट को जन्म देती है।

### वंचित बच्चों की शिक्षा में डिजिटल विभाजन का प्रभाव

डिजिटल विभाजन का सबसे अधिक प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों, शहरी झुग्गी-झोपड़ियों, आदिवासी इलाकों तथा आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के बच्चों पर पड़ा है। इसके प्रमुख प्रभाव निम्नलिखित हैं—

1. **शैक्षिक असमानता में वृद्धि** – ऑनलाइन शिक्षा तक सीमित पहुँच के कारण वंचित बच्चे मुख्यधारा की शिक्षा से पीछे रह जाते हैं।
2. **सीखने की निरंतरता में बाधा** – डिजिटल साधनों के अभाव में बच्चों की पढ़ाई बार-बार बाधित होती है।
3. **ड्रॉप-आउट दर में वृद्धि** – तकनीकी संसाधनों की कमी से कई बच्चे शिक्षा छोड़ने को मजबूर हो जाते हैं।
4. **मानसिक एवं सामाजिक प्रभाव** – शिक्षा से कटाव बच्चों में हीन भावना, आत्मविश्वास की कमी और सामाजिक अलगाव को जन्म देता है।

वंचित बच्चों की शिक्षा आज के समाज की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। यह केवल शिक्षा का प्रश्न नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और मानव विकास से जुड़ा मुद्दा है।

वंचित बच्चे कौन हैं? वे बच्चे जो गरीबी, सामाजिक भेदभाव, लैंगिक असमानता, दिव्यांगता, प्रवासन, बाल श्रम, आदिवासी/अल्पसंख्यक पृष्ठभूमि या आपदा (जैसे महामारी) के कारण गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से वंचित रह जाते हैं।

### प्रमुख समस्याएँ

1. आर्थिक बाधाएँ – फीस, किताबें, यूनिफॉर्म, परिवहन।
2. डिजिटल विभाजन – स्मार्टफोन, इंटरनेट, बिजली की कमी।
3. बाल श्रम व घरेलू जिम्मेदारियाँ – पढ़ाई का समय नहीं मिल पाता।
4. भाषाई व सांस्कृतिक बाधाएँ – पाठ्यक्रम से जुड़ाव कम।
5. विद्यालयों की कमी व गुणवत्ता का अभाव – शिक्षक, आधारभूत सुविधाएँ।
6. सामाजिक भेदभाव – जाति, लिंग, प्रवासी पहचान के कारण बहिष्करण।

### शिक्षा का महत्व

- गरीबी के चक्र को तोड़ने का सबसे प्रभावी साधन
- आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान और सामाजिक सहभागिता
- स्वास्थ्य, रोजगार और लोकतांत्रिक मूल्यों में सुधार

### समाधान व उपाय

1. निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा का प्रभावी क्रियान्वयन (RTE)
2. छात्रवृत्ति, मध्याह्न भोजन, पुस्तक/यूनिफॉर्म सहायता
3. डिजिटल समावेशन – सामुदायिक डिजिटल केंद्र, ऑफलाइन सामग्री
4. लचीला व बहुभाषी पाठ्यक्रम – स्थानीय संदर्भों के साथ
5. शिक्षक प्रशिक्षण व संवेदनशीलता – समावेशी कक्षाएँ
6. NGO-समुदाय-सरकार की साझेदारी
7. विशेष ध्यान – बालिकाएँ, दिव्यांग बच्चे, प्रवासी परिवार

वंचित बच्चों की शिक्षा में निवेश राष्ट्र के भविष्य में निवेश है। जब हर बच्चे को समान अवसर मिलते हैं, तभी समतामूलक और सशक्त समाज का निर्माण संभव होता है।

### वंचित बच्चों की शिक्षा के अवसर

#### 1. संवैधानिक एवं कानूनी प्रावधान

- भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21-A (6-14 वर्ष तक निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा)
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009
- अनुसूचित जाति/जनजाति, अल्पसंख्यक एवं दिव्यांग बच्चों के लिए विशेष प्रावधान

#### 2. सरकारी योजनाएँ और कार्यक्रम

- समग्र शिक्षा अभियान

- मिड-डे मील योजना
- छात्रवृत्ति एवं निःशुल्क पाठ्यपुस्तक, यूनिफॉर्म
- कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (KGBV)

### 3. डिजिटल शिक्षा और तकनीक

- ऑनलाइन प्लेटफॉर्म, DIKSHA, SWAYAM
- टीवी, रेडियो, मोबाइल आधारित शिक्षण
- ई-लर्निंग ने दूरस्थ क्षेत्रों तक शिक्षा की पहुँच बढ़ाई

### 4. गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) की भूमिका

- ब्रिज कोर्स
- सामुदायिक शिक्षण केंद्र
- स्कूल ड्रॉपआउट बच्चों को पुनः शिक्षा से जोड़ना

### 5. सामाजिक जागरूकता में वृद्धि

- शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का साधन मानने की सोच
- अभिभावकों में शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण

## वंचित बच्चों की शिक्षा की प्रमुख चुनौतियाँ

### 1. आर्थिक गरीबी

- बाल श्रम की मजबूरी
- शिक्षा से अधिक जीविका को प्राथमिकता
- स्कूल छोड़ने की दर (Dropout)

### 2. डिजिटल विभाजन

- इंटरनेट, स्मार्टफोन, बिजली की कमी
- ऑनलाइन शिक्षा में असमान भागीदारी

### 3. सामाजिक एवं सांस्कृतिक बाधाएँ

- जातिगत भेदभाव
- बालिका शिक्षा के प्रति नकारात्मक सोच
- प्रवासी परिवारों के बच्चों की अस्थिर शिक्षा

### 4. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव

- प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी
- आधारभूत संरचना का अभाव
- बहुभाषी व प्रथम-पीढ़ी शिक्षार्थियों की समस्या

### 5. मनोवैज्ञानिक एवं भावनात्मक समस्याएँ

- आत्मविश्वास की कमी
- उपेक्षा और भेदभाव का अनुभव

- सीखने में रुचि का अभाव

### समाधान एवं सुझाव

- शिक्षा को रोजगार से जोड़कर व्यावहारिक बनाना
- डिजिटल समावेशन हेतु सामुदायिक डिजिटल केंद्र
- माता-पिता एवं समुदाय की भागीदारी
- शिक्षकों का संवेदनशील प्रशिक्षण
- बाल-केंद्रित, समावेशी एवं लचीली शिक्षा व्यवस्था

### वर्तमान संकट के प्रमुख कारण

वर्तमान समय में डिजिटल विभाजन के पीछे कई सामाजिक, आर्थिक और संरचनात्मक कारण हैं—

- **आर्थिक गरीबी** – स्मार्टफोन, लैपटॉप और इंटरनेट की लागत गरीब परिवार वहन नहीं कर पाते।
- **डिजिटल अवसंरचना की कमी** – ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में नेटवर्क एवं बिजली की समस्या।
- **डिजिटल साक्षरता का अभाव** – बच्चों के साथ-साथ अभिभावक भी तकनीक के प्रयोग में सक्षम नहीं होते।
- **भाषाई एवं सांस्कृतिक बाधाएँ** – अधिकांश डिजिटल सामग्री स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध नहीं है।

### डिजिटल विभाजन की समस्या के समाधान

डिजिटल विभाजन को कम किए बिना समावेशी शिक्षा की कल्पना अधूरी है। इसके लिए निम्नलिखित समाधान प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं—

1. **सरकारी नीतियाँ और योजनाएँ** – वंचित बच्चों को निःशुल्क या रियायती डिजिटल उपकरण उपलब्ध कराए जाएँ।
2. **डिजिटल अवसंरचना का विस्तार** – ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट कनेक्टिविटी और बिजली आपूर्ति को सुदृढ़ किया जाए।
3. **डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम** – छात्रों, शिक्षकों और अभिभावकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाएँ।
4. **स्थानीय भाषा में डिजिटल सामग्री** – बच्चों की मातृभाषा में शैक्षिक सामग्री विकसित की जाए।
5. **स्कूल-आधारित डिजिटल केंद्र** – विद्यालयों में साझा डिजिटल संसाधन केंद्र स्थापित किए जाएँ।

### निष्कर्ष

डिजिटल विभाजन केवल तकनीकी समस्या नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और शैक्षिक समानता से जुड़ा हुआ मुद्दा है। यदि वंचित बच्चों को डिजिटल शिक्षा से जोड़ा नहीं गया, तो यह असमानता भविष्य में और अधिक गहरी हो जाएगी। अतः आवश्यक है कि सरकार, समाज और शैक्षिक संस्थान मिलकर इस संकट का समाधान करें। तभी डिजिटल युग में “सबके लिए शिक्षा” का लक्ष्य साकार हो सकेगा। वंचित बच्चों की शिक्षा केवल सरकारी जिम्मेदारी नहीं, बल्कि समाज की सामूहिक नैतिक जिम्मेदारी है। यदि अवसरों का सही उपयोग कर चुनौतियों का समुचित समाधान किया जाए, तो ये बच्चे न

केवल अपने जीवन को, बल्कि पूरे समाज को नई दिशा दे सकते हैं। इस समस्या के समाधान के लिए सरकार, समाज और स्वयंसेवी संस्थाओं को मिलकर प्रयास करना होगा। निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा, मध्याह्न भोजन योजना, छात्रवृत्ति, मुफ्त पुस्तकें और यूनिफॉर्म जैसी योजनाएँ इस दिशा में सराहनीय प्रयास हैं। साथ ही, डिजिटल साधनों की उपलब्धता, शिक्षकों का प्रशिक्षण, बाल श्रम पर रोक और अभिभावकों में जागरूकता बढ़ाना भी आवश्यक है। अंततः कहा जा सकता है कि वंचित बच्चों की शिक्षा में निवेश वास्तव में देश के उज्ज्वल भविष्य में निवेश है। जब समाज का अंतिम बच्चा भी शिक्षित होगा, तभी समानता, समरसता और समृद्धि का सपना साकार हो सकेगा। शिक्षा ही वह माध्यम है, जो वंचित बच्चों को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जा सकती है। वंचित बच्चों की शिक्षा केवल व्यक्तिगत विकास का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह समाज और राष्ट्र के विकास से भी जुड़ी हुई है। शिक्षित बच्चा ही भविष्य में एक स्वस्थ, जागरूक और जिम्मेदार नागरिक बन सकता है। शिक्षा के अभाव में गरीबी, बेरोजगारी, अपराध और सामाजिक असमानता बढ़ती है। इसलिए वंचित बच्चों को शिक्षा से जोड़ना सामाजिक न्याय की दिशा में एक अनिवार्य कदम है।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बंड्योपाध्याय, सोमप्रकाश आदि (2021), *Bridging the Education Divide Using Social Technologies: Explorations in Rural India*. स्प्रिंगर, सिंगापुर।
2. ब्रम्हाणे, आकाश संजय (2024), *डिजिटल शिक्षा एवं डिजिटल विभाजन: अवधारणा, मुद्दे और चुनौतियाँ*. शोध-पत्र (Research Gate)।
3. टायडे, मोनिका प्रभाकर एवं चव्हाण, विजय (2023), *भारतीय शिक्षा प्रणाली में डिजिटल विभाजन: वर्तमान परिदृश्य का विश्लेषण*. UGC केयर जर्नल।
4. भट्टाचार्य, लीना एवं कुलश्रेष्ठ, शोभित (2022), *भारत में बच्चों के बीच तकनीकी पहुंच में असमानता*. SSRN जर्नल।
5. नायक, कुमारी विभूति एवं आलम, शमशेर (2022), *डिजिटल विभाजन, लैंगिकता और शिक्षा: ग्रामीण झारखंड के जनजातीय युवाओं की चुनौतियाँ*. (शोध लेख)।
6. साहारावत, प्रीति एवं शाही, दीपिका (2025), *विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए डिजिटल विभाजन को कम करने पर साहित्य समीक्षा*. जर्नल लेख।
7. कुशवाहा, रविन्द्र आदि (2023), *डिजिटल असमानता और विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा*. IAHERI जर्नल।



समाज को शिक्षित करने में बालिका शिक्षा की भूमिका : बालिका शिक्षा एवं महिला  
सशक्तिकरण के विशेष संदर्भ में

देवकी नन्दन वर्मा

शोध छात्र (शिक्षाशास्त्र)

प्रो. आसिफ कमाल, (शोध निर्देशक) शिक्षक शिक्षा विभाग (बी.एड.)

शिब्ली नेशनल कॉलेज, आजमगढ़, महाराजा सुहेलदेव राज्य विश्वविद्यालय आजमगढ़ (उ०प्र०)

“शिक्षित बालिका, सशक्त समाज की आधारशिला है।”

### सारांश

किसी भी राष्ट्र की प्रगति का वास्तविक मापदंड उसकी महिलाओं की स्थिति से निर्धारित होता है। जब समाज की आधी आबादी शिक्षित होती है, तभी समग्र विकास संभव होता है। इसलिए बालिका शिक्षा केवल एक सामाजिक आवश्यकता नहीं, बल्कि राष्ट्रीय उन्नति की आधारशिला है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में, जहाँ परंपराएँ और आधुनिकता साथ-साथ चलती हैं, वहाँ बालिका शिक्षा का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। महिला सशक्तिकरण आधुनिक लोकतांत्रिक समाज की आधारशिला है। यह केवल महिलाओं को अधिकार प्रदान करने तक सीमित नहीं है, बल्कि उन्हें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक रूप से आत्मनिर्भर एवं निर्णयक्षम बनाना है। भारत में महिला सशक्तिकरण को संवैधानिक प्रावधानों, सरकारी योजनाओं और अंतरराष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के माध्यम से प्रोत्साहित किया गया है, जैसे— भारतीय संविधान, राष्ट्रीय महिला आयोग, तथा UN Women। यह शोध लेख महिला सशक्तिकरण की अवधारणा, वर्तमान स्थिति, प्रमुख बाधाओं तथा भावी रणनीतियों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

**मुख्य शब्द :** शिक्षित बालिका, आत्मनिर्भर, महिला सशक्तिकरण, भारतीय संविधान, राष्ट्र की प्रगति

### प्रस्तावना

बालिका शिक्षा का महत्व

1. **सामाजिक सशक्तिकरण** – शिक्षित बालिका अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक होती है। वह रूढ़िवादी सोच और भेदभाव का सामना करने में सक्षम बनती है।
2. **आर्थिक विकास** – शिक्षा प्राप्त करने के बाद बालिकाएँ आत्मनिर्भर बनती हैं, जिससे परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है और देश की अर्थव्यवस्था को भी मजबूती मिलती है।
3. **स्वास्थ्य एवं पोषण में सुधार** – शिक्षित महिला अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा पोषण का बेहतर ध्यान रखती है।
4. **पीढ़ीगत प्रभाव** – कहा जाता है, “यदि आप एक पुरुष को शिक्षित करते हैं तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है, लेकिन यदि आप एक महिला को शिक्षित करते हैं तो एक पूरा परिवार शिक्षित होता है।”

भारत में बालिका शिक्षा की स्थिति

भारत में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं। स्वतंत्रता के बाद से लेकर वर्तमान तक सरकार ने कई योजनाएँ लागू की हैं।

- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ अभियान ने बालिकाओं के प्रति समाज की सोच में सकारात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास किया है।
- सर्व शिक्षा अभियान के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने का लक्ष्य रखा गया।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने लैंगिक समानता और समावेशी शिक्षा पर विशेष बल दिया है।

इन प्रयासों के बावजूद ग्रामीण, आदिवासी एवं शहरी मलिन बस्तियों में आज भी बालिका शिक्षा कई बाधाओं से जूझ रही है।

बालिका शिक्षा में प्रमुख बाधाएँ

1. **आर्थिक समस्याएँ** – गरीबी के कारण कई परिवार बालिकाओं को विद्यालय भेजने के बजाय घरेलू कार्यों में लगा देते हैं।
2. **सामाजिक कुरीतियाँ** – बाल विवाह, दहेज प्रथा और लैंगिक भेदभाव बालिका शिक्षा में बाधक हैं।
3. **सुरक्षा एवं आधारभूत सुविधाओं की कमी** – विद्यालयों में शौचालय, सुरक्षित परिवहन और स्वच्छ वातावरण की कमी भी एक प्रमुख कारण है।
4. **डिजिटल विभाजन** – तकनीकी संसाधनों की कमी से बालिकाएँ ऑनलाइन शिक्षा से वंचित रह जाती हैं।

सुधारात्मक उपाय

1. **जागरूकता अभियान** – समाज में बालिका शिक्षा के महत्व को समझाने के लिए निरंतर जनजागरण आवश्यक है।
2. **आर्थिक सहायता एवं छात्रवृत्ति** – सरकार और गैर-सरकारी संगठनों द्वारा छात्रवृत्ति और निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था।
3. **सुरक्षित एवं अनुकूल वातावरण** – विद्यालयों में बालिकाओं के लिए सुरक्षित, स्वच्छ एवं प्रोत्साहनपूर्ण वातावरण का निर्माण।
4. **डिजिटल साक्षरता** – ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट एवं डिजिटल उपकरणों की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

1. परिवार के शिक्षित होने का आधार

बालिका भविष्य की माता, बहन, पत्नी और समाज की संस्कारवाहक होती है। एक शिक्षित बालिका अपने बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण, स्वच्छता और शिक्षा के प्रति अधिक सजग रहती है। वह घर में अध्ययन का वातावरण तैयार करती है तथा अगली पीढ़ी को नैतिक और सामाजिक मूल्यों से परिचित कराती है। इस प्रकार बालिका शिक्षा समाज की जड़ों को मजबूत करती है।

### 2. सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन

अशिक्षा के कारण बाल विवाह, दहेज प्रथा, लैंगिक भेदभाव और अंधविश्वास जैसी कुरीतियाँ पनपती हैं। जब बालिकाएँ शिक्षित होती हैं, तो वे अपने अधिकारों को समझती हैं और इन कुरीतियों का विरोध करने में सक्षम होती हैं। भारत में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ जैसी योजनाएँ चलाई गईं, जिनका उद्देश्य लिंगानुपात सुधारना और बालिकाओं की शिक्षा सुनिश्चित करना है।

### 3. आर्थिक विकास में योगदान

शिक्षित बालिका आगे चलकर रोजगार प्राप्त करती है, आत्मनिर्भर बनती है और परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारती है। महिलाओं की कार्यक्षेत्र में भागीदारी बढ़ने से राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। UNESCO के अनुसार, लड़कियों की शिक्षा में निवेश करने से गरीबी उन्मूलन और सतत विकास को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार बालिका शिक्षा आर्थिक सशक्तिकरण का प्रमुख साधन है।

### 4. स्वास्थ्य और जनसंख्या नियंत्रण

शिक्षित महिलाएँ स्वास्थ्य, पोषण और परिवार नियोजन के प्रति अधिक जागरूक होती हैं। इससे मातृ मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर में कमी आती है। शिक्षा के कारण वे संतुलित परिवार की अवधारणा को अपनाती हैं, जिससे जनसंख्या नियंत्रण में सहायता मिलती है और समाज का जीवन स्तर सुधरता है।

### 5. लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास

एक शिक्षित बालिका अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक नागरिक बनती है। वह मतदान, सामाजिक सहभागिता और निर्णय-निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाती है। इससे लोकतंत्र मजबूत होता है और समाज में समानता एवं न्याय की भावना विकसित होती है।

### 6. सामाजिक परिवर्तन और नेतृत्व

शिक्षित महिलाएँ विभिन्न क्षेत्रों—राजनीति, विज्ञान, शिक्षा, प्रशासन और साहित्य—में नेतृत्व प्रदान करती हैं। भारत में इंदिरा गांधी और मैरी कॉम जैसी महिलाओं ने यह सिद्ध किया है कि शिक्षा और अवसर मिलने पर महिलाएँ समाज को नई दिशा दे सकती हैं।

7. राष्ट्रीय नीतियों का समर्थन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में लैंगिक समानता और बालिका शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। नीति का उद्देश्य शिक्षा के माध्यम से समान अवसर प्रदान करना और समाज के सभी वर्गों को मुख्यधारा में लाना है।

### बालिका शिक्षा समावेशी शिक्षा के विशेष संदर्भ में :

शिक्षा किसी भी राष्ट्र की प्रगति का मूल आधार है। जब शिक्षा समावेशी (Inclusive) होती है, तब वह समाज के प्रत्येक वर्ग—लिंग, जाति, धर्म, आर्थिक स्थिति, शारीरिक एवं मानसिक क्षमता—के आधार पर भेदभाव किए बिना सबको समान अवसर प्रदान करती है। भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में बालिका शिक्षा को समावेशी शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में समझना अत्यंत आवश्यक है।

### समावेशी शिक्षा की अवधारणा

समावेशी शिक्षा का अर्थ है—ऐसी शिक्षा व्यवस्था जिसमें प्रत्येक बालक एवं बालिका, चाहे वह सामान्य हो या दिव्यांग, ग्रामीण हो या शहरी, निर्धन हो या संपन्न, सभी को एक समान वातावरण में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो।

भारत में समावेशी शिक्षा को सुदृढ़ करने के लिए Right of Children to Free and Compulsory Education Act (RTE Act, 2009) लागू किया गया, जो 6 से 14 वर्ष के प्रत्येक बच्चे को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार देता है। साथ ही, National Education Policy 2020 ने शिक्षा में लैंगिक समानता और समावेशन पर विशेष बल दिया है।

### बालिका शिक्षा का महत्व

1. **सामाजिक समानता की स्थापना** – जब बालिकाएँ शिक्षित होती हैं, तो समाज में लैंगिक भेदभाव कम होता है।
2. **आर्थिक सशक्तिकरण** – शिक्षित बालिका भविष्य में आत्मनिर्भर बनती है और परिवार की आय में योगदान देती है।
3. **स्वास्थ्य एवं पोषण में सुधार** – शिक्षित महिलाएँ अपने परिवार के स्वास्थ्य और पोषण के प्रति अधिक सजग होती हैं।
4. **अगली पीढ़ी का विकास** – एक शिक्षित माँ अपने बच्चों को बेहतर संस्कार एवं शिक्षा प्रदान करती है।

### समावेशी शिक्षा के संदर्भ में बालिका शिक्षा की चुनौतियाँ

1. **लैंगिक पूर्वाग्रह** – अनेक क्षेत्रों में आज भी बालिकाओं को शिक्षा से वंचित रखा जाता है।
2. **आर्थिक बाधाएँ** – गरीबी के कारण परिवार बालिकाओं को स्कूल भेजने के बजाय घरेलू कार्यों में लगा देते हैं।
3. **बाल विवाह एवं बाल श्रम** – ये सामाजिक कुरीतियाँ बालिका शिक्षा में बाधक हैं।
4. **दिव्यांग बालिकाओं की उपेक्षा** – विशेष आवश्यकताओं वाली बालिकाओं को पर्याप्त संसाधन और सहयोग नहीं मिल पाता।
5. **ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में सुविधाओं की कमी** – विद्यालयों में शौचालय, सुरक्षित परिवहन और प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव।

### सुधारात्मक प्रयास

1. सरकारी योजनाएँ – ‘बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ’ जैसी योजनाएँ बालिका शिक्षा को प्रोत्साहित करती हैं।
2. लैंगिक संवेदनशील पाठ्यक्रम – पाठ्यपुस्तकों में लैंगिक समानता को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
3. सुरक्षित एवं अनुकूल वातावरण – विद्यालयों में अलग शौचालय, स्वच्छता एवं सुरक्षा की व्यवस्था।
4. डिजिटल समावेशन – डिजिटल शिक्षा के माध्यम से दूरदराज क्षेत्रों की बालिकाओं तक शिक्षा पहुँचाना।
5. समुदाय की सहभागिता – अभिभावकों एवं समुदाय को जागरूक कर सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन लाना।

बालिका शिक्षा केवल एक सामाजिक आवश्यकता नहीं, बल्कि समावेशी एवं सतत विकास का आधार है। जब प्रत्येक बालिका को समान अवसर, सम्मान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलेगी, तभी वास्तविक समावेशी समाज की स्थापना संभव होगी। समावेशी शिक्षा के माध्यम से हम न केवल बालिकाओं को सशक्त बना सकते हैं, बल्कि एक न्यायपूर्ण, समानतामूलक और प्रगतिशील राष्ट्र का निर्माण भी कर सकते हैं।

### बालिका शिक्षा : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के विशेष संदर्भ में

किसी भी राष्ट्र के समग्र विकास का आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था होती है, और शिक्षा व्यवस्था की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें बालिकाओं की कितनी सक्रिय और समान भागीदारी है। भारत में लंबे समय तक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारणों से बालिकाएँ शिक्षा से बंधित रहीं। ऐसे परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने बालिका शिक्षा को समानता, समावेशन और सशक्तिकरण के केंद्र में रखा है।

### राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की मूल भावना

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का प्रमुख उद्देश्य ‘समानता एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा’ सुनिश्चित करना है। यह नीति लैंगिक असमानता को समाप्त करने, बालिकाओं की विद्यालयी उपस्थिति बढ़ाने तथा उन्हें उच्च शिक्षा तक पहुँचाने के लिए व्यापक प्रावधान करती है।

नीति में निम्नलिखित बिंदुओं पर विशेष बल दिया गया है—

1. सार्वभौमिक नामांकन और प्रतिधारण – प्रत्येक बालिका को प्रारंभिक से माध्यमिक स्तर तक शिक्षा सुनिश्चित करना।
2. लैंगिक समावेशन कोष (Gender Inclusion Fund) – राज्यों को विशेष योजनाएँ चलाने हेतु वित्तीय सहायता।
3. सुरक्षित एवं अनुकूल शिक्षण वातावरण – विद्यालयों में शौचालय, स्वच्छता, परिवहन और सुरक्षा की व्यवस्था।
4. ड्रॉपआउट रोकथाम – विवाह, गरीबी या घरेलू कार्यों के कारण पढ़ाई छोड़ने वाली बालिकाओं के लिए पुनः प्रवेश की सुविधा।

### बालिका शिक्षा और समान अवसर

नीति यह स्वीकार करती है कि बालिकाओं को केवल विद्यालय में प्रवेश देना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उन्हें समान अवसर, गुणवत्तापूर्ण शिक्षण और नेतृत्व के अवसर भी प्रदान करना आवश्यक है।

- STEM (विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग, गणित) विषयों में बालिकाओं की भागीदारी बढ़ाने पर जोर।
- व्यावसायिक शिक्षा और कौशल विकास से जोड़कर आत्मनिर्भरता की दिशा में प्रोत्साहन।
- सामाजिक एवं आर्थिक रूप से वंचित वर्गों (SEDGs) की बालिकाओं के लिए विशेष योजनाएँ।

### समावेशी शिक्षा का दृष्टिकोण

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बालिका शिक्षा को समावेशी शिक्षा के व्यापक ढाँचे में रखती है। इसमें ग्रामीण, आदिवासी, अल्पसंख्यक तथा दिव्यांग बालिकाओं के लिए विशेष प्रावधान शामिल हैं।

- आवासीय विद्यालयों और छात्रावासों की स्थापना।
- डिजिटल शिक्षा तक समान पहुँच सुनिश्चित करना।
- मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा का प्रावधान, जिससे बालिकाओं की समझ और आत्मविश्वास बढ़े।

### बालिका शिक्षा और महिला सशक्तिकरण

शिक्षित बालिका ही भविष्य की सशक्त महिला बनती है। शिक्षा—

- आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास बढ़ाती है।
- बाल विवाह और लैंगिक हिंसा को कम करने में सहायक होती है।
- परिवार और समाज के स्वास्थ्य, पोषण और आर्थिक स्थिति में सुधार लाती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि जीवन कौशल, नैतिक मूल्यों और नेतृत्व क्षमता के विकास का माध्यम मानती है, जो महिला सशक्तिकरण की आधारशिला है।

### चुनौतियाँ

यद्यपि नीति में व्यापक प्रावधान हैं, फिर भी जमीनी स्तर पर कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं—

- ग्रामीण क्षेत्रों में संसाधनों की कमी
- सामाजिक रूढ़िवादिता
- डिजिटल विभाजन
- आर्थिक असमानता

इन चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार, समाज और परिवार—तीनों की संयुक्त जिम्मेदारी आवश्यक है।

बालिका शिक्षा केवल सामाजिक न्याय का प्रश्न नहीं, बल्कि राष्ट्रीय विकास की अनिवार्यता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने बालिका शिक्षा को प्राथमिकता देकर समावेशी और सशक्त भारत की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया है। यदि इसके प्रावधानों का प्रभावी क्रियान्वयन हो, तो बालिकाएँ न केवल अपने जीवन को संवारेगी, बल्कि राष्ट्र निर्माण में भी अग्रणी भूमिका निभाएँगी।

### निष्कर्ष

बालिका शिक्षा केवल एक अधिकार नहीं, बल्कि समाज की प्रगति का मूल मंत्र है। जब प्रत्येक बालिका को समान अवसर और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त होगी, तभी भारत एक सशक्त, समतामूलक और विकसित राष्ट्र बन सकेगा। अतः हमें सामूहिक प्रयासों द्वारा यह सुनिश्चित करना होगा कि कोई भी बालिका शिक्षा से वंचित न रहे। महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य महिलाओं को जीवन के सभी क्षेत्रों में समान अवसर, अधिकार और संसाधनों तक पहुँच प्रदान करना है। भारतीय समाज में ऐतिहासिक रूप से पितृसत्तात्मक संरचना ने महिलाओं की भूमिका को सीमित किया। यद्यपि स्वतंत्रता के पश्चात अनेक सुधार हुए, फिर भी लैंगिक असमानता विभिन्न रूपों में विद्यमान है।

महिला सशक्तिकरण का तात्पर्य महिलाओं को जीवन के सभी क्षेत्रों में समान अवसर, अधिकार और संसाधनों तक पहुँच प्रदान करना है। भारतीय समाज में ऐतिहासिक रूप से पितृसत्तात्मक संरचना ने महिलाओं की भूमिका को सीमित किया। यद्यपि स्वतंत्रता के पश्चात अनेक सुधार हुए, फिर भी लैंगिक असमानता विभिन्न रूपों में विद्यमान है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति का वास्तविक आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था होती है। यदि समाज को समग्र रूप से शिक्षित, जागरूक और सशक्त बनाना है तो बालिका शिक्षा को प्राथमिकता देना अनिवार्य है। कहा जाता है—“एक पुरुष शिक्षित होता है तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है, परंतु एक स्त्री शिक्षित होती है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है।” यह कथन बालिका शिक्षा के सामाजिक महत्व को स्पष्ट करता है। समाज को शिक्षित करने की प्रक्रिया बालिका शिक्षा से ही पूर्ण होती है। यह केवल व्यक्तिगत विकास का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक प्रगति और नैतिक उत्थान का आधार है। यदि हमें एक समतामूलक, प्रगतिशील और जागरूक समाज का निर्माण करना है, तो बालिका शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारत में महिला शिक्षा – डॉ. सरोजिनी पाठक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. नारी सशक्तिकरण और शिक्षा – डॉ. ममता सिंह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. भारतीय शिक्षा का इतिहास – डॉ. एस.पी. अग्रवाल, एटलांटिक पब्लिशर्स।
4. महिला सशक्तिकरण : सिद्धांत और व्यवहार – डॉ. रेखा शर्मा, दीप एंड दीप पब्लिकेशन।
5. शिक्षा और समाज – डॉ. आर.एन. शर्मा, अटलांटिक प्रकाशन।
6. समाजशास्त्र के सिद्धांत – डॉ. राम आहूजा, रावत पब्लिकेशन।
7. महिला विकास और शिक्षा – डॉ. सुनीता वर्मा, रावत प्रकाशन।
8. भारतीय समाज में नारी – डॉ. नीरा देसाई, मैकमिलन इंडिया।
9. यूनिसेफ (UNICEF). *बालिका शिक्षा पर रिपोर्ट्स*।
10. यूनेस्को (UNESCO). *Education for All एवं Gender Equality Reports*।



## बालिका शिक्षा एवं पोषण में असमानता: वर्तमान स्थिति एवं सशक्तिकरण के सुझाव

डॉ. शकुंतला सिंह

सहायक प्राध्यापिका , गृह विज्ञान विभाग, एम.एल.के.पी.जी. कॉलेज, बलरामपुर, उत्तर प्रदेश

### प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र के समग्र विकास का आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था और नागरिकों का स्वास्थ्य होता है। यदि समाज की आधी आबादी अर्थात् बालिकाएँ शिक्षा और पोषण जैसी मूलभूत सुविधाओं से वंचित रहती हैं, तो विकास अधूरा रह जाता है। भारत सहित अनेक विकासशील देशों में आज भी बालिका शिक्षा एवं पोषण में असमानता एक गंभीर सामाजिक समस्या बनी हुई है। यह असमानता सामाजिक रूढ़ियों, आर्थिक विषमता, लैंगिक भेदभाव और जागरूकता की कमी के कारण उत्पन्न होती है। बालिका शिक्षा में असमानता केवल शैक्षिक समस्या नहीं बल्कि सामाजिक न्याय और मानवाधिकार से जुड़ा मुद्दा है। जब तक समाज की प्रत्येक बालिका को समान शिक्षा का अधिकार और अवसर नहीं मिलेगा, तब तक समग्र विकास संभव नहीं है। अतः सरकार, समाज, परिवार और शैक्षणिक संस्थानों को मिलकर प्रयास करना होगा ताकि बालिकाएँ शिक्षित, सशक्त और आत्मनिर्भर बन सकें। यही एक समतामूलक और प्रगतिशील समाज की आधारशिला है।

### बालिका शिक्षा में असमानता

बालिका शिक्षा में असमानता का अर्थ है — लड़कों की तुलना में लड़कियों को शिक्षा के अवसर कम मिलना या शिक्षा से वंचित रह जाना। किसी भी राष्ट्र की प्रगति का आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था होती है, और शिक्षा व्यवस्था की सफलता तब पूर्ण मानी जाती है जब समाज के प्रत्येक वर्ग—विशेषकर बालिकाओं—को समान शैक्षिक अवसर प्राप्त हों। बालिका शिक्षा केवल व्यक्तिगत विकास का साधन नहीं बल्कि सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक विकास तथा लैंगिक समानता का प्रमुख माध्यम है। फिर भी आज के आधुनिक युग में बालिका शिक्षा में असमानता एक गंभीर सामाजिक समस्या के रूप में विद्यमान है।

### बालिका शिक्षा में असमानता का अर्थ

बालिका शिक्षा में असमानता से आशय उन परिस्थितियों से है जहाँ लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर, संसाधन, सुविधाएँ तथा सामाजिक समर्थन लड़कों की तुलना में कम मिलते हैं। यह असमानता नामांकन, विद्यालय उपस्थिति, शिक्षा की गुणवत्ता, उच्च शिक्षा तक पहुँच और डिजिटल संसाधनों की उपलब्धता में दिखाई देती है।

### बालिका शिक्षा की वर्तमान स्थिति

भारत सहित अनेक विकासशील देशों में बालिका शिक्षा की स्थिति में सुधार अवश्य हुआ है, परंतु पूर्ण समानता अभी भी प्राप्त नहीं हो सकी है।

1. **नामांकन में वृद्धि** – प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं का नामांकन बढ़ा है, जो शिक्षा के प्रति जागरूकता का संकेत है।
2. **माध्यमिक स्तर पर गिरावट** – किशोरावस्था, सामाजिक दबाव और आर्थिक कारणों से कई बालिकाएँ शिक्षा बीच में छोड़ देती हैं।
3. **ग्रामीण-शहरी अंतर** – ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालयों की दूरी, परिवहन एवं सुरक्षा की कमी प्रमुख बाधाएँ हैं।
4. **डिजिटल विभाजन** – ऑनलाइन शिक्षा के दौर में मोबाइल, इंटरनेट एवं तकनीकी संसाधनों की कमी से बालिकाएँ अधिक प्रभावित हुई हैं।
5. **उच्च शिक्षा में सीमित भागीदारी** – विज्ञान, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा में बालिकाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत कम है।

### बालिका शिक्षा में असमानता के प्रमुख कारण

1. **सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूढ़ियाँ** – कई परिवारों में आज भी लड़कियों की शिक्षा को कम महत्व दिया जाता है।
2. **आर्थिक समस्याएँ** – सीमित आय वाले परिवार लड़कों की शिक्षा को प्राथमिकता देते हैं।
3. **बाल विवाह** – कम उम्र में विवाह बालिकाओं की शिक्षा बाधित करता है।
4. **सुरक्षा एवं आधारभूत सुविधाओं की कमी** – विद्यालयों में शौचालय, सुरक्षित परिवहन और स्वच्छ वातावरण का अभाव।
5. **लैंगिक भेदभाव** – समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक सोच बालिकाओं की शिक्षा को प्रभावित करती है।

### बालिका शिक्षा का महत्व

- शिक्षित बालिका भविष्य में शिक्षित परिवार और समाज का निर्माण करती है।
- महिला सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा मिलता है।
- स्वास्थ्य, पोषण और जनसंख्या नियंत्रण में सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय को मजबूती मिलती है।

### बालिका सशक्तिकरण हेतु सुझाव

1. **समान शैक्षिक अवसर सुनिश्चित करना**-सरकार और समाज को मिलकर शिक्षा तक समान पहुँच उपलब्ध करानी चाहिए।
2. **आर्थिक सहायता एवं छात्रवृत्ति**-गरीब परिवारों की बालिकाओं के लिए छात्रवृत्ति, निःशुल्क शिक्षा एवं साइकिल/यातायात योजनाएँ लागू की जाएँ।
3. **सुरक्षित एवं अनुकूल विद्यालय वातावरण**-विद्यालयों में अलग शौचालय, स्वच्छता और सुरक्षा व्यवस्था सुनिश्चित की जाए।
4. **डिजिटल साक्षरता का विस्तार**-बालिकाओं को डिजिटल उपकरण, इंटरनेट सुविधा एवं तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान किया जाए।

5. सामाजिक जागरूकता अभियान-बाल विवाह, लैंगिक भेदभाव और रूढ़ियों के विरुद्ध जनजागरण कार्यक्रम चलाए जाएँ
6. महिला शिक्षकों की संख्या बढ़ाना-इससे अभिभावकों का विश्वास बढ़ेगा और बालिकाओं की उपस्थिति में सुधार होगा।
7. कौशल एवं व्यावसायिक शिक्षा-शिक्षा को रोजगारोन्मुख बनाकर बालिकाओं को आत्मनिर्भर बनाया जाए।

#### मुख्य कारण

1. लैंगिक भेदभाव – कई परिवारों में आज भी लड़कों की शिक्षा को प्राथमिकता दी जाती है।
2. आर्थिक समस्याएँ – सीमित संसाधनों के कारण परिवार बालिकाओं की पढ़ाई रोक देते हैं।
3. बाल विवाह – कम उम्र में विवाह होने से शिक्षा बाधित हो जाती है।
4. सुरक्षा एवं आधारभूत सुविधाओं की कमी – विद्यालयों में शौचालय, सुरक्षित परिवहन आदि का अभाव।
5. सामाजिक रूढ़ियाँ – यह धारणा कि लड़कियों को केवल घरेलू कार्यों तक सीमित रहना चाहिए।

#### परिणाम

- शिक्षा का निम्न स्तर
- आत्मनिर्भरता में कमी
- रोजगार अवसरों का अभाव
- पीढ़ी दर पीढ़ी गरीबी का चक्र

#### बालिका पोषण में असमानता

पोषण शारीरिक और मानसिक विकास का आधार है। अनेक परिवारों में भोजन वितरण में भी लैंगिक भेदभाव देखा जाता है।

#### मुख्य कारण

- परिवार में लड़कों को बेहतर भोजन प्राथमिकता से मिलना
- मातृ शिक्षा का निम्न स्तर
- गरीबी एवं कुपोषण
- स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुँच
- किशोरियों में एनीमिया (रक्ताल्पता) की उच्च दर

#### प्रभाव

- शारीरिक विकास में बाधा
- कमजोर प्रतिरक्षा प्रणाली
- शिक्षा में ध्यान और सीखने की क्षमता में कमी
- भविष्य में मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव

#### वर्तमान स्थिति

भारत में सरकार द्वारा अनेक योजनाएँ चलाए जाने के बावजूद स्थिति पूरी तरह संतोषजनक नहीं है।

- बालिका शिक्षा में नामांकन दर बढ़ी है, परंतु **ड्रॉपआउट दर** अभी भी अधिक है।
- ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में कुपोषण की समस्या गंभीर है।
- किशोरियों में एनीमिया व्यापक रूप से पाया जाता है।
- डिजिटल शिक्षा के दौर में डिजिटल विभाजन भी बालिकाओं को पीछे कर रहा है।

हालाँकि **बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ**, **मिड-डे मील योजना**, और **पोषण अभियान** जैसी योजनाओं से सकारात्मक परिवर्तन दिखाई देने लगे हैं।

### बालिका सशक्तिकरण के सुझाव

#### 1. शिक्षा को प्राथमिकता

- निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रभावी क्रियान्वयन
- विद्यालयों में सुरक्षित वातावरण और अलग शौचालय
- छात्रवृत्ति एवं साइकिल योजनाएँ

#### 2. पोषण सुधार कार्यक्रम

- स्कूल पोषण कार्यक्रमों को मजबूत बनाना
- किशोरी स्वास्थ्य एवं आयरन सप्लीमेंट कार्यक्रम
- आंगनवाड़ी सेवाओं का विस्तार

#### 3. सामाजिक जागरूकता

- लैंगिक समानता पर जनजागरूकता अभियान
- अभिभावकों को बालिका शिक्षा के महत्व से अवगत कराना

#### 4. आर्थिक सशक्तिकरण

- गरीब परिवारों को प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण
- बालिका शिक्षा से जुड़े प्रोत्साहन कार्यक्रम

#### 5. स्वास्थ्य एवं डिजिटल सशक्तिकरण

- नियमित स्वास्थ्य जांच
- डिजिटल शिक्षा संसाधनों तक समान पहुँच

**निष्कर्ष-** बालिका शिक्षा एवं पोषण में असमानता केवल सामाजिक समस्या नहीं बल्कि राष्ट्रीय विकास की चुनौती है। जब तक बालिकाएँ शिक्षित, स्वस्थ और आत्मनिर्भर नहीं होंगी, तब तक समावेशी और सतत विकास संभव नहीं है। आवश्यक है कि सरकार, समाज, परिवार और शैक्षणिक संस्थान मिलकर बालिकाओं के अधिकारों की रक्षा करें और उन्हें समान अवसर प्रदान करें।

**बालिका शिक्षा एवं पोषण पर नीति आयोग की रिपोर्ट** - भारत के समग्र विकास में बालिकाओं की शिक्षा और पोषण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। नीति आयोग की विभिन्न रिपोर्टों ने यह स्पष्ट किया है कि शिक्षा और पोषण एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि बालिकाएँ शिक्षित और स्वस्थ होंगी, तभी वे समाज और राष्ट्र के विकास में प्रभावी योगदान दे सकेंगी। नीति आयोग ने

बालिका शिक्षा और पोषण को एकीकृत दृष्टिकोण से देखने पर बल दिया है। शिक्षा और पोषण एक-दूसरे से जुड़े हैं—स्वस्थ बालिका ही बेहतर शिक्षा प्राप्त कर सकती है और शिक्षित बालिका ही स्वस्थ समाज का निर्माण करती है।

बालिका शिक्षा और पोषण का अंतर्संबंध

नीति आयोग के अनुसार, शिक्षा और पोषण के बीच गहरा संबंध है। कुपोषित बालिका न तो सही ढंग से सीख सकती है और न ही अपने शारीरिक एवं मानसिक विकास को पूर्ण कर पाती है। दूसरी ओर, शिक्षित बालिका अपने स्वास्थ्य, स्वच्छता और पोषण के प्रति अधिक जागरूक होती है।

इस प्रकार,

- पोषण शिक्षा को प्रभावित करता है (स्वास्थ्य → अधिगम क्षमता)
- शिक्षा पोषण को प्रभावित करती है (जागरूकता → बेहतर स्वास्थ्य व्यवहार)

नीति आयोग की रिपोर्टों के अनुसार, बालिका शिक्षा और पोषण एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हैं।

- शिक्षित बालिका → स्वस्थ समाज
- कुपोषण मुक्त बालिका → बेहतर अधिगम क्षमता

इसलिए नीति आयोग “**Education + Nutrition + Health**” के संयुक्त मॉडल को सबसे प्रभावी मानता है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. यूनिसेफ (UNICEF) (2022). *बालिका शिक्षा एवं पोषण रिपोर्ट*, नई दिल्ली।
3. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) (2019-21). स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार।
4. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) (2021). *पोषण एवं स्वास्थ्य असमानता रिपोर्ट*।
5. यूनेस्को (UNESCO) (2020). *वैश्विक शिक्षा निगरानी रिपोर्ट*।
6. अग्रवाल, एस. (2019). *भारतीय शिक्षा प्रणाली एवं लैंगिक असमानता*, नई दिल्ली: रावत पब्लिकेशन।
7. शर्मा, आर. (2021). *बालिका शिक्षा: समस्याएं और समाधान*, जयपुर: प्वाइंटर पब्लिशर्स।
8. सिंह, एम. (2018). *पोषण और स्वास्थ्य शिक्षा*, लखनऊ: विश्वविद्यालय प्रकाशन।
9. नीति आयोग (2021). *पोषण अभियान (POSHAN Abhiyaan) रिपोर्ट*।
10. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय (2022). *बालिका पोषण एवं विकास योजनाएं*, नई दिल्ली।



## बालिका शिक्षा में असमानता, वर्तमान स्थिति, सुधारात्मक प्रयास एवं सशक्तिकरण के सुझाव

रूबी जायसवाल, शोधार्थी (शिक्षा संकाय)

डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या

### सारांश

बालिका शिक्षा का अभिप्राय समस्त नारी जाति की शिक्षा से है। इसमें हर उम्र एवं हर वर्ग की स्त्रियाँ आती हैं आज हमारी लाख कोशिशों के बावजूद भी बालिकाओं को वह स्थान प्राप्त नहीं हो पाया है जो वास्तविक रूप में होना चाहिए जिसके दुष्परिणाम स्वरूप हमारे देश की कर्णधारी की भी शिक्षा प्रभावित हो रही है। शिक्षित माँ एक अनपढ़ माँ की तुलना में अपने बच्चों को अधिक अच्छी तरह सुशिक्षित कर सकती है। कहा भी गया है कि आप एक बालिका को शिक्षित करते हैं तो पूरे परिवार के साथ-साथ पूरे समाज को शिक्षित करते हैं। इससे बालिका शिक्षा का महत्व स्पष्ट हो जाता है। बालिका शिक्षा से तात्पर्य सम्पूर्ण नारी वर्ग के समुचित उत्थान से है। इस प्रकार बालिका शिक्षा को बढ़ावा देकर ही राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया सम्भव हो सकती है।

**की वर्ड** - बालिका शिक्षा, महिला शिक्षा, नारी शिक्षा, बेटा पढ़ाओ, महिला सशक्तिकरण, नारी समृद्धि, ।

शिक्षा मानव के सम्पूर्ण विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसमें स्त्री शिक्षा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय मनीषियों के चिंतन में समाज के सर्वांगीण विकास की भावना थी। इसलिये उन्होंने “यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता” तथा अर्द्धांगिनी जैसे वांगमय शब्दों का प्रयोग स्त्रियों के लिए किया गया है। पुरुष व स्त्री समाज के दो पहियों के समान है। जब तक दोनों को समान शिक्षा नहीं दी जायेगी, तब तक समाज अच्छी तरह से उन्नति नहीं कर सकता।

भारत में बालिका शिक्षा एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, लेकिन इसके बावजूद आज भी इस क्षेत्र में कई असमानताएँ देखने को मिलती हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टिकोण से बालिका शिक्षा में असमानता का सामना करना पड़ता है, जिसके कारण लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने में कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

### 1. सामाजिक असमानता -

भारत में कई स्थानों पर लड़कियों को कम महत्व दिया जाता है और उनका शिक्षा के प्रति समाज का दृष्टिकोण नकारात्मक होता है। ग्रामीण इलाकों में लड़कियों के लिए शिक्षा को केवल एक प्राथमिकता के रूप में नहीं देखा जाता है। कई बार तो उन्हें घर के कामकाज या खेतों में काम करने के लिए प्राथमिकता दी जाती है। यह मानसिकता बालिका शिक्षा के विकास में एक बड़ी बाधा है।

### 2. आर्थिक असमानता -

भारत के कई हिस्सों में बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करने के लिए आर्थिक संसाधनों की कमी भी एक बड़ा कारण है। गरीब परिवारों में यह माना जाता है कि लड़कों को पढ़ाना ज्यादा जरूरी है क्योंकि वे परिवार का पेट पालने में सक्षम होंगे, जबकि लड़कियों को घरेलू कामकाज में लगाया जाता है। इसके अलावा, शिक्षण सामग्री, स्कूल की फीस और परिवहन जैसी मूलभूत सुविधाओं की कमी भी बालिका शिक्षा में असमानता को बढ़ाती है।

**3. सांस्कृतिक असमानता -** भारत में कई स्थानों पर लड़कियों के लिए शिक्षा का विरोध एक सांस्कृतिक धारणा बन चुकी है। बहुत से समुदायों में यह मान्यता है कि लड़कियों का स्थान घर में है और उन्हें बाहर की दुनिया से नहीं जोड़ा जाना चाहिए। यह सोच बालिका शिक्षा के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। खासकर परंपरागत परिवारों में लड़कियों को बाहर निकलने और शिक्षा प्राप्त करने से रोकने वाली बाधाएं स्पष्ट रूप से नजर आती हैं।

#### **4. सुरक्षा सम्बन्धी असमानता -**

बालिका शिक्षा में एक और बड़ी समस्या सुरक्षा से जुड़ी है। खासकर गांवों और छोटे शहरों में, लड़कियों को स्कूल जाने के दौरान कई बार सुरक्षा की चिंता होती है। रास्ते में उत्पन्न होने वाली असुरक्षा की घटनाएं, जैसे कि छेड़खानी और अन्य अपराध, उन्हें शिक्षा प्राप्त करने से हतोत्साहित कर सकती हैं। लड़कियों के लिए सुरक्षित वातावरण उपलब्ध कराना शिक्षा की असमानता को दूर करने के लिए आवश्यक कदम है।

#### **5. शिक्षा की गुणवत्ता और सुविधाएँ में असमानता -**

भारत में लड़कियों को मिलने वाली शिक्षा की गुणवत्ता भी एक प्रमुख कारण है जो असमानता को बढ़ाता है। सरकारी स्कूलों में लड़कियों के लिए उचित सुविधाओं की कमी, जैसे कि महिला शिक्षिकाओं की अनुपस्थिति, शौचालय की कमी, और अन्य बुनियादी सुविधाओं का अभाव, उन्हें स्कूल छोड़ने के लिए मजबूर कर देता है। कई बार यह देखा गया है कि लड़कियों के लिए अलग स्कूलों की कमी भी एक बड़ी चुनौती है।

#### **6. सरकारी योजनाओं और नीतियाँ -**

हालाँकि भारत सरकार ने बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किए हैं, जैसे कि “बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ” और “प्रधानमंत्री शिक्षा योजना”, फिर भी इन योजनाओं का प्रभाव समाज के सभी वर्गों तक नहीं पहुंच पाया है। कई बार इन योजनाओं का सही तरीके से कार्यान्वयन नहीं हो पाता, जिसके कारण असमानता बनी रहती है।

इस प्रकार बालिका शिक्षा में असमानता को दूर करने के लिए हमें समाज में बदलाव लाने की जरूरत है। यह जरूरी है कि हम समाज के विभिन्न वर्गों में बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ाएं, साथ ही साथ सरकार को भी अपने प्रयासों को और अधिक सशक्त और प्रभावी बनाना होगा। अगर हम बालिकाओं को शिक्षा के समान अवसर देंगे, तो वे समाज की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

#### **बालिका शिक्षा की वर्तमान स्थिति -**

भारत में शिक्षा का स्तर तेजी से बदल रहा है, और इसमें खासतौर पर बालिका शिक्षा की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। हालांकि, बहुत से क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा में अब भी कई चुनौतियाँ हैं। बालिका शिक्षा का उद्देश्य न केवल महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में कदम बढ़ाना है, बल्कि समाज में समानता, विकास और समृद्धि के लिए भी यह महत्वपूर्ण है।

बालिका शिक्षा का समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ता है। यह न केवल एक लड़की के जीवन को बेहतर बनाता है, बल्कि परिवार, समुदाय और राष्ट्र को भी लाभ पहुंचाता है। जब एक लड़की शिक्षित होती है, तो वह समाज के विकास में सक्रिय भागीदार बन सकती है। इसके अलावा, शिक्षित महिलाओं के परिवारों में बेहतर स्वास्थ्य, पोषण और बच्चों की शिक्षा की दर अधिक होती

है। यह बालिका शिक्षा के व्यापक प्रभाव को दर्शाता है कि यह न केवल व्यक्तिगत बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर भी विकास के लिए जरूरी है।

भारत में बालिका शिक्षा का इतिहास उतना सकारात्मक नहीं रहा। भारतीय समाज में लंबे समय तक महिलाओं को शिक्षा से वंचित रखा गया। पारंपरिक समाज में यह मान्यता थी कि लड़कियों का मुख्य उद्देश्य घर की देखभाल और परिवार का पालन-पोषण करना है। परिणामस्वरूप, लड़कियों को प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने का अवसर बहुत कम था। हालांकि, 19वीं शताब्दी के अंत में और 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में सामाजिक सुधारकों ने बालिका शिक्षा के महत्व पर जोर दिया। राजा राममोहन रॉय, विद्यासागर, महात्मा गांधी जैसे महान व्यक्तियों ने इस दिशा में अहम भूमिका निभाई।

स्वतंत्रता के बाद सरकार ने कई योजनाओं और नीतियों को अपनाया ताकि बालिका शिक्षा को बढ़ावा दिया जा सके। संविधान में भी शिक्षा का अधिकार हर नागरिक का मूल अधिकार माना गया है, जिसमें विशेष रूप से लड़कियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं।

आज के समय में भारत में बालिका शिक्षा का स्तर पहले से कहीं बेहतर हुआ है, लेकिन चुनौतियाँ अभी भी कम नहीं हैं। सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएं और परियोजनाएं लागू की गई हैं। भारत सरकार ने बालिका शिक्षा के क्षेत्र में कई योजनाओं की शुरुआत की है। इनमें से कुछ प्रमुख योजनाएं निम्नलिखित हैं:

1. सर्व शिक्षा अभियान - इस योजना का उद्देश्य सभी बच्चों को, विशेषकर लड़कियों को, प्राथमिक शिक्षा देना है। इसके तहत ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में स्कूलों का निर्माण और शिक्षा की सुविधाओं का विस्तार किया गया है।
  2. बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ अभियान - इस योजना का मुख्य उद्देश्य बालिकाओं के प्रति समाज में जागरूकता फैलाना और बालिका शिक्षा को बढ़ावा देना है। इसमें बालिकाओं के जन्म से लेकर उनकी शिक्षा तक की सुरक्षा और समर्थन पर जोर दिया जाता है।
  3. कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना - यह योजना विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों की लड़कियों के लिए है। इस योजना के तहत लड़कियों के लिए आवासीय विद्यालयों की स्थापना की गई है ताकि वे अपनी शिक्षा प्राप्त कर सकें।
- बालिका शिक्षा में सुधार -

आधुनिक भारत में बालिका शिक्षा की दर में वृद्धि हुई है। वर्ष 2001 और 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, बालिका शिक्षा का स्तर लगातार सुधार हो रहा है। उदाहरण स्वरूप, महिला साक्षरता दर 1991 में 39% थी, जो 2011 में बढ़कर 65% हो गई। 2021 तक यह दर और बढ़ने की उम्मीद है।

प्रमुख समस्याएं - आज भी कई ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में परिवार आर्थिक संकट का सामना कर रहे हैं। इस स्थिति में लड़कियों को शिक्षा देने के बजाय उन्हें घर के कामकाजी कार्यों में लगा दिया जाता है। परिवारों की आर्थिक स्थिति के कारण, लड़कियों को स्कूल भेजने में कई बार कठिनाइयाँ होती हैं।

भारत के कई हिस्सों में लड़कियों की शिक्षा को लेकर समाज में कई तरह की सामाजिक और सांस्कृतिक धारणाएँ हैं। कई बार परंपराओं और धार्मिक मान्यताओं के कारण लड़कियों को शिक्षा के अधिकार से वंचित किया जाता है। विशेष रूप से, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों में यह समस्या अधिक देखने को मिलती है, जहाँ पर लड़कियों की शिक्षा को कमतर समझा जाता है।

सुरक्षा भी एक बड़ी समस्या है, विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में। लड़कियों को स्कूल जाने के दौरान कई बार शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। यही कारण है कि बहुत सी लड़कियाँ स्कूल छोड़ देती हैं या फिर समय से पहले अपनी शिक्षा को समाप्त कर देती हैं।

देश के दूर-दराज क्षेत्रों में शिक्षा के आधारभूत ढाँचे में कई कमी हैं। विद्यालयों में शौचालय, पानी, बिजली और आवास जैसी बुनियादी सुविधाओं की कमी के कारण लड़कियाँ स्कूल जाने में हिचकिचाती हैं।

बालिका शिक्षा सशक्तिकरण में चुनौतियां -

भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा देश है, जहाँ कुछ क्षेत्रों में हम अन्य देशों के बराबर हैं, लेकिन जब बात लड़कियों की शिक्षा की आती है तो हम बहुत पीछे हैं, इसीलिए बालिका शिक्षा की दर बेहद कम है। भारत को शिक्षा की देवी के रूप में जाना जाता है, लेकिन वास्तविकता इससे अलग है। गरीब लोग अपनी बेटियों को उचित शिक्षा देने में असमर्थ हैं। पिछले कुछ दशकों में लड़कियों की शिक्षा में कुछ सुधार हुआ है, लेकिन अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है, और इसके लिए सरकार को कदम उठाने चाहिए। पहले, लोग अपनी बेटियों को शिक्षित करने में ज्यादा रुचि नहीं रखते थे, वे सोचते थे कि उन्हें घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए। लेकिन धीरे-धीरे समय बदल रहा है, लोग भी अपनी बेटियों को शिक्षा देने के बारे में अपनी सोच बदल रहे हैं क्योंकि वे भी उन्हें जीवन में सफल होते देखना चाहते हैं, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए यह अभी भी संभव नहीं है।

बालिका शिक्षा एक ऐसा शब्द है जिसका प्रयोग महिलाओं के शैक्षिक उत्थान से संबंधित मुद्दों का वर्णन और समाधान करने के लिए किया जाता है। ऐतिहासिक रूप से लगभग सभी प्रमुख समाजों और संस्कृतियों में, महिलाओं से घरेलू कामकाज करने की अपेक्षा की जाती थी और सभी प्रमुख सामाजिक कार्य पुरुषों द्वारा किए जाते थे। समाज में पदों और संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करने वाले पुरुष ही हुआ करते थे। जब शिक्षा का प्रचलन बढ़ा, तब पुरुषों ने नई चीजें सीखना शुरू किया और शिक्षा प्राप्त करने के लिए एक औपचारिक प्रक्रिया अपनाई।

औद्योगिक क्रांति के आगमन के साथ ही पुरुषों की वह क्षमता, जिसने उन्हें महिलाओं पर श्रेष्ठता प्रदान की थी, अप्रासंगिक हो गई। महिलाएं समाज में योगदान देने के लिए आगे आईं। लेकिन एक समस्या थी, महिलाओं को अभी भी शिक्षा का उचित हिस्सा प्राप्त करना बाकी था और इसलिए वे उपलब्ध पदों के लिए पुरुषों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में असमर्थ थीं।

बालिका शिक्षा में गरीबी एक बड़ी चुनौती है। जब परिवार अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए संघर्ष करते हैं, तो उनके लिए अपने बच्चों को शिक्षा के लिए भेजना मुश्किल हो जाता है। यदि किसी तरह वे कुछ बुनियादी शिक्षा का खर्च उठा भी लेते हैं, तो भी शिक्षा के लिए भेजे जाने वाले परिवारों में हमेशा लड़कियों की तुलना में लड़कों को प्राथमिकता दी जाती है।

कई विकासशील देशों में लड़के जीवन भर अपने माता-पिता के साथ रहते हैं और उनकी देखभाल करते हैं। जबकि लड़कियाँ शादी करके अपने पति और उसके परिवार के साथ रहने लगती हैं। इससे परिवारों में अपनी बेटियों को शिक्षित करने की प्रेरणा हमेशा कम हो जाती है।

कई देशों में लड़कियों की सुरक्षा बेहद जोखिम भरी है और परिवार उनकी सुरक्षा को लेकर उनकी शिक्षा रोक देते हैं। समाज के रूप में यह हमारा दायित्व है कि हम सभी के लिए कम से कम तब तक सुरक्षित वातावरण बनाएं जब तक कि वे शिक्षा प्राप्त करने से न डरें। कुछ धार्मिक ग्रंथों में बालिकाओं की शिक्षा वर्जित है, कम से कम धार्मिक लोगों द्वारा दैनिक

जीवन में उपयोग के लिए अनुवादित ग्रंथों में यही लिखा है। इससे परिवार अपनी बालिकाओं को शिक्षा के लिए भेजने से हिचकते हैं।

बालिका शिक्षा से जुड़े मुद्दे पर दुनिया की मदद के लिए कई संगठन आगे आए हैं। विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों में यह समस्या कहीं अधिक गंभीर है। एक राष्ट्र के रूप में हमें इस पर अवश्य काम करना चाहिए क्योंकि भारत इस समस्या से सबसे अधिक प्रभावित है। हमारी जनसंख्या दुनिया में दूसरे स्थान पर है और इसलिए महिलाओं की जनसंख्या भी दूसरे स्थान पर है। यदि हम उन्हें बेहतर शिक्षा के माध्यम से शिक्षा के क्षेत्र में आगे नहीं ला पाए तो हमारे लिए दुनिया से प्रतिस्पर्धा करना बहुत मुश्किल हो जाएगा।

समाज में बालिका शिक्षा के महत्व को लेकर जागरूकता फैलाना जरूरी है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में इस दिशा में कदम उठाने की आवश्यकता है। सरकार की योजनाओं का सही तरीके से कार्यान्वयन करना और स्थानीय स्तर पर उनका प्रभावी रूप से लागू होना आवश्यक है। लड़कियों के लिए सुरक्षित और सहायक वातावरण बनाने के लिए स्कूलों में मूलभूत सुविधाएं जैसे शौचालय, पानी की व्यवस्था, सुरक्षित परिवहन और आवास जैसी चीजें सुनिश्चित की जानी चाहिए।

**सरकारी योजनाएं** - भारत सरकार ने बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाओं का कार्यान्वयन किया है। इन योजनाओं का उद्देश्य न केवल बालिकाओं को शिक्षा के अवसर प्रदान करना है, बल्कि उन्हें समाज में समान अधिकार और अवसर प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाना भी है। इनमें से कुछ प्रमुख योजनाएं और प्रयास निम्नलिखित हैं।

सर्व शिक्षा अभियान ने ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन दिया और स्कूलों में सुविधाओं का विस्तार किया। इसके तहत, लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए विशेष योजनाएं जैसे स्कॉलरशिप, मिड-डे मील, और निःशुल्क किताबों की व्यवस्था भी की गई।

भारत सरकार ने 2015 में “बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ” अभियान द्वारा समाज में लिंग आधारित भेदभाव को समाप्त करने के लिए कई पहल करता है, जैसे लड़कियों की शिक्षा में निवेश, बाल विवाह पर रोक, और महिलाओं के लिए समान अवसर सुनिश्चित करना।

कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना के तहत आवासीय विद्यालयों की स्थापना की गई है, जहां लड़कियों को शिक्षा के साथ-साथ होस्टल सुविधाएं भी दी जाती हैं। यह योजना मुख्य रूप से पिछड़े, आदिवासी, और शहरी स्लम क्षेत्रों में रहने वाली लड़कियों के लिए है, ताकि वे बिना किसी भय और सुरक्षा के अपनी शिक्षा प्राप्त कर सकें।

प्रधानमंत्री शहरी आवास योजना और शहरी विकास योजनाएं -

सरकार ने शहरी क्षेत्रों में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए आवासीय सुविधाएं और विद्यालयों की व्यवस्था को भी प्राथमिकता दी है। इन योजनाओं में लड़कियों के लिए शहरी क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य, और सुरक्षा की बेहतर स्थिति सुनिश्चित की जाती है।

**सामाजिक जागरूकता और सांस्कृतिक परिवर्तन** - बालिका शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए सरकारी प्रयासों के अलावा सामाजिक जागरूकता और सांस्कृतिक परिवर्तन की भी बड़ी भूमिका है। भारत में बालिका शिक्षा को लेकर समाज में कई तरह की भ्रान्तियां और स्टीरियोटाइप्स मौजूद हैं। इनका समाधान करने के लिए विभिन्न संगठनों और सामाजिक कार्यकर्ताओं ने अहम कार्य किए हैं।

समाज में जागरूकता फैलाना - समाज में लड़कियों की शिक्षा के महत्व को लेकर जागरूकता फैलाने के लिए कई गैर सरकारी संगठन और सामाजिक कार्यकर्ता लगातार काम कर रहे हैं। इन कार्यकर्ताओं ने स्कूलों में जाकर अभिभावकों को समझाया है कि लड़कियों को शिक्षा देना किसी भी परिवार और समाज के लिए फायदेमंद है।

**मीडिया और फिल्म उद्योग का योगदान** - मीडिया और फिल्म उद्योग ने भी बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। फिल्मों, टीवी शोज और विज्ञापनों के माध्यम से लड़कियों की शिक्षा के महत्व को समाज तक पहुँचाया गया है। उदाहरण के लिए, फिल्मों जैसे “तारे जमीन पर”, “चक दे इंडिया”, और “हिचकी” ने न केवल शिक्षा के महत्व को उजागर किया बल्कि समाज में शिक्षा को लेकर सकारात्मक बदलाव भी लाए हैं।

पारंपरिक दृष्टिकोण में बदलाव - भारत में परंपरागत दृष्टिकोण और पितृसत्तात्मक समाज ने लंबे समय तक लड़कियों को शिक्षा से वंचित रखा। अब धीरे-धीरे यह सोच बदल रही है, और बहुत से गांवों और कस्बों में लड़कियों को समान रूप से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिल रहा है। लड़कियों की शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए यह जरूरी है कि माता-पिता और परिवार भी इसे महत्व दें।

विद्यालयों और संस्थागत सुधार - बालिका शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए विद्यालयों में सुधारात्मक प्रयास भी किए गए हैं। इन सुधारों में स्कूलों की इन्फ्रास्ट्रक्चर और सुविधाओं में सुधार, सुरक्षित परिवहन, और शौचालय जैसी सुविधाओं का सुनिश्चित करना शामिल है।

लड़कियों के लिए विद्यालयों को सुरक्षित और समावेशी बनाने के लिए विभिन्न पहल की जा रही हैं। विद्यालयों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय, सुरक्षित परिवहन, और काउंसलिंग की सुविधाएं प्रदान की जा रही हैं। साथ ही, विद्यालयों में बच्चों के लिए मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य सेवाएं भी उपलब्ध कराई जा रही हैं।

कुछ विद्यालयों और विश्वविद्यालयों ने लड़कियों के लिए विशेष पाठ्यक्रमों की शुरुआत की है, जैसे कि करियर काउंसलिंग, विज्ञान, गणित और तकनीकी क्षेत्रों में उन्हें मार्गदर्शन देना, ताकि लड़कियां किसी भी क्षेत्र में पुरुषों के बराबरी पर आ सकें।

आर्थिक सहायता और प्रोत्साहन - बालिका शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए आर्थिक सहायता और विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहन कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है। इन कार्यक्रमों के माध्यम से लड़कियों के लिए स्कॉलरशिप, ट्यूशन फीस में छूट, और स्कूल सामग्री प्रदान की जा रही है। लड़कियों के लिए कई सरकारी और निजी संस्थाओं द्वारा स्कॉलरशिप प्रदान की जाती हैं। इस प्रकार की योजनाओं का उद्देश्य लड़कियों को शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए वित्तीय रूप से सक्षम बनाना है। लड़कियों को स्कूल में लाने के लिए सरकार द्वारा मिड-डे मील और निःशुल्क किताबों का प्रावधान किया गया है। इस योजना से आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों की लड़कियां स्कूल में नियमित रूप से पढ़ाई कर पा रही हैं।

### नई शिक्षा नीति 2020 -

भारत में नई शिक्षा नीति, 2020 लागू हो गई है, 21वीं शताब्दी की यह पहली शिक्षा नीति है, आने वाले समय में शिक्षा में मूलभूत परिवर्तन देखने को मिलेगा, स्कूली शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक कई बड़े बदलाव किए गए हैं। इस बदलाव का सीधा असर भारत के विकास में भी परिलक्षित होगा। भारत की सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखा गया है। इस नीति में इस बात पर भी बल दिया गया है कि विद्यार्थियों सिर्फ साक्षर ही नहीं बल्कि तार्किक एवं समस्या समाधान जैसी क्षमताएं विकसित हो, साथ ही उनके व्यक्तित्व विकास के लिए सामाजिक, नैतिक एवं भावनात्मक रूप से सबल हो। इस दिशा में शिक्षा एवं व्यक्तित्व विकास की नींव प्रारंभिक बाल्यावस्था से ही किया जाएगा। माना जाता है कि

बच्चों का मस्तिष्क का महत्तम विकास 6 वर्ष से पूर्व हो जाता है। ऐसे में 6 वर्ष की अवस्था तक शारीरिक एवं मानसिक विकास महत्वपूर्ण हो जाता है। नई शैक्षणिक एवं पाठ्यक्रम का ढांचा 5३३४ का होगा, जिसमें प्रारंभिक 3 वर्षों की आयु से ही बच्चों के शारीरिक एवं मानसिक विकास पर गंभीरता से कार्य किए जाएंगे, इन आरंभिक वर्षों में आंगनबाड़ी के सहयोग से भी स्कूल शिक्षा का प्रावधान रखा गया है।

इस प्रकार बालिका शिक्षा के प्रोत्साहन के लिए किए गए सुधारात्मक प्रयास समाज के समग्र विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। हालांकि, अभी भी कई चुनौतियां मौजूद हैं, जैसे कि ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं का शिक्षा से वंचित रहना, सुरक्षा की कमी, और समाजिक रुढ़िवादी सोच। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए सरकार, समाज और परिवार को मिलकर काम करना होगा। बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए निरंतर प्रयासों की आवश्यकता है ताकि हर लड़की को समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अवसर मिल सके।

### निष्कर्ष -

बालिका शिक्षा के क्षेत्र में हुए सुधारों के बावजूद कई चुनौतियां अभी भी मौजूद हैं। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि प्रत्येक लड़की को शिक्षा प्राप्त हो और समाज में लिंग आधारित भेदभाव समाप्त हो। यह समाज के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि भारत में हर लड़की को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त होती है, तो यह न केवल उनके जीवन को बदलने का काम करेगा, बल्कि समग्र राष्ट्र के विकास में भी योगदान देगा।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, जे.सी. (2018). *शिक्षा का समाजशास्त्र*. आगरा: विनोद पुस्तक मंदिर।
2. शर्मा, आर.ए. (2017). *भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ*. मेरठ: लोयल बुक डिपो।
3. सिंह, वी.के. (2019). *शिक्षा और समाज*. नई दिल्ली: रावत पब्लिकेशन।
4. तिवारी, एस.एन. (2016). *भारतीय शिक्षा का इतिहास और समस्याएँ*. इलाहाबाद: शारदा पुस्तक भवन।
5. चतुर्वेदी, ए.के. (2020). *महिला शिक्षा और सशक्तिकरण*. जयपुर: आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स।
6. गुप्ता, एस.पी. (2015). *शिक्षा मनोविज्ञान*. आगरा: शारदा पुस्तक भवन।
7. पांडेय, रामशकल (2018). *शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार*. वाराणसी: विनोद पुस्तक मंदिर।
8. मिश्रा, बी.एन. (2019). *भारतीय शिक्षा की समस्याएँ*. नई दिल्ली: अटलांटिक पब्लिशर्स।



भारतीय संदर्भ मे उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे स्त्रियों की शिक्षा से वंचन के  
आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं मनोवैज्ञानिक कारकों का विश्लेषण

हीरालाल , शोध छात्र (शिक्षाशास्त्र)

एवं

प्रो० शिव शरण शुक्ल , विभागाध्यक्ष , शिक्षाशास्त्र विभाग

श्री लाल बहादुर शास्त्री महाविद्यालय गोंडा (उ०प्र०)

**प्रस्तावना**

किसी भी राष्ट्र के समग्र विकास में स्त्रियों की शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। विशेष रूप से उच्च शिक्षा, जो ज्ञान, कौशल और नेतृत्व क्षमता का विकास करती है, उसमें स्त्रियों की भागीदारी समाज के सशक्तिकरण का संकेत है। भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के माध्यम से लैंगिक समानता पर विशेष बल दिया गया है, फिर भी अनेक कारक ऐसे हैं जो स्त्रियों को उच्च शिक्षा से वंचित कर देते हैं। शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास का आधार है। उच्च शिक्षा विशेष रूप से व्यक्तित्व विकास, रोजगार के अवसर और नेतृत्व क्षमता को बढ़ाती है। भारतीय संदर्भ में स्त्रियों की उच्च शिक्षा न केवल उनके व्यक्तिगत सशक्तिकरण का माध्यम है, बल्कि समाज के समग्र विकास के लिए भी अनिवार्य है। हाल के वर्षों में इस क्षेत्र में प्रगति हुई है, फिर भी कई चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

**मुख्य शब्द** - समग्र विकास, शिक्षा, सांस्कृतिक विकास, व्यक्तित्व विकास, सामाजिक संरचना, उच्च शिक्षा।

**ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य**

प्राचीन भारत में महिलाओं को शिक्षा का अधिकार प्राप्त था। वे वेदों और शास्त्रों का अध्ययन करती थीं। लेकिन मध्यकाल में सामाजिक कुरीतियों और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण महिलाओं की शिक्षा पर प्रतिबंध लग गया। आधुनिक काल में समाज सुधारकों जैसे राजा राममोहन राय और ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने नारी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए। भारत में नारी शिक्षा ने लंबा सफर तय किया है, परंतु अभी भी कई चुनौतियाँ शेष हैं। इन चुनौतियों को दूर करने के लिए सरकार, समाज और परिवार को मिलकर कार्य करना होगा। जब प्रत्येक महिला शिक्षित होगी, तभी सशक्त और विकसित भारत का निर्माण संभव होगा। प्राचीन भारत में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। वे वेदों, उपनिषदों तथा दर्शन का अध्ययन करती थीं। गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियों ने उच्च स्तर की बौद्धिक चर्चाओं में भाग लिया। उस समय शिक्षा में लैंगिक भेदभाव अपेक्षाकृत कम था और महिलाओं को ज्ञान अर्जन के अवसर प्राप्त थे। यह काल स्त्री शिक्षा के लिए स्वर्णिम युग माना जाता है।

मध्यकाल में स्त्रियों की शिक्षा में गिरावट आई।

- पितृसत्तात्मक व्यवस्था का सुदृढ़ होना
- पर्दा प्रथा और बाल विवाह का प्रचलन
- सामाजिक असुरक्षा और रूढ़िवादी विचारधारा

इन कारणों से महिलाओं की शिक्षा लगभग सीमित हो गई। उच्च शिक्षा तो दूर, सामान्य शिक्षा भी दुर्लभ हो गई थी।

औपनिवेशिक काल (ब्रिटिश शासन)

औपनिवेशिक काल में स्त्रियों की शिक्षा के पुनर्जागरण की शुरुआत हुई। इस समय कई समाज सुधारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई—

- राजा राममोहन राय — सती प्रथा के उन्मूलन और महिला अधिकारों के समर्थन के लिए प्रयास।
- ईश्वरचंद्र विद्यासागर — विधवा पुनर्विवाह और महिला शिक्षा के प्रबल समर्थक।
- ज्योतिबा फुले और सावित्रीबाई फुले — भारत में पहली बालिका विद्यालय की स्थापना और स्त्री शिक्षा के अग्रदूत।

इस काल में मिशनरियों और सुधार आंदोलनों के कारण बालिकाओं के लिए विद्यालय और कॉलेज स्थापित होने लगे। धीरे-धीरे उच्च शिक्षा के द्वार भी महिलाओं के लिए खुलने लगे।

स्वतंत्रता के बाद का काल

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय संविधान ने महिलाओं को शिक्षा का समान अधिकार प्रदान किया। इसके परिणामस्वरूप—

- विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में महिलाओं का प्रवेश बढ़ा।
- सरकार ने विभिन्न योजनाओं और नीतियों के माध्यम से स्त्री शिक्षा को बढ़ावा दिया।
- शिक्षा का प्रसार ग्रामीण क्षेत्रों तक हुआ।

समकालीन परिप्रेक्ष्य )21वीं सदी(

21वीं सदी में स्त्रियों की उच्च शिक्षा में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षा में समानता और समावेशिता को प्राथमिकता दी है।

- महिलाओं की भागीदारी उच्च शिक्षा में निरंतर बढ़ रही है।
- तकनीकी और व्यावसायिक क्षेत्रों में भी महिलाओं की उपस्थिति बढ़ी है।
- डिजिटल शिक्षा और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने नए अवसर प्रदान किए हैं।

फिर भी, सामाजिक, आर्थिक और संरचनात्मक बाधाएँ अभी भी पूरी तरह समाप्त नहीं हुई हैं।

भारतीय संदर्भ में स्त्रियों की उच्च शिक्षा का ऐतिहासिक विकास एक लंबी यात्रा का परिणाम है, जिसमें प्राचीन काल की उन्नति, मध्यकाल का पतन, औपनिवेशिक काल का पुनर्जागरण और आधुनिक काल की प्रगति शामिल है। आज आवश्यकता है कि इस ऐतिहासिक विरासत को आगे बढ़ाते हुए स्त्रियों को उच्च शिक्षा में पूर्ण समान अवसर प्रदान किए जाएँ, ताकि वे राष्ट्र निर्माण में सक्रिय भूमिका निभा सकें।

### 1. आर्थिक कारक

आर्थिक स्थिति स्त्रियों की उच्च शिक्षा में सबसे बड़ी बाधाओं में से एक है—

- **गरीबी और सीमित संसाधन:** निम्न आय वाले परिवारों में संसाधनों की कमी के कारण लड़कों की शिक्षा को प्राथमिकता दी जाती है।
- **शिक्षा की बढ़ती लागत:** उच्च शिक्षा में फीस, आवास, पुस्तकें आदि का खर्च अधिक होता है, जो कई परिवारों के लिए वहन करना कठिन होता है।
- **अवसर लागत (Opportunity Cost):** परिवारों को लगता है कि लड़कियों की शिक्षा में निवेश का प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ कम है, क्योंकि विवाह के बाद वे दूसरे घर चली जाती हैं।

### 2. सामाजिक कारक

सामाजिक संरचना और परंपराएँ भी स्त्रियों की शिक्षा को प्रभावित करती हैं—

- **पितृसत्तात्मक व्यवस्था:** भारतीय समाज में आज भी पुरुष प्रधान सोच विद्यमान है, जो स्त्रियों को सीमित भूमिकाओं तक बाँध देती है।
- **बाल विवाह और जल्दी जिम्मेदारियाँ:** कम उम्र में विवाह होने से उच्च शिक्षा के अवसर समाप्त हो जाते हैं।

- **लैंगिक भेदभाव:** परिवार और समाज में लड़कियों को कम महत्व दिया जाना उनकी शिक्षा में बाधा बनता है।
- **सुरक्षा की चिंता:** दूरस्थ शिक्षण संस्थानों में भेजने को लेकर अभिभावकों की चिंता भी एक बड़ा कारण है।

### 3. राजनीतिक एवं नीतिगत कारक

हालाँकि सरकार ने कई प्रयास किए हैं, फिर भी कुछ कमियाँ बनी हुई हैं—

- **नीतियों का सीमित क्रियान्वयन:** योजनाएँ तो बनती हैं, पर उनका प्रभावी कार्यान्वयन हर क्षेत्र में नहीं हो पाता।
- **ग्रामीण-शहरी असमानता:** ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षण संस्थानों की कमी है, जिससे बालिकाएँ आगे नहीं बढ़ पातीं।
- **सुरक्षा एवं परिवहन नीतियों की कमी:** सुरक्षित परिवहन और छात्रावास सुविधाओं का अभाव भी बाधा उत्पन्न करता है।
- **जागरूकता की कमी:** कई सरकारी योजनाओं की जानकारी लक्षित वर्ग तक नहीं पहुँचती।

### 4. मनोवैज्ञानिक कारक

मनोवैज्ञानिक पहलू भी स्त्रियों की शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं—

- **आत्मविश्वास की कमी:** सामाजिक दबाव के कारण कई लड़कियाँ अपनी क्षमताओं पर विश्वास नहीं कर पातीं।
- **सीमित आकांक्षाएँ:** पारंपरिक सोच के कारण लड़कियाँ उच्च शिक्षा के प्रति बड़े लक्ष्य निर्धारित नहीं कर पातीं।
- **भय और असुरक्षा की भावना:** असफलता का डर, सामाजिक आलोचना और उत्पीड़न का भय उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।
- **प्रेरणा का अभाव:** परिवार और समाज से पर्याप्त प्रोत्साहन न मिलने के कारण शिक्षा के प्रति रुचि कम हो जाती है।

### स्त्रियों की शिक्षा से वंचन

शिक्षा मानव जीवन के विकास का मूल आधार है, परंतु लंबे समय तक समाज में स्त्रियाँ शिक्षा से वंचित रही हैं। आधुनिक युग में सुधार के बावजूद आज भी अनेक कारण ऐसे हैं जो स्त्रियों को शिक्षा के समान अवसरों से दूर रखते हैं। यह वंचन केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय विकास को भी प्रभावित करता है।

### स्त्रियों की शिक्षा से वंचन का अर्थ

स्त्रियों की शिक्षा से वंचन का आशय है—ऐसी परिस्थितियाँ, जिनके कारण महिलाएँ या बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त नहीं कर पातीं या बीच में ही पढ़ाई छोड़ देती हैं। यह वंचन प्रत्यक्ष (विद्यालय में प्रवेश न मिलना) और अप्रत्यक्ष (सामाजिक दबाव, आर्थिक बाधाएँ) दोनों रूपों में होता है। स्त्रियों की शिक्षा से वंचन एक बहुआयामी समस्या है, जिसका समाधान समग्र दृष्टिकोण से ही संभव है। जब समाज स्त्रियों को शिक्षा का समान अधिकार और अवसर प्रदान करेगा, तभी वास्तविक विकास और सशक्तिकरण संभव हो सकेगा। शिक्षित स्त्री न केवल अपने जीवन को बदलती है, बल्कि पूरे समाज को प्रगति की दिशा में आगे बढ़ाती है।

**भारतीय समाज में नारी का स्थान -** भारतीय समाज में नारी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण और सम्माननीय माना गया है। “यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता” जैसी उक्ति यह दर्शाती है कि जहाँ नारी का सम्मान होता है, वहाँ समृद्धि और सुख का वास होता है। नारी केवल परिवार की धुरी ही नहीं, बल्कि समाज और राष्ट्र के विकास की प्रमुख आधारशिला भी है। प्राचीन भारत में नारी को उच्च स्थान प्राप्त था। वह शिक्षा, धर्म और समाज के विभिन्न कार्यों में सक्रिय भाग लेती थी। **गार्गी** और **मैत्रेयी** जैसी विदुषियाँ इसका उदाहरण हैं।

मध्यकाल में नारी की स्थिति में गिरावट आई—

- पर्दा प्रथा
- बाल विवाह
- शिक्षा से वंचन

आधुनिक काल में समाज सुधारकों जैसे राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर और ज्योतिबा फुले ने नारी उत्थान के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए।

**वर्तमान स्थिति** - 21वीं सदी को ज्ञान, तकनीक और नवाचार की सदी माना जाता है। इस युग में शिक्षा केवल साक्षरता तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह व्यक्तित्व विकास, कौशल निर्माण और वैश्विक प्रतिस्पर्धा का आधार बन गई है। ऐसे में स्त्रियों की शिक्षा का महत्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि किसी भी समाज का वास्तविक विकास तभी संभव है जब उसकी महिलाएँ शिक्षित, जागरूक और सशक्त हों। भारत में स्त्रियों की उच्च शिक्षा में भागीदारी धीरे-धीरे बढ़ रही है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत शिक्षा को अधिक समावेशी और समान बनाने पर जोर दिया गया है।

- विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में छात्राओं की संख्या में वृद्धि हुई है।
- कला, विज्ञान, वाणिज्य के साथ-साथ तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ रही है।
- कई राज्यों में छात्राओं का सकल नामांकन अनुपात (GER) लड़कों के बराबर या उससे अधिक हो रहा है।

सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाएँ जैसे—

- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ
  - समग्र शिक्षा अभियान
  - उच्चतर शिक्षा अभियान (RUSA)
- इनके माध्यम से स्त्रियों को उच्च शिक्षा में प्रवेश और निरंतरता के अवसर मिले हैं।

### निष्कर्ष

निष्कर्षतः, भारत में स्त्रियों की उच्च शिक्षा में वंचन एक बहुआयामी समस्या है, जिसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक सभी कारक परस्पर जुड़े हुए हैं। इन समस्याओं का समाधान समन्वित प्रयासों से ही संभव है। भारतीय संदर्भ में स्त्रियों की उच्च शिक्षा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है, परंतु अभी भी कई चुनौतियाँ शेष हैं। इन चुनौतियों का समाधान सरकार, समाज और परिवार के संयुक्त प्रयासों से ही संभव है। जब महिलाओं को उच्च शिक्षा में समान अवसर प्राप्त होंगे, तभी एक समतामूलक और विकसित समाज का निर्माण हो सकेगा। 21वीं सदी को ज्ञान, विज्ञान और तकनीक का युग कहा जाता है। इस युग में शिक्षा केवल साक्षरता तक सीमित नहीं, बल्कि कौशल, नवाचार और व्यक्तित्व विकास का माध्यम बन चुकी है। ऐसे में स्त्रियों की शिक्षा का महत्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि यह न केवल उनके सशक्तिकरण का साधन है, बल्कि समाज और राष्ट्र के समग्र विकास का आधार भी है।

- आर्थिक सहायता एवं छात्रवृत्तियों का विस्तार
- सामाजिक जागरूकता एवं लैंगिक समानता का प्रचार

- नीतियों का प्रभावी क्रियान्वयन
- सुरक्षित एवं अनुकूल शिक्षण वातावरण का निर्माण
- मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण एवं परामर्श सेवाएँ

जब इन सभी क्षेत्रों में संतुलित सुधार होगा, तभी स्त्रियों को उच्च शिक्षा में समान अवसर प्राप्त होंगे और राष्ट्र का वास्तविक विकास संभव होगा। भारतीय समाज में नारी की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, परंतु अभी भी पूर्ण समानता प्राप्त करना बाकी है। जब नारी को हर क्षेत्र में समान अवसर और सम्मान मिलेगा, तभी एक सशक्त और विकसित समाज का निर्माण संभव होगा। नारी केवल घर की शोभा नहीं, बल्कि राष्ट्र की शक्ति है।

नारी सशक्तिकरण के उपाय

- शिक्षा का प्रसार और जागरूकता
- आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा
- कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन
- समाज में समानता और सम्मान की भावना विकसित करना
- महिलाओं के लिए सुरक्षित वातावरण सुनिश्चित करना

आज भारतीय समाज में नारी की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। महिलाएँ शिक्षा, विज्ञान, राजनीति, खेल और व्यवसाय जैसे विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान बना रही हैं।

- महिलाएँ उच्च शिक्षा प्राप्त कर विभिन्न पेशों में कार्यरत हैं।
- राजनीति में उनकी भागीदारी बढ़ी है।
- सामाजिक जागरूकता और आत्मनिर्भरता में वृद्धि हुई है।

सरकारी पहल जैसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ ने नारी सशक्तिकरण को नई दिशा दी है।

### संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारत उच्च शिक्षा रिपोर्ट 2022: उच्च शिक्षा में महिलाएं : एन.वी. वर्गीस एवं निधि सभरवाल, रूटलेज ।
2. भारत में उच्च शिक्षा में महिलाओं की स्थिति, अनोखा खुलासा का विस्तृत विश्लेषण) : महिला एवं उच्च शिक्षा : एस चावला
3. भारत में महिला शिक्षा के ऐतिहासिक एवं सामाजिक विचारों का अध्ययन) ; भारत में लिंग और शिक्षा : एन.जयराम ।
4. भारत में उच्च शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी , महिला नामांकित, जीपीआई एवं राज्यों के बीच का अध्ययन भारत में महिलाएँ और उच्च शिक्षा : एस० जसवंत ।
5. उच्च शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी और सामाजिक परिवर्तन : के०रवींद्र ।

